कर्मविपाकसंहिता

(नक्षत्रचरणफलदर्शिका)

अनुवादकः

पं० वस्तीरामः

राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्

मानितविश्वविद्यालयः

(भारतशासन-मानवसंसाधनविकास-मन्त्रालयाधीनम्)

नवदेहली

पुरोवाक्

विदन्त्येव विपश्चितो यत्संस्कृतभाषा भारतीयां साहित्यपरम्परां तत्संवलितां प्रज्ञाञ्च सहस्रशो वर्षेभ्यः प्रकाशयन्ती संवर्धयन्ती च राजते। इयं हि भाषा परम्परा प्रज्ञा च प्रतियुगं नवनवमात्मानं प्रस्फुरति समाविष्करोति च। तत्र च वेदाः, शास्त्रीयं वाङ्मयम्, इतिहासः, पुराणानि, काव्यानीत्यनेकरचनाः विकासं गताः। ताश्च परम्परया संरक्षिताश्च। तत्ता आधुनिकशैल्या च संरक्षितुकामं राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानं मुद्रणं, सान्द्रमुद्रिकानिर्माणं, सङ्गणकद्वारा संरक्षणमिति विविधप्रयासैः प्रयतमानं वर्तते। तत्राद्यं स्थानं भजते अध्ययनमध्यापनमिति स्वीयपरिसरेषु यत्र मौखिकपद्धत्या इमाः परम्पराः संरक्ष्यन्ते।

सर्वसाधनसम्पन्नेऽस्मिन्नाधुनिकलोकेऽपि ग्रन्थानां महत्ता न किञ्चिन्न्यूना दृश्यते। तत्र च कारणं सर्वजनसुलभतैव। अत एव संस्थानमपि ग्रन्थप्रकाशनकर्मणि आत्मानं सततं व्यापारयति। न केवलं स्वयं ग्रन्थान् प्रकाशयति अपि तु ग्रन्थप्रकाशनार्थमनुदानमपि दत्त्वा प्रकाशकान् लेखकांश्च प्रोत्साहयति। लोकप्रियग्रन्थमाला, शास्त्रीयग्रन्थमाला, अप्रकाशितग्रन्थप्रकाशनमाला इति विविधग्रन्थमालाः संस्थानेन प्रकाश्यन्ते। ते च ग्रन्था भृशं विद्वल्लोकेन समादृता आद्रियन्ते च। एतदतिरिच्य संस्कृतभाषाध्ययनार्थमपि स्वाध्यायशैल्या विरचिता दीक्षाग्रन्था अपि संस्थानेन प्रकाशिता लोके चिरं प्रतिष्ठां प्राप्नुवन् ये च ग्रन्था अनौपचारिकसंस्कृतशिक्षणकेन्द्रेषु आभारतं प्रधानतया पाठ्यन्ते।

एवं प्रकाशितग्रन्था अचिरादेव विद्वत्समाजस्य स्वध्यायरतानां जिज्ञासूनां छात्राणां च कृते सुलभ्या भवन्तीति संस्थानप्रकाशनानां वैशिष्ट्यं प्रयोजनञ्च चरितार्थतां याति। तादृशग्रन्थानां पुनः प्रकाशनायापि संस्थानं कटिबद्धं वर्तते। तत्र क्रमे एष ग्रन्थो विद्वल्लोकेन भृशं समादृतः परिभाषेन्दुशेखरः इति नामकः व्याकरणशास्त्रीयः संस्थानस्य पुनर्मुद्रणयोजनान्तर्गततया प्राकाश्यन्नीयते। एषोऽपि ग्रन्थः सर्वैः यथापूर्वं समाद्रियेत इति विश्वसिमि। अस्मिन् पुनर्मुद्रणकर्मणि साहाय्यमाचरितवद्भ्यः सर्वेभ्यः संस्थानस्य अधिकारिभ्यः सम्यङ्मुद्रणार्थं च मुद्रकाय साधुवादान् वितरामि।

– राधावल्लभः त्रिपाठी

विषयानुक्रमणिका

कर्मविपाकसंहिता

(नक्षत्रचरणफलदर्शिका)

श्री:

अथ कर्मविपाकसंहिता

(भाषाटीका-सहिता)

॥ १ ॥

पूजनविधिः

श्रीषण्मुखाग्रजाय नमः

हेरम्बं च शिवं गौरीं नत्वा स्वल्पधियाम्मुदे।
टीकाकर्मविपाकस्य नृगिरा क्रियते मया॥ १॥

श्रीगणेशाय नमः

शुक्लाम्बरधरं विष्णुं शशिवर्णं चतुर्भुजम्।
प्रसन्नवदनं ध्यायेत्सर्वविघ्नोपशान्तये॥ १॥

अथ कर्मविपाकसंहिता-भाषा

भाषा-टीका—संपूर्ण विघ्नों को दूर करने के लिये श्वेतवस्त्र को धारण करने वाले चन्द्रमा के समान रूप वाले, चार भुजाओं वाले, प्रसन्न मुख वाले विष्णु भगवान् का स्मरण करें॥ १॥

अथ प्रश्नविधिः

रविवारे च संक्रान्तौ शुभयोगे यथाविधि।
वैधृतौ च व्यतीपाते विप्राणां च गृहे तथा॥ २॥

भा० टी०—अब प्रश्नविधि कहते हैं— रविवार को संक्रान्ति के दिन सुंदर योग में विधि पूर्वक वैधृतियोग में और ब्राह्मणों के घर में (समय निश्चित करें)॥ २॥

देवतायतने चैव नद्यां वै सङ्गमोत्तमे।
अथवा स्वगृहे चैव शुभे स्थाने विशेषतः॥ ३॥

भा० टी०—विशेषरूप से मन्दिर में या उत्तम नदियों के समागम में अथवा अपने घर में और किसी शुभ स्थान में निश्चित करके (सूर्य को अर्घ्य दें) ॥ ३ ॥

स्नानं समाचरेद्रोगी मृतपुत्रः सपुत्रकः।
कर्मणा पीडितो योऽसौ नारी वा पुरुषोऽथवा ॥ ४ ॥

भा० टी०—पुत्र वाला या बिना पुत्र वाला, अपने कर्मों से पीड़ित स्त्री अथवा पुरुष रोगीजन स्नान करे ॥ ४ ॥

धात्री फलानि लोध्रं च गोमयं तिलसर्षपान्।
मृत्तिकाः सप्त कर्पूरमुशीरं मुस्तसंयुतम् ॥ ५ ॥

भा० टी०—धात्री अर्थात् आंवला, लोध, गोवर, तिल, सरसों, सात जगह की मृत्तिका[1], कपूर, खसखस नागरमोथा (एकत्रित करें) ॥ ५ ॥

औषधैस्समभागैस्तु स्नानं कुर्यात्प्रयत्नतः।
देवान्पितॄंश्च संतर्प्य दत्त्वा सूर्य्यार्घ्यमेव च ॥ ६ ॥

भा० टी०—उपर्युक्त सभी औषधियों के समान भागको लेकर यत्नपूर्वक स्नान करें, देवता और पितरों का तर्पण करके सूर्य को अर्घ्य दें ॥ ६ ॥

एवं सर्वविधिं कृत्वा संकल्पं कारयेत्ततः।
अद्येहेत्यादि प्राचीनसंचितकर्मविलोकनार्थं मनःकामनासिध्यर्थं विष्णोः पूजनपूर्वकं कर्म्मविपाकपुस्तकपूजनमहं करिष्ये ॥
अङ्गन्यासपूर्वकं षोडशोपचारपूजासंकल्पः वैश्वदेवं श्राद्धं च अत्रान्तरे देहशुध्यर्थं पुरश्चरणाङ्गत्वेन गोमिथुनदानव्रतं कुम्भदानं च प्रजापतिसंतुष्टये षोडशब्राह्मणान्भोजयेत् ॥

भोजनान्तरे प्रार्थनाऽऽचार्य्यस्य—

ब्राह्मण त्वं महाभाग भूमिदेव द्विजोत्तम ॥
यथाविधं प्रतिज्ञाय प्राचीनं च शुभाऽशुभम् ॥ ७ ॥

भा० टी०—इसप्रकार सब विधि करके तदनन्तर संकल्प करें—'अद्येहेत्यादि प्राचीनसंचितकर्मविलोकनार्थं मनःकामनासिध्यर्थं विष्णोः पूजनपूर्वकं कर्मविपाक-पुस्तकपूजनमहं करिष्ये', अङ्गन्यासपूर्वक षोडशोपचारपूजा का संकल्प करें, बलिवैश्वदेव श्राद्ध करें तत्पश्चात् देह की शुद्धि के लिए पुरश्चरण के अंग गोमिथुन का दान व्रत करें,

---

१. अश्वस्थान, गजस्थान, रथस्थान, राजस्थान, सर्प का बिल, सागर, विष्णुमंदिर—इन सात स्थानों की मृत्तिका।

कुंभों का दान करें, प्रजापति की प्रसन्नता के लिए सोलह ब्राह्मणों को भोजन करायें, भोजन के पश्चात् आचार्य की प्रार्थना करें—हे ब्राह्मण! तुम महाभाग वाले हो, हे पृथ्वी के देव! हे ब्राह्मणों में उत्तम! मेरे शुभ-अशुभ पूर्व कर्मों को यथार्थ रूप से देख कर॥ ७॥

कथं मे कथयस्वाशु कृपां कृत्वा ममोपरि।
एवं तु ब्राह्मणाचार्य्यं नमस्कृत्य प्रसादयेत्॥ ८॥

भा० टी०—मेरे ऊपर कृपा करके शीघ्र कहो कि, मेरे पूर्व कर्म कैसे हैं? इस प्रकार ब्राह्मण आचार्य को प्रणाम करके प्रसन्न करें॥ ८॥

दश पञ्च तथा विप्रानुपवेश्य प्रयत्नतः।
तेषामनुज्ञया सर्वं प्रायश्चित्तमुपक्रमेत्॥ ९॥

भा० टी०— मनोयोग से दश तथा पाँच ब्राह्मणों को बैठा कर उनकी आज्ञा लेकरके प्रायश्चित्त करें॥ ९॥

वस्त्रालङ्करणैराचार्य्यं पूजयित्वा प्रजापतिस्वरूपं गुरुं प्रार्थयेत्—

प्रजापते महाबाहो वेदवेदाङ्गपारग!॥
पुत्रकामसमृद्ध्यर्थं पूजां गृह्णीष्व ते नमः॥ १०॥

भा० टी०—वस्त्र-आभूषणों को धारण करके आचार्य का पूजन करें, प्रजापति-रूप गुरु की प्रार्थना करें। हे प्रजा के पति! हे महाभुजा वाले!! हे वेदवेदांग को जानने वाले!!! पुत्र की कामना सिद्ध होने के लिये मेरे द्वारा किये गये पूजन को अंगीकार करो, आपको मेरा प्रणाम है॥ १०॥

विष्णो त्वं पुण्डरीकाक्ष भुवनानां च पालकः।
लक्ष्म्या सह हृषीकेश पूजां गृह्णीष्व ते नमः॥ ११॥

भा० टी०—हे विष्णो! हे पुंडरीकाक्ष!! तुम भुवनों के पालन करने वाले हो। हे हृषीकेश! लक्ष्मी के साथ (आकर) मेरी पूजा को ग्रहण करो, आपको मेरा प्रणाम है॥११॥

रुद्र त्वं दैन्यनाशाय सदा भस्माङ्गधारक।
नागहारोपवीती च पूजां गृह्णीष्व ते नमः॥ १२॥

भा० टी०—हे रुद्र! आप दीनता को दूर करने के लिए सदा भस्म को अंगों में धारण करते हैं, नाग के हाररूप यज्ञोपवीत को धारण करते हो, मेरी पूजा को ग्रहण करो, आपको मेरा प्रणाम है॥ १२॥

स्वर्गे सुराश्च गन्धर्वाः पाताले पन्नगादयः।
मृत्युलोके मनुष्याश्च सर्वे ध्यायन्ति भास्करम्॥ १३॥

भा० टी०—स्वर्ग में देवता और गंधर्व, पाताल में नागादि और मृत्युलोक में मनुष्य— ये सब सूर्य का ध्यान करते हैं॥ १३॥

महायज्ञादिकं चैव अग्निहोत्रादि कर्म च।
तीर्थस्नानं तथा ध्यानं वर्तते भास्करोदयात्॥ १४॥

भा० टी०—महायज्ञ आदि कर्म, अग्निहोत्र आदि कर्म, तीर्थ का स्नान और देवता आदि का ध्यान—ये सब सूर्य के उदय होने से प्रवृत्त होते हैं॥ १४॥

ब्रह्मा विष्णुः शिवः शक्तिर्देवदेवो मुनीश्वराः।
ध्यायन्ति भास्करं देवं साक्षीभूतं जगत्रये॥ १५॥

भा० टी०—उत्तम, मध्यम, अधम—तीन प्रकार के जगत् के साक्षीरूप सूर्य का ब्रह्मा, विष्णु, शिव, देवी, देवताओं के देव इंद्र, मुनियों में उत्तम मुनि—ये सब ध्यान करते हैं॥ १५॥

त्वं ब्रह्मा त्वं च वै विष्णुस्त्वं रुद्रस्त्वं प्रजापतिः।
त्वमग्निस्त्वं वषट्कारस्त्वामाहुः सर्वसाक्षिणम्॥ १६॥

भा० टी०—तुम ब्रह्मा-रूप हो, तुम ही विष्णु हो, तुम शिव हो, तुम प्रजापति हो, तुम ही अग्नि हो, तुम वषट्कार हो, तुमको ही संपूर्ण का साक्षी कहते हैं॥ १६॥

योगिनां प्रथमो ध्येयो यतीनां ब्रह्मचारिणाम्।
आधिव्याध्योश्च कर्त्ता त्वं सर्वपापक्षयं कुरु॥ १७॥

भा० टी०—योगी, यती, ब्रह्मचारी—ये आपका ध्यान करते हैं और आधि (मन की पीड़ा)-व्याधि को तुम ही करने वाले हो, मेरे सब पाप दूर करो॥ १७॥

दीनानां कृपणानां च सर्वेषां व्याधिनाशनम्।
एवं च भास्करं ध्यात्वा नमस्कृत्य प्रसादयेत्॥ १८॥

भा० टी०— हे सूर्य! आप दीन और कृपण—सब की व्याधि का नाश करने वाले हो, ऐसे सूर्य का ध्यान कर, प्रणाम करके सूर्य को प्रसन्न करें॥ १८॥

अथ पृच्छकनियमः

पापी चैव दुराचारी परनिन्दापरो जनः।
ब्रह्महा हेममहारी च सुरापी गुरुतल्पगः॥ १९॥

भा० टी०—अब पूछने वाले के नियम कहते हैं—पापी और निंदित आचरण करने वाला और पराई निंदा करने वाला, ब्रह्महत्यारा, सुवर्ण को चुराने वाला, सुरा पीने वाला, गुरुओं की स्त्रियों से संभोग करने वाला॥ १९ ॥

स्त्रीहन्ता बालघाती च अगम्यागमनं तथा।
एवमादिकपापानि मया वै पूर्वजन्मनि॥ २०॥

भा० टी०—स्त्री की हत्या, बालक की हत्या, अगम्य स्त्री से गमन करना—ऐसे अनेक पाप मैंने पूर्व जन्म में किये हैं॥ २०॥

कृतानि विविधान्येव सर्वाणि मार्ष्टुमर्हसि।
शरणं तव संप्राप्तस्त्वं मामुद्धर्त्तुमर्हसि॥ २१॥

भा० टी०—अनेक प्रकार के जो पाप मैंने किये हैं, उन सब को आप दूर करो, मैं आपकी शरण में हूँ, आप मेरा उद्धार करो॥ २१॥

ममोपरि कृपां कृत्वा कर्म मे कथय प्रभो!
लग्नं तात्कालिकं कृत्वा जन्मपत्रं निरीक्ष्य च॥ २२॥

भा० टी०—हे प्रभो! मेरे ऊपर कृपा करके, तात्कालिक लग्न करके जन्म पत्र को देख कर मेरे कर्मों को कहो ॥ २२॥

लग्नं ग्रहविचारेण ज्ञातव्यं कर्म मामकम्।
ग्रहलग्नविचारेण जानन्ति कर्म पण्डिताः॥ २३॥

भा० टी०—लग्न और ग्रह का विचार करके मेरा कर्म देखने योग्य है, क्योंकि ग्रह लग्न के विचार से पंडित कर्म को जानते ही हैं॥ २३॥

सूत उवाच॥

कैलासशिखरे रम्ये सुखासीनं महेश्वरम्।
प्रणम्य पार्वती भक्त्या पप्रच्छ च सदाशिवम्॥ २४॥

भा० टी०—सूतजी कहते हैं— कैलास के सुंदर शिखर में सुखासन में बैठे हुए शिवजी को भक्तिपूर्वक प्रणाम करके पार्वती ने सदाकल्याणरूप शिव से यह पूछा॥ २४॥

पार्वत्युवाच॥

देव देव जगन्नाथ भक्तानुग्रहकारक!
लोकोपकारकं प्रश्नं वद मे परमेश्वर!॥ २५॥

भा० टी०—पार्वतीजी ने पूछा—हे देव! हे देव! हे जगत् के नाथ!! हे भक्तों पर कृपा करने वाले, लोक का उपकार करने वाले मेरे प्रश्न का उत्तर दो॥ २५॥

कलौ च मानवास्तुच्छाः पापमोहसमन्विताः।
महामोहग्रहग्रस्ताः पुत्रकन्याविवर्जिताः॥ २६॥

भा० टी०—कलियुग के मनुष्य तुच्छ हैं, पाप और मोह से युक्त हैं, महारोग आदि ग्रहों से ग्रसे हुये हैं और पुत्र व कन्या से वर्जित हैं॥ २६॥

कुत्सिता रूपविभ्रष्टा मृतवत्सा नपुंसकाः।
नारीणां पुरुषाणां च पूर्वकर्म च यत्प्रभो॥ २७॥

भा० टी०—अधम, बिगड़े हुए रूप वाले नष्ट संतान वाले नपुंसक हैं, हे प्रभो! ऐसे स्त्री-पुरुषों के जो कर्म हैं॥ २७॥

तत्सर्वं वद मे स्वामिन् सर्वज्ञोऽसि मतो मम।
तच्च श्रुत्वा वचो देव्याः प्रीतिमान् स महेश्वरः॥ २८॥

भा० टी०—हे स्वामिन्! उन सम्पूर्ण कर्मों को मेरे आगे कहो, आप तो सर्वज्ञ हो यह मेरा मत है। पार्वती के वचन सुन कर शिवजी प्रसन्न हुए॥ २८॥

प्रहस्य जगतामीशो वल्लभां प्रीतिसंयुताम्।
उवाच प्रश्नं तद्गूढं त्रैलोक्ये चापि दुर्लभम्॥ २९॥

भा० टी०—जगत् के स्वामी शिवजी ने हँस कर प्रसन्न हुई पार्वती को तीनों लोकों में दुर्लभ उस प्रश्न के गुप्त उत्तर को कहा॥ २९॥

शिव उवाच॥

शृणु त्वं गिरिजे देवि नृणां कर्म विशेषतः।
कथयामि न संदेहो यत्ते मनसि वर्त्तते॥ ३०॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं- हे पार्वती देवि! मनुष्यों के कर्म विशेष करके तुम सुनो, जो तुम्हारे मन में है उसका संपूर्ण उत्तर देता हूँ, इसमें संदेह मत करना॥ २०॥

मर्त्याः सर्वे जगज्जाताः कर्म कुर्वन्ति सर्वदा।
स्वकर्माणि ततो देवि भुज्यन्ते देवमानुषैः॥ ३१॥

भा० टी०—हे देवि! जगत् में उत्पन्न हुए सब जन सदा कर्म करते रहते हैं। फिर देवताओं और मनुष्यों द्वारा अपने कर्म भोगे जाते हैं अर्थात् सब अपने ही कर्मों को भोगते हैं॥ ३१॥

मानवैस्तु विशेषेण सुखदुःखादिकं च यत्।
कर्मत्रयं च सर्वेषां तन्मध्ये संचितं च यत्॥ ३२॥

भा० टी०—सबके तीन प्रकार के कर्म हैं- प्रारब्ध, संचित और क्रियमाण। उनमें से जो संचित कर्म है॥ ३२॥

वक्तव्यं नात्र संदेहो यत्कृत्वा फलमाप्नुयात्।
प्रारब्धं विस्तरं कर्म वर्त्तमानं च दृश्यते॥ ३३॥

भा० टी०—वह मेरे द्वारा कहने योग्य है, इसमें संदेह नहीं है। क्योंकि जिसको करके जातक फल को प्राप्त होता है। प्रारब्ध कर्म विस्तार वाला है और वर्तमान में वह फल के रूप में दीखता ही है॥३३॥

अश्विन्यादिकनक्षत्रे सर्वेषां जन्म जायते।
तदादिपादभेदेन ज्ञातव्यं च शुभाशुभम्॥ ३४॥

भा० टी०—अश्विनी आदि नक्षत्रों में सभी जातकों का जन्म होता है। उनके प्रथम, द्वितीय आदि चरणों के भेद से शुभ-अशुभ फल जानने चाहिए॥ ३४॥

इति श्रीकर्मविपाकभाषाटीकायां पूजनविधिर्नाम प्रथमोऽध्यायः॥ १॥

॥ २ ॥

अश्विनीनक्षत्रफलम्

अश्विन्याः प्रथमे पादे यदा जन्म प्रजायते।
तदा ब्राह्मणवर्णोऽयं मध्यदेशसमुद्भवः॥ १॥

भा० टी०—यदि अश्विनी के प्रथम चरण में जन्म हो तो यह मानें कि यह पूर्वजन्म में मध्यप्रदेश में ब्राह्मण के घर जन्मा था॥ १॥

द्वितीयचरणे देवि पुरा क्षत्री न चान्यथा।
अयोध्यापुरतः पूर्वं पुत्रकन्याविवर्जितः॥ २॥

भा० टी०—हे देवि! दूसरे चरण में जन्म हो तो वह पहले जन्म में क्षत्रिय वर्ण था, इस में सन्देह नहीं है और अयोध्यापुरी से पूर्व में बसने वाला पुत्रकन्या से वर्जित था अर्थात् कोई संतान नहीं थी ॥ २॥

तृतीयचरणे देवि वैश्यवर्णसमुद्भवः।
रोगी कुत्सितवर्णोऽयं मृतवत्सो नपुंसकः॥ ३॥

भा० टी०—हे देवि! तीसरे चरण में हो तो वैश्य वर्ण में उत्पत्ति जानें, यह रोगी और बुरे वर्णवाला तथा नपुंसक है, इसके संतान नहीं जीती है॥ ३॥

चतुर्थचरणे देवि यदा भवति मानवः।
तदा शूद्रं विजानीयाद्रोगवान् मृतवत्सकः॥ ४॥

श्यामलः पुष्टदेहश्च कुष्ठरोगेण पीडितः।

इति श्रीअश्विनीनक्षत्रस्य सामान्यफलम्॥

भा० टी०—हे देवि! जो मनुष्य चौथे चरण में उत्पन्न हुआ हो तो उसे शूद्र जानें रोगी तथा इसकी संतान मरती है॥ ४॥ श्याम वर्ण पुष्ट शरीर वाला है और कुष्ठ रोग से पीड़ित है॥

इति श्री अश्विनीनक्षत्रस्य सामान्यफलम्॥

शिव उवाच।

अथ कर्म प्रवक्ष्यामि यत्कृतं ब्राह्मणादिभिः।
एको ब्राह्मणवेदज्ञो गुणरूपसमन्वितः॥ १॥

भा० टी०—शिव जी कहते हैं— अब मैं जो ब्राह्मण आदि वर्णों ने किया है उस कर्म को कहता हूँ—वेद को जानने वाला गुण और रूप मे युक्त एक ब्राह्मण था॥ १॥

तस्य पत्नी विशालाक्षी पुंश्चली क्षत्रवंशजा।
तस्यां पुत्रो भवेद्देवि नाम्ना नरहरिस्तदा॥ २॥

भा० टी०—उसकी स्त्री विशालाक्षी जारिणी और क्षत्रिय वंश में उत्पन्न थी। हे देवि! उसका नरहरि नामक पुत्र हुआ॥ २॥

ब्रह्मकर्मपरिभ्रष्टो व्याधिभिः पीडितस्सदा।
तस्य मित्रं द्विजोऽप्येको धनपुत्रैश्च संयुतः॥ ३॥

भा० टी०—वह ब्राह्मण के कर्म से भ्रष्ट हुआ, व्याधियों से सदा पीड़ित हुआ उसका एक मित्र ब्राह्मण धन और पुत्रों से युक्त था ॥ ३॥

नामतो लग्नशर्मेति निकटे तस्य चागतः।
आदरं बहुधा कृत्वा स्वर्णं दृष्ट्वा प्रहर्षितः॥ ४॥

भा० टी०—लग्नशर्मा नाम वाला वह ब्राह्मण उसके समीप आया, तब बहुत आदर किया और सुवर्ण को देख कर प्रसन्न हुआ॥ ४॥

स्वर्णलोभेन तं विप्रं हतवान् पुत्रसंयुतम्।
स्वर्णं सर्वं हृतं देवि व्ययं कृत्वा दिने दिने॥ ५॥

भा० टी०—फिर सोने के लोभ से पुत्र समेत उह ब्राह्मण को मार दिया, हे देवि! चुराया हुआ सोना भी दिन प्रति दिन खर्च कर दिया॥ ५॥

षडंशैर्गुप्तदानं च गङ्गायमुनसंगमे।
चकार तद्धनैर्भक्त्या विष्णुप्रीतिकरं तदा॥ ६॥

भा० टी०—और गंगा-यमुना के संगम में उसने मोह से छठे हिस्से के धन का गुप्तदान भी विष्णु की प्रीति के लिए भक्ति पूर्वक किया॥ ६॥

एवं बहुगते काले पत्नी तस्य मृता पुरा।
पश्चात्सोपि ग्रहग्रस्तो मृत्युं प्राप्तोऽतिदुर्जनः॥ ७॥

भा० टी०—ऐसे ही बहुत सा काल बीत जाने पर उसकी स्त्री मर गई, फिर वह दुर्जन भी ग्रह-पीडा से ग्रस्त हो कर मर गया॥ ७॥

निक्षिप्तो नरके घोरे यमदूतैर्यमाज्ञया।
युगसप्ततिपर्यन्तं भुक्त्वा नरकयातनाम्॥ ८॥

भा० टी—तब धर्मराज की आज्ञा से यम-दूतों ने उसे नरक में पटक दिया। सत्तर हजार युगों तक नरक की पीड़ा को भोग कर॥ ८॥

नरकान्निःसृतो देवि शृगालो गहने वने।
तत्स्थो निजफलं भुक्त्वा कृमियोनावभूत्पुनः॥ ९॥

भा० टी०—नरक से निकल कर हे देवि! गह्वर वन में गीदड़ हुआ, जहाँ अपने कर्म को भोग कर फिर कृमि योनि को प्राप्त हुआ॥ ९॥

पुनर्मानुषयोनिः स तूर्णं च प्रथिते कुले।
मध्यदेशे शुभे ग्रामे मृतवत्सो ह्यपुत्रकः॥ १०॥

भा० टी०—फिर वह शीघ्र ही विख्यात कुल में मध्य देश में सुंदर ग्राम में उत्पन्न हुआ है, मृतवत्स है, इसकी संतान नहीं जीती है॥ १०॥

रुग्णो बहुधनाढ्यश्च गौडो मांसप्रियः सदा।
तस्य भार्या महालुब्धा पुरा लोकमती च या॥ ११॥

भा० टी—रोगी, बहुत धनाढ्य गौड जाति सदा मांस में प्रीति रखने वाला है, जिसकी स्त्री महालोभिनी है जो कि पहले लोकमती नाम वाली थी॥ ११॥

पुनर्विवाहिता देवि पूर्वजन्मप्रसंगतः।
मासि पुष्पं भवेत्तस्याः संतानं नैव वा भवेत्॥ १२॥

भा० टी०—हे देवि! पूर्व जन्म के प्रसंग से फिर उसी से उसका विवाह हो गया जिसके हर महीने रजोदर्शन होता है और संतान नहीं होती है॥ १२॥

सज्वरा दीर्घनेत्रा सा कुक्षिरोगेण पीडिता।
इति श्रुत्वा वचस्तस्य महादेवप्रिया शिवा॥ १३॥

भा० टी०—ज्वर वाली, दीर्घ नेत्रों वाली, कुक्षि के रोग से पीड़ित है। ऐसे इस वचन को सुन कर महादेव की प्रिया॥ १३॥

प्रणम्य पार्वती देवी शङ्करं परमेश्वरम्।
उवाच वचनं देवं चराचरगुरुं परम्॥ १४॥

भा० टी०—पार्वती देवी उन परमेश्वर शंकर को प्रणाम करके चराचर के परम गुरुदेव से वचन बोली॥ १४॥

प्राणिनां केवलं कर्म्म तव मायाविचेष्टितम्।
शुभमेवाऽशुभं चैव कथं जानामि पूर्वजम्॥ १५॥

भा० टी०—प्राणियों के कर्म केवल तुम्हारी माया के विचेष्टित हैं इसलिए पहले होने वाले शुभ-अशुभ कर्मों को कैसे जानूँ॥ १५॥

तत्सर्वं कृपया देव वद मे परमेश्वर।

ईश्वर उवाच।

त्रिविधं प्राणिनां कर्म नृणां चैव स्वभावजम्।
अनिष्टमिष्टं मिश्रं च त्रिविधं कर्मणः फलम्॥ १६॥

भा० टी०—हे देव! हे परमेश्वर!! कृपा करके मेरे आगे संपूर्ण बताओ॥ शिव जी कहते हैं—प्राणियों के स्वभाव से उत्पन्न हुए तीन प्रकार के कर्म हैं—जैसे ही मनुष्यों कि कर्म हैं— शुभ, अशुभ, मध्यम और तीन प्रकार के कर्मों के फल हैं॥ १६॥

अनिष्टं नागलोके च नरके विविधे तथा।
इष्टं स्वर्गे फलं देवि मिश्रं मर्त्ये प्रजायते॥ १७॥

भा० टी०—जहाँ अशुभ कर्म पाताल लोक में और अनेक प्रकार के नरकों में भोगा जाता है, वही शुभ कर्म स्वर्ग में भोगा जाता है और हे देवि! मध्यम कर्म मनुष्य-लोक में जन्म ले कर भागा जाता है॥ १७॥

रोगतश्चेष्टया देवि ज्ञेयं सर्वं शुभाशुभम्।
राजयोगी भवेद्यस्तु ब्रह्महा पूर्वजन्मनि॥१८॥

भा० टी०—हे देवि! रोगों से चेष्टा पूर्वक संपूर्ण शुभ-अशुभ जानना चाहिये, जो राज- रोगी हो, वह पूर्व जन्म में ब्राह्मण को मारने वाला था॥ १८॥

पुत्रकन्याविहीनो यो गोत्रहा गुरुहा भवेत्।
पाण्डुरोगी नरो यस्तु देवपूजनवर्जितः॥ १९॥

भा० टी०—जो पुत्रकन्या से विहीन हो अर्थात् जिसकी पुत्र या कन्या नहीं हों तो वह पहले जन्म में अपने गोत्री या गुरु को मारने वाला था, जो पांडुरोग वाला मुनष्य हो, वह किसी भी देवता का पूजन नहीं करता था॥ १९॥

कन्यापत्यं भवेद्यस्य वेदनिन्दा कृता तदा।
कन्याघाती पक्षिघाती तस्य भार्या न जीवति॥ २०॥

भा० टी०—जिसकी लड़कियाँ ही उत्पन्न होती हों, उसने पूर्व जन्म में वेद की निंदा की है। कन्या, पक्षी, इनको मारने वाले की स्त्री नहीं जीती है॥ २०॥

भ्रातृहा यः पुरा देवि स ज्वरेण प्रपीडितः।
घण्टावादित्रहारी च कररोगी नरो भवेत्॥ २१॥

भा० टी०—हे देवि! जो पूर्वजन्म में भाई को मारता है, वह ज्वर से पीड़ित होता है, घंटा, बाजा—इनको हरने वाले के हाथ में रोग होता है॥ २१॥

भगिनीनाशनं देवि कृतं यैः पूर्वजन्मनि।
तेन पापेन भो देवि ते ज्वरेण प्रपीडिताः॥ २२॥

भा० टी०—हे देवि! जिन्होंने पूर्व जन्म में अपनी बहिन का वध किया है, उस पाप के कारण वे ज्वर से पीड़ित होते हैं॥ २२॥

मित्रद्रोही बालघाती पशुघाती तथैव च।
तत्फलेन महादेवि मृतवत्सश्च रोगवान्॥ २३॥

भा० टी०—हे देवि! मित्रद्रोही, बालघाती, पशुघाती—जन इस पाप से 'मृतवत्स' अर्थात् संतान मरने वाला और रोगी होता है॥ २३॥

कायाघाती गर्भपाती धनपुस्तकहारकः।
जन्मान्धो जायते देवि नात्र कार्या विचारणा॥ २४॥

भा० टी०—शरीर का नाश करने वाला, गर्भ गिराने वाला, धन-पुस्तकों को चोरने वाला जन जन्म से अंधा होता है, इसमें कुछ चिन्तनीय नहीं है॥ २४॥

वस्त्रहा भूमिहारी च परनिन्दापरस्तथा।
तेन पापेन भो देवि दरिद्रो जायते नरः॥ २५॥

भा० टी०—हे देवि! वस्त्र और भूमि को हरने वाला पराई निंदा करने वाला जन उस पाप से दरिद्र होता है॥ २५॥

गोत्रदारापहारी च दीर्घरोगी भवेन्नरः।
महिषीपुत्रघाती च कम्परोगी प्रजायते॥ २६॥

भा० टी०—अपने गोत्र की स्त्री को हरने वाला दीर्घ रोगी कुष्ठ आदि रोग वाला होता है, भैंसी के बछड़े काटड़े को मारने वाला कंप रोगी होता है॥ २६॥

निर्बीजं वृषभं यो वै प्रकरोति नराधमः।
षण्ढस्संजायते देवि मूत्रकृच्छ्री भवेत्ततः॥ २७॥

भा० टी०—जो पापी मनुष्य बैल को वधिया करता है, हे देवि! वह नपुंसक होता है। फिर मूत्रकृच्छ्र रोग वाला होता है॥ २७॥

मातृहा पितृहा देवि महाकुष्ठी नरो भवेत्।
अगम्यागमनं यस्तु वीरयोषागमं तथा॥ २८॥

भा० टी०—हे देवि! माता-पिता को मारने वाला जन महाकुष्ठी होता है, अगम्या स्त्री से तथा शूर-वीर की स्त्री से गमन करने वाला ॥२८॥

करोति योऽधमस्तस्य शरीरं ज्वरपीडितम्।
गोवधी जायते देवि श्वेतकुष्ठी नरस्सदा॥ २९॥

भा० टी०—अधम नर का शरीर ज्वर से पीड़ित होता है। हे देवि! गौ का वध करने वाला जन सदा श्वेतकुष्ठी होता है॥ २९॥

कन्यकागमनं यस्तु करोति हठतः पुरा।
तेन पापेन भो देवि रोगवान्धनवर्जितः॥ ३०॥

भा० टी०—जो पूर्वजन्म में हठ से कन्या के संग गमन करता है अर्थात् बलात्कार करता है। हे देवि! वह उस पाप से रोगवान् और निर्धनकंगाल होता है॥ ३०॥

पुष्पगन्धापहारी च मुखे तस्य विगन्धता।
घृतहारी भवेत्कुष्ठी तस्माद्भ्रष्टः कृमिर्भवेत्॥ ३१॥

भा० टी०—पुष्पों की सुगंधि को हरने वाले के मुख में दुर्गंधी होती है, घृत को हरने वाला कुष्ठी होता है। फिर उस योनि से छूट कर कृमि होता है॥ ३१॥

वृक्षगन्धापहारी च काकः संजायते नरः।
वापीकूपापहारी च दद्रुरोगी भवेन्नरः॥ ३२॥

भा० टी०—वृक्ष के गंध को हरने वाला मुनष्य काग (कौआ) होता है, बावड़ी कुआँ को नष्ट करने वाला दद्रुरोगी होता है॥ ३२॥

देवयात्रापहारी च कण्ठरोगी भवेन्नरः।
सारङ्गगीतघाती च वने दावाग्निदाहकः॥ ३३॥

भा० टी०—देव-यात्रा को भंग करने वाले जन के कंठ में रोग होता है। मयूर आदि पक्षियों के कूजने को बंद करने वाला तथा वन में दावानल लगाने वाला ॥ ३३॥

अक्षिरोगी नासिकायां व्रणी कृमिसमाकुलः।
तैलहारी भवेत्तैली गुडहारी ज्वरी सदा॥ ३४॥

भा० टी०— वह आँख के रोग वाला होता है, नासिका में व्रण और कृमि गिर जाते हैं, तेल को हरने वाला तेली होता है, गुड को हरने वाला ज्वर से पीड़ित होता है॥३४॥

स्वर्णरौप्यापहारी च नरो भवति पुत्रहा।
दासदासीहरो यस्तु नरो भवति कर्णरुक्॥ ३५॥

भा० टी०—सोना-चांदी को हरने वाला मनुष्य अपने पुत्र का नाश करने वाला होता है। दास-दासी को मारने वाला मनुष्य कान के रोग वाला होता है॥ ३५॥

लोहमौल्यापहारी च पाण्डुरोगी भवेन्नरः।
दधिदुग्धहरो यस्तु कुक्षिरोगी भवेन्नरः॥ ३६॥

भा० टी०—लोह के मोल को नहीं देने वाला पांडु रोगी होता है, दधि-दुग्ध को हरने वाला कुक्षि रोगी होता है॥ ३६॥

मार्गग्राही वस्त्रहारी बाहुरोगी प्रजायते।
मयूरकुक्कुटानां च कच्छपानां च बाधकः॥ ३७॥

भा० टी०—मार्ग को रोकने वाले और वस्त्रों को हारने वाले की भुजाओं में रोग होता है, मोर, मुर्गे, कछुओं को पीड़ा करने वाला पुरुष ॥ ३७॥

वातरोगी च खञ्जश्च जन्म जन्म नपुंसकः।
मद्यपी मांसभोगी च मत्स्यभोजी तथैव च॥ ३८॥

भा० टी०—वात-रोग वाला लंगड़ा और जन्म-जन्म में नपुंसक होता है। मदिरा पीने वाला, मांस खाने वाला मच्छी भक्षण करने वाला ॥ ३८॥

तेन पापप्रभावेण चर्मकारो हि जायते।
अन्नहा जलहा चैव दन्तरोगी भवेन्नरः॥ ३९॥

भा० टी०—उस पाप के प्रभाव के कारण वह चमार होता है, अन्न को हरने वाला, जल को हरने वाले के दांतों में रोग होता है॥ ३९॥

ब्राह्मणस्य गृहं यस्तु धनधान्यसमन्वितम्।
हरणं तस्य वै कुर्यान्मृगीरोगी भवेन्नरः॥ ४०॥

भा० टी०—जो ब्राह्मण के धन और अन्न से युक्त घर पर अधिकार कर ले वह मृगी रोग वाला होता है॥ ४०॥

एवं बहुविधो रोगो नराणां चैव जायते।
पूर्वकर्मफलं चैव भुज्यते खलु मानवैः॥ ४१॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां द्वितीयोऽध्यायः॥ २॥

भा० टी०—ऐसे बहुत प्रकार के रोग मनुष्यों को होते हैं इसलिए निश्चय मनुष्यों द्वारा अपना ही पूर्व कर्म भोगा जाता है॥ ४१॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां द्वितीयोऽध्यायः॥ २॥

॥ ३ ॥

प्रायश्चित्तकथनम्

॥ ईश्वर उवाच ॥

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि यत्प्रश्नं भुवि जायते।
प्रायश्चित्तं नराणां च मेषराशिक्रमादनु॥ १ ॥

भा० टी०—शिव जी कहते हैं—हे देवि! सुनों, जो प्रश्न पृथ्वी-तल में उठता है, उसके समाधान में मैं मेष राशि के क्रम से मनुष्यों के प्रायश्चित्त को कहता हूँ॥ १ ॥

ब्राह्मणं स्वर्णलोभेन हत्वा चैव सपुत्रकम्।
स्वर्णम्भुक्तं सदारेण तत्पापात् पुत्रवर्जितः॥ २ ॥

भा० टी०—पुत्र सहित ब्राह्मण को सुवर्ण के लोभ से मार कर जिसका सुवर्ण स्त्री-सहित उसने भोगा है, उसी पाप से उसके पुत्र नहीं है॥ २ ॥

प्रायश्चित्तं जपं देवि गायत्री त्र्यम्बकं ततः।
पञ्चलक्षप्रमाणेन ततः पापात् प्रमुच्यते॥ ३ ॥

भा० टी०—हे देवि! प्रायश्चित्त करते हुए 'गायत्री' तथा 'त्र्यंबकं यजामहे' मंत्र का पांच लाख जप करके तब वह उस पाप से छूटता है॥ ३ ॥

ब्राह्मणस्य सपुत्रस्य प्रतिमां कारयेद्बुधः।
स्वर्णं दशपलस्यैव तां संपूज्य प्रयत्नतः॥ ४॥

भा० टी०—(पूर्व जन्म में मारे गये) पुत्र सहित ब्राह्मण की मूर्त्ति (दशपल) चालीस तोले सुवर्ण की बनवा कर विधि-विधान पूर्वक उसकी पूजा करें॥ ४॥

कुण्डं कृत्वा ततो देवि चतुरस्रं प्रसन्नधीः।
प्रतिमां पूजयेच्चैव मन्त्रेणानेन भोः प्रिये॥ ५ ॥

भा० टी०—हे देवि! इसके अनंतर चौकोर कुंड बना कर प्रसन्नचित्त हो कर इस मंत्र से प्रतिमा का पूजन करें॥ ५ ॥

ॐ नमो गणाधिपतये गन्धदपुष्पादिबलिं समर्पयामि नमः।
ॐ इन्द्राय नमः। ॐ अग्नये नमः। ॐ यमाय नमः।

ॐ निर्ऋतये नमः। ॐ वरुणाय नमः। ॐ कुबेराय नमः।
ॐ कालाय नमः। ॐ शिवाय नमः। ॐ ब्रह्मणे नमः।
ॐ अनन्ताय नमः। ॐ गरुडवाहनाय नमः। ॐ विष्णवे नमः।
ॐ जयाय नमः। ॐ विजयाय नमः। ॐ पुण्यशीलाय नमः।
ॐ सुशीलाय नमः॥

भा० टी०—ॐ नमो गण० ॥ पुष्पबलि को समर्पण करता हूँ॥ ॐ इन्द्राय नमः, ॐ अग्नये नमः, ॐ यमाय नमः, ॐ निर्ऋतये नमः, ॐ वरुणाय नमः, ॐ कुबेराय ॐ कालाय नमः ॐ शिवाय नमः, ॐ ब्रह्मणे नमः, ॐ अनंताय नमः, ॐ गरुडवाहनाय नमः, ॐ विष्णवे नमः, ॐ जयाय नमः, ॐ विजयाय नमः, ॐ पुण्यशीलाय नमः ॐ सुशीलाय नमः—इन मंत्रों से पूजा करें॥

ॐ सर्वे देवास्तथा दैत्या ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः।
मत्पापं यत्पुरा जातं तत्सर्वं क्षम्यतां सदा॥ ६॥

भा० टी०—संपूर्ण देवता और दैत्य, ब्रह्मा, विष्णु, शिव—ये सब पूर्वजन्म में किये हुए मेरे पापों को सदा क्षमा करें॥ ६॥

इमां पूजां गृहाणैवं मम पुत्रं प्रयच्छतु।
अज्ञानाद्वा प्रमादाद्वा यत्कृतं पूर्वजन्मनि॥ ७॥

भा० टी०—हे देव! मेरे द्वारा की जा रही इस पूजा को ग्रहण करो, मुझको पुत्र दो, अज्ञान से अथवा प्रमाद से मैंने जो पूर्वजन्म में (पाप) किया है॥ ७॥

तत्सर्वं क्षम्यतां देव प्रयच्छ शरणं मम।
ततो नवग्रहाः सर्वे दिक्पालाश्चाप्युपग्रहाः॥ ८॥

भा० टी०—उस संपूर्ण (पाप) को क्षमा करो। हे देव! मुझको अपनी शरण दो, इसके अनंतर नवग्रह, दिक्पाल—उपग्रह, इनका पूजन करें॥ ८॥

सर्वे ममापराधां वै क्षम्यतां पूर्वजन्मनः।
एवं सर्वं यथान्यायं पूजां कृत्वा विचारतः॥ ९॥

भा० टी०—'कहें कि' मेरे पूर्वजन्म के संपूर्ण अपराध आपके द्वारा क्षम्य हैं इस प्रकार यथार्थ विधि-पूर्वक संपूर्ण पूजा करके अनुष्ठान करें ॥ ९॥

ततो होमं प्रकुर्वीत तिलधान्यादितन्दुलैः।
दशांशं होमयेद्देवि तर्पणं मार्जनं तथा॥ १०॥

भा० टी०— हे देवि! फिर तिल, जौ, चावल, इन सबको एकत्रित कर दशांश का होम करें और दशांश तर्पण तथा मार्जन करें॥ १०॥

गोदानं च ततः कुर्यात् दशवर्णं विशेषतः।
वृषमेकं प्रदातव्यं स्वर्णशृङ्गं सहाम्बरम्॥ ११॥

भा० टी०—फिर किसी योग्य पात्र को दश प्रकार के रंगों वाली गायों का दान करें, सुवर्ण के सींग और वस्त्रों से युक्त कर एक बैल का भी दान करें॥ ११॥

ततो वै ब्राह्मणान्देवि भोजयेद्विधिपूर्वकम्।
भोजनान्ते ततो दानं सुवर्णं दक्षिणां ततः॥ १२॥

भा० टी०—हे देवि! उसके अनंतर विधिपूर्वक ब्राह्मणों को भोजन करवा कर भोजन के अंत में उनको श्रद्धापूर्वक सुवर्ण का दान और दक्षिणा दें ॥ १२॥

प्रतिमालंकृता देवि वाचकाय प्रदापयेत्।
एवं कृते महादेवि वंशो भवति नान्यथा॥ १३॥

भा० टी०—हे देवि! अलंकृत की हुई प्रतिमा को 'वाचक **यदि**' (संपूर्ण विधि बताने वाले और उपदेश करने वाले ब्राह्मण) को दिया जाये तो हे महादेवि! ऐसे करने से अवश्य वंश चलता है, इस में संदेह नहीं॥ १३॥

एकादशीव्रतं चैव सप्तमीं रविसंयुताम्।
यावत्स्वमरणं देवि कुर्यात्सत्ययुतो नरः॥ १४॥

भा० टी०—वह मनुष्य मरणपर्यंत एकादशी का व्रत तथा रविवार को पड़ने वाली सप्तमी का व्रत करे। जीवन में सदा सत्य वचन बोलने का नियम रखें॥ १४॥

पूर्वपापविशुद्धिस्स्यात् व्याधिरेवं विनश्यति।

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां प्रायश्चित्तकथनं नाम तृतीयोऽध्यायः॥ ३॥

भा० टी०—तब पूर्वजन्म के पाप की शुद्धि होगी और समस्त व्याधियों का नाश होता है, इसमें संदेह नहीं है॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां भाषाटीकायां प्रायश्चित्तकथनं नाम तृतीयोऽध्यायः

॥ ४ ॥

अश्विनीनक्षत्रद्वितीयचरणविचारणम्

॥ शिव उवाच ॥

अथ द्वितीये वक्ष्यामि प्रायश्चित्तं तथाम्बिके!
अश्विन्यां जायते देवि पूर्वकर्म विपाकतः ॥ १ ॥

भा० टी०—शिव जी कहते हैं—हे अंबिके! अब अश्विनी नक्षत्र के दूसरे चरण के प्रायश्चित्त को कहता हूँ। यह पूर्वकर्म के विपाक से अश्विनी नक्षत्र में जन्म लेने वाला नर ॥ १ ॥

अयोध्यापुरतो देवि पूर्वे क्रोशचतुष्टये।
सरय्वा निकटे चैव वर्णसंकरक्षत्रियः ॥ २ ॥

भा० टी०—हे देवि! अयोध्या पुरी से पूर्व दिशा में चार कोश पर सरयू नदी के निकट वर्ण संकर क्षत्रिय रहा था ॥ २ ॥

नामतो श्वेतवर्मेति पुत्रदारसमन्वितः।
एकदा मातुलो देवि पुत्रेण सह संयुतः ॥ ३ ॥

भा० टी०—श्वेतवर्मा नाम वाला वह स्त्री-पुत्र से संयुक्त था। हे देवि! एक समय उसका मामा अपने पुत्र सहित उसके घर आया ॥ ३ ॥

आगतो निकटे देवि स्वर्णकोटिसमन्वितः।
आदरं बहुधा कृत्वा गृहे वासं ददौ च सः ॥ ४ ॥

भा० टी०—हे देवि! करोड़ो रुपये का सुवर्ण-द्रव्य ले कर उसके समीप आया, तब उसने उसका बहुत आदर करके, अपने घर में उसे वास दिया ॥ ४ ॥

तस्य पत्नी गुणवती रूपयौवनसंयुता।
मासमेकं तदा देवि प्रत्यहं भगिनीगृहे ॥ ५ ॥

भा० टी०—उसकी स्त्री भी गुणवती नाम वाली रूप-यौवन से भरपूर थी। हे देवि! तब उसके मामा ने एक महीने तक दिन प्रति दिन अपनी बहन के घर में ॥ ५ ॥

भुज्यते सह पुत्रेण चामिषं विविधं तथा।
मासान्ते चावधीद्रात्रौ मातुलं सहपुत्रकम् ॥ ६ ॥

भा० टी०—पुत्र सहित अनेक प्रकार के मांसों का भक्षण किया और बाद में एक महीने के बाद पुत्र सहित मामा को उसने रात्रि के समय मार दिया॥ ६॥

भूमिमध्ये शव ताभ्यां यत्नतः स्थापितं तदा।
स्वर्णकोटिं प्रजग्राह पापात्मा गुरुघातकः॥ ७॥

भा० टी०—फिर उन दोनों पति-पत्नी ने वे शव यत्न से पृथ्वी में गाड़ दिये और (अपने से बड़े सम्बन्धी) गुरु को मारने वाले उस पापी ने सुवर्ण कोटि द्रव्य को ग्रहण किया॥ ७॥

पत्न्या सह ततो द्रव्यव्ययं कुर्वन् दिने दिने।
एवं बहुतिथे काले क्षत्री कालवशोऽभवत्॥ ८॥

भा० टी०—फिर अपनी स्त्री-सहित दिन प्रतिदिन द्रव्य को खर्चता हुआ वह क्षत्रिय बहुत-सा समय व्यतीत होने पर बाद में मृत्यु को प्राप्त हो गया॥ ८॥

पश्चान्मृता ततः पत्नी निर्जले गहने वने।
कर्दमे नरके घोरे यमदूतैर्यमाज्ञया॥ ९॥

भा० टी०—फिर उसके अनन्तर वह उसकी स्त्री भी निर्जल गह्वर वन में मर गयी, तब यम के दूतों ने यम की आज्ञा से घोर कर्दम नरक में ॥ ९॥

निक्षिप्य महतीं पीडां तयोर्दत्त्वा ततः प्रिये!
युगमेकं वरारोहे भुक्त्वा नरकयातनाम्॥ १०॥

भा० टी०—पटक कर उन दोनों को बहुत-सी पीड़ाएँ दी। हे प्रिये! हे वरारोहे!! एक युग तक नरक की पीड़ा को भोग कर॥ १०॥

नरकान्निःसृतो देवि गर्दभत्वमजायत।
पुनः सरटयोनिं तु भुक्त्वा मर्त्यस्ततोऽभवत्॥ ११॥

भा० टी०—नरक से निकल कर हे देवि! फिर गर्धे की योनि को प्राप्त हुए फिर छिपकली की योनि को भोग कर अब मनुष्य हुए हैं॥ ११॥

हतोऽनेन पुरा देवि मातुलः पुत्रसंयुतः।
तत्पापफलतो देवि वंशच्छेदश्च जायते॥ १२॥

भा० टी०—हे देवि! पहले इसने पुत्र सहित मामा को मारा था, जिस पाप के फल के कारण इसका वंश नष्ट होता है॥ १२॥

रोगयुक्ता भवद्देवि पत्नी वै पूर्वजन्मनि।
ततो विवाहिता जाता पुनर्वै पूर्वकर्मतः॥ १३॥

भा० टी०—हे देवि! पूर्वजन्म में इसकी यह स्त्री रोगिणी हो होती गयी, फिर भी अब पूर्वकर्म के प्रभाव से उसी के साथ इसका विवाह हुआ है॥ १३॥

कासश्वाससमायुक्तो विषमज्वरपीडितः।
प्रायश्चित्तं ततस्तस्य प्रवक्ष्यामि दयानिधे॥ १४॥

भा० टी०—खांसी, श्वास करके समायुक्त और विषमज्वर से पीड़ित है, हे दयानिधे! जिसका प्रायश्चित्त अब मैं कहता हूँ॥ १४॥

प्रत्यहं ब्राह्मणे दानं भक्तिपूर्वं वरानने!
दश धेनुं प्रयत्नेन हरिवंशश्रुतिं तथा॥ १५॥

भा० टी०—हे वरानने! दिन प्रतिदिन यत्न करके हरिवंश को सुनने और दश गौओं को भक्ति-पूर्वक ब्राह्मण को दान करे॥ १५॥

सुवर्णप्रतिमां कृत्वा पलं पञ्चदशस्य च।
वर्तुलाकारकुण्डे वै होमं कृत्वा प्रसन्नधीः॥ १६॥

भा० टी०—१५ पल अर्थात् ६० तोले की सुवर्ण की प्रतिमा बनवा कर गोलकुंड में प्रसन्न चित्त से पुरुष होम करें॥ १६॥

गायत्रीलक्षजाप्यं च कारयेत्तु प्रयत्नतः।
दशांशहोमः कर्तव्यो विप्राणां भोजनं ततः॥ १७॥

भा० टी०—प्रयत्न करके गायत्री का एक लाख जप करवायें और उसका दशांश होम करवाये बाद में ब्राह्मणों को भोजन कराये॥ १७॥

शय्यादानं विशेषेण प्रतिमां पूजयेत्ततः।

भा० टी०—तदनन्तर इसी क्रम में विशेष करके शय्या का दान करे और प्रतिमा का पूजन करें॥

अथ प्रतिमापूजनम्।

षोडशाङ्गुलिका वेदी मृत्तिकासप्तसंयुता।
चतुरस्रा विचित्रा च गन्धपुष्पसमन्विता।
तत्रैव प्रतिमां कृत्वा स्थापितां पूजयेत्ततः॥ १८॥

भा० टी०—(प्रतिमा-पूजन की विधि) सोलह आंगुल की वेदी बनवायें और सात मृत्तिकाओं से युक्त हो चौकोर और विभिन्न गंध पुष्प से युक्त वेदी हो वहीं ही प्रतिमा को स्थापित करके प्रतिमा-पूजन करें॥ १८॥

ॐ चक्रधराय नमः। ॐ गदाधराय नमः। ॐ शार्ङ्गिणे नमः।
ॐ गरुडाय नमः। ॐ विष्णवे नमः। ॐ शिवाय नमः।
ॐ ब्रह्मणे नमः। ॐ प्रजापतये नमः ॐ सर्वेश्वराय नमः।
ॐ लक्ष्म्यै नमः॥

भा० टी०—ॐ चक्रधराय नमः १, ॐ गदाधराय नमः २, ॐ शर्ङ्गिणे नमः ३, ॐ गरुडाय नमः ४, ॐ विष्णवे नमः ५, ॐ शिवाय नमः ६, ॐ ब्रह्मणे नमः ७, ॐ प्रजापतये नमः ८, ॐ सर्वेश्वराय नमः ९ ॐ लक्ष्म्यै नमः। १०

ॐ देवदेव महादेव शङ्खचक्रगदाधर!
मम पूर्वं कृतं पापं हर त्वं धरणीधर!॥ १९॥

भा० टी०—ॐ हे देवों के देव महादेव! हे शंखचक्रगदाधर!! हे धरणीधर!!! तुम मेरे पूर्वजन्म-कृत पापों को हरो॥ १९॥

एवं पूजां समाप्यैव प्रतिमां तां च दापयेत्।
आचार्याय तदा देवि सुवर्णं दक्षिणां ततः॥ २०॥

भा० टी०—इस प्रकार पूजा को समाप्त कर बाद में उस प्रतिमा को आचार्य ब्राह्मण को दान दें। देवि! तदनन्तर सुवर्ण की दक्षिणा दें॥ २०॥

ततः प्रदक्षिणां कृत्वा ब्राह्मणे व्यासरूपिणे।
माघे मासि प्रयागे तु स्नानं पत्नीसमन्वितः॥ २१॥

भा० टी०—फिर वेद-व्यास रूपी उस ब्राह्मण की प्रदक्षिणा करें और अपनी स्त्री से युक्त हो कर माघ के महीने में प्रयाग जी में स्नान करें॥ २१॥

एवं कृते न संदेहो वंशो भवति नान्यथा।
मृतवत्सा लभेत्पुत्रं वन्ध्यात्वं च विनश्यति॥ २२॥

भा० टी०—ऐसा करने से वंश अर्थात् संतान होती है, इसमें संदेह नहीं है और मृतवत्सा, अर्थात् जिस स्त्री की संतान नहीं जीती हो या वन्ध्या हो उस को भी पुत्र का सुख मिलता है॥ २२॥

रोगी च मुच्यते रोगात् कन्यका नैव जायते।

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे द्वितीयचरणविचारणं नाम चतुर्थोऽध्यायः॥ ४॥

भा० टी०—यदि रोगी हो तो रोग से छूट जाये और कन्या उत्पन्न न हो॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां द्वितीयचरणविचारणं नाम चतुर्थोऽध्यायः॥ ४॥

॥ ५ ॥

अश्विनीनक्षत्र तृतीयचरणविचारणम्

॥ ईश्वर उवाच ॥

अथातः संप्रवक्ष्यामि नक्षत्रतुरगास्य तु।
तृतीयस्य ततो देवि प्रायश्चित्तमतः शृणु॥ १॥

भा० टी०—शिव जी कहते हैं—हे देवि! अब अश्विनी नक्षत्र के तीसरे चरण के प्रायश्चित्त को कहता हूँ। सुनो॥ १॥

अयोध्यापुरतो देवि दक्षिणे पूर्वदिग्गते।
नारायणपुरे रम्ये राजपुत्रोऽभवत्तदा॥ २॥

भा० टी०—हे देवि! अयोध्या पुरी से पूर्व दिशा की ओर दक्षिण में अर्थात् अग्निकोण में, रमणीक नारायणपुर में एक राजपुत्र हुआ॥ २॥

स्वकर्मनिरतो दान्तः प्रजापोषणतत्परः।
नामतश्चोलसिंहेति तस्य पत्नी प्रभावती॥ ३॥

भा० टी०—अपने कर्म में रत, प्रजा का पालन करने में तत्पर वह चोल सिंह नाम वाला था, उसकी स्त्री प्रभावती थी॥ ३॥

तस्य मित्रं द्विजोऽप्येकः स्वकर्मपरिवर्जितः।
एकदा मृगयां यातो राजपुत्रः सब्राह्मणः॥ ४॥

भा० टी०—उसका मित्र एक ब्राह्मण अपने कर्म से भ्रष्ट था, एक समय वे दोनों राजा और ब्राह्मण शिकार खेलनं गये॥ ४॥

मृगं हत्वा वारारोहे जग्मतुर्गहने वने।
मांसस्य देवि भागार्थं कलहो हि महानभूत्॥ ५॥

भा० टी०—हे वरारोहे! वहाँ मृग को मार कर गह्वर वन में जाते हुए हे देवि! वहाँ मृग मांस के विभाग करने में इनका महान् कलह हुआ॥ ५॥

ततः स ब्राह्मणो दुष्टः क्रोधेनैवापि च द्विषन्।
मरणं तस्य भो देवि बभूव गहने वने॥ ६॥

भा० टी०—तब उस गह्वर वन में क्रोध से युक्त और द्वेष करते उस दुष्ट ब्राह्मण का मरण हो गया॥ ६ ॥

ततश्चिन्तापरीतात्मा राजपुत्रो गृहं ययौ।
गृहे च कारयामास तस्य कर्म यथाविधि॥ ७॥

भा० टी०—उसके अनंतर चिंता से व्याकुल राजपुत्र अपने घर में गया और घर में ही उसने विधि पूर्वक से उसका कर्मकांड-संस्कार कराया॥ ७॥

ततो बहुगते काले प्रयागे मकरे मुदा।
शरीरं त्यक्तवान् देवि भार्यया सहितस्तदा॥ ८॥

भा० टी०—फिर बहुत-सा काल व्यतीत होने के बाद तब यह स्त्री-सहित हुआ प्रयाग में मकरसंक्रांति के दिन आनंद से शरीर छोड़ा॥ ८॥

स्वर्गं भुक्त्वा युगान् सप्त ततः पुण्यक्षये सति।
मर्त्यलोकेऽभवज्जन्म धनधान्यसमन्वितः॥ ९॥

भा० टी०—फिर सात युगों तक स्वर्ग भोग कर पुण्य क्षीण होने पर बाद में मृत्युलोक में जन्मा है और धन धान्य से युक्त है॥ ९॥

भार्यया सहितो देवि मध्यदेशे वरानने
पुत्रो न जायते देवि पूर्वकर्मविपाकतः॥ १०॥

भा० टी०—हे देवि! हे वरानने!! भार्या-सहित मध्य देश में जन्मा है। हे देवि! पूर्वकर्म के विपाक के कारण इसका पुत्र नहीं हुआ है॥ १०॥

ब्रह्महत्याफलेनैव मृतवत्सोऽपि वा भवेत्।
तस्य शुद्धिं प्रवक्ष्यामि यतः पुत्रः प्रजायते॥ ११॥

भा० टी०—ब्रह्महत्या के फल के कारण ही मनुष्य मृतवत्स अथवा इसके संतान नहीं जीती है निःसन्तान होता है अब उस पाप की शुद्धि को कहता हूँ, जिससे उसका पुत्र होगा॥ ११॥

तदुद्देशेन कर्त्तव्यस्तडागो वापिका पथि।
हरिवंशश्रवणं देवि विधिपूर्वमतः शिवे!॥ १२॥

भा० टी०—उस प्रायश्चित्त के उद्देश्य से मार्ग में कूआँ अथवा बावड़ी बनवायें। हे देवि! हरिवंशपुराण सुनें तब कल्याण होगा॥ १२॥

दश वर्णाः प्रदातव्याः स्वर्णयुक्ताः सहाम्बराः।
एवं कृते न संदेहो वंशस्तस्य प्रजायते॥ १३॥

भा० टी०—और सुवर्ण तथा वस्त्रों से युक्त की हुई दश प्रकार की रंगों वाली गौओं का दान करें। ऐसा करने से वंश चलता है, इसमें संदेह नहीं है॥ १३॥

सा स्त्री स्यात्सुखिनी देवि सत्यमेव न संशयः।
काकवन्ध्यात्वमुक्ता स्यात् मृतवत्सा सुखावहा॥ १४॥

भा० टी०—हे देवि! वह स्त्री सुखवती होती है, काकवंध्या की भी फिर संतान होती है, मृत वत्सा को भी सुख होता है। इसमें संदेह नहीं॥ १४॥

व्याधिनाशो भवेद्देवि नात्र कार्या विचारणा।

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती० अश्वि० तृतीयचरणविचारणं नाम पञ्चमोऽध्यायः॥ ५॥

भा० टी०—हे देवि! ऐसा करने से व्याधि का नाश होता है, इसमें कुछ विचार-णाीय नहीं हैं॥

इति श्रीकर्मविपाकसं० पार्वती अश्वि० तृतीयचरणविचारणं नाम पञ्चमोऽध्यायः॥ ५॥

॥ ६ ॥

अश्विनीनक्षत्रस्य चतुर्थचरणविचारणम्

॥ शिव उवाच ॥

शृणु देवि वरारोहे नृणां कर्मविपाकजम्।
तदहं संप्रवक्ष्यामि यथाकर्मानुसारतः॥ १॥

भा० टी०—शिव जी कहते हैं—हे देवि! हे वरारोहे!! मनुष्यों के कर्मों के विपाक से उत्पन्न हुए फल को सुनो। मैं जिसको कर्मों के अनुसार कहूँगा॥ १॥

पुत्रा बहुविधा देवि लौकिका वै विचक्षणाः।
जायन्ते नात्र संदेहस्तत्सर्वं शृणु वल्लभे!॥ २॥

भा० टी०—हे देवि! अनेक प्रकार के लौकिक विद्वान् पुत्र उत्पन्न होते हैं। इसमें संदेह नहीं है। हे वल्लभे! उनके विषय में सुनो॥ २॥

प्रथमः पुण्यसंबन्धो मातृपितृप्रियः सदा।
सुसेवानिरतो नित्यं पितुर्मातुश्च यत्नतः॥ ३॥

भा० टी०—प्रथम प्रकार का पुत्र पुण्य के संबंध वाला सदा माता-पिता को प्रिय होता है। नित्य प्रति प्रयत्नपूर्वक माता-पिता की सेवा करने में तत्पर रहता है॥ ३॥

आजन्ममरणाद्देवि पितुराज्ञां करोति च।
मरणे पितृमात्रोश्च श्राद्धं कुर्याद्दिने दिने॥ ४॥

भा० टी०—हे देवि! जन्म से ले कर मरण पर्यन्त माता-पिता की आज्ञा का पालन करता है। जब माता-पिता मर जाते हैं तो तब तिथि पर्व पर श्राद्ध करता है।॥४॥

पितृश्राद्धं विना देवि भोजनं न करोति हि।
द्वितीयः शत्रुसंबंधी तस्य चेष्टां च मे शृणु॥ ५॥

भा० टी०—हे देवि! वह पुत्र पिता के श्राद्ध किये बिना भोजन भी नहीं करता है। दूसरे प्रकार का शत्रु संबंधी पुत्र होता है, जिसकी चेष्टा मुझसे सुनो॥ ५॥

पूर्वजन्मप्रसङ्गेन शत्रुः पुत्रः प्रजायते।
जन्मतः शत्रुरूपेण मातृपित्रोर्विरोधकृत्॥ ६॥

भा० टी०—पूर्वजन्म के प्रसंग से शत्रु पुत्र के रूप में पैदा होता है। इसलिए जन्म से ही शत्रु भाव करके माता-पिता से विरोध करता है॥ ६॥

तत्कर्म कुरुते येन तयोःक्लेशोऽभिजायते।
तृतीयो ऋणसंबन्धान्मत्तः शृणु वरानने॥ ७॥

भा० टी०—वह ऐसा कर्म करता है, जिससे कि उनको क्लेश हो। हे वरानने! तीसरे प्रकार का पुत्र ऋण के संबंध से होता है, उसके विषय में मुझसे सुनो॥ ७॥

ऋणं यस्य गृहीतं तु न दत्तं हठतः प्रिये!
तदा पुत्रत्वमाप्नोति द्रव्यदाता न संशयः॥ ८॥

भा० टी०—हे प्रिये! पूर्व-जन्म में जिससे ऋण (कर्जा) लिया हो, उसको हठ पूर्वक नहीं दिया हो तो वह द्रव्यदाता पुत्र के रूप में होता है, इसमें संदेह नहीं॥ ८॥

पितृद्रव्यं प्रयत्नेन गृह्णाति हठतः प्रिये!
द्यूतवेश्याप्रदानेन व्ययं कुर्याद्दिने दिने॥ ९॥

भा० टी०—वह दिन प्रतिदिन हठ से पिता के धन को ग्रहण करता है, हे प्रिये! जुआ और वेश्या पर दिन प्रतिदिन खर्च करता है॥ ९॥

यदा द्रव्यविहीनश्च पिता भवति वै प्रिये!
तदा मृत्युमवाप्नोति युवरूपो न संशयः॥ १०॥

भा० टी०—हे प्रिये! जब उसका पिता द्रव्यहीन (कंगाल) हो जाता है, तब जवानीं में ही वह मर जाता है, इसमें संदेह नहीं है॥ १०॥

चतुर्थो मित्ररूपेण पुत्रो जायेत पार्वति!
स्थापितं द्रव्यमन्यस्य न दत्तं पूर्वजन्मनि॥ ११॥

भा० टी०—हे पार्वति! चौथे प्रकार का पुत्र मित्र रूप में होता है, जिसको पूर्व-जन्म में अन्य किसी का द्रव्य स्थापित किया, फिर नहीं दिया॥ ११॥

तत्संबन्धस्वरूपेण पुत्रो जातस्तदा शिवे!
बहुप्रीतिं पितृभ्यां च पितृव्ये गोत्रजे तथा॥ १२॥

भा० टी०—यदि उस संबंध से पुत्र होता है तो हे शिवे! तब वह माता-पिता, चाचा, गोत्र में होने वाले जनों से बहुत प्रीति रखता है॥ १२॥

बहूद्यमो गुणी भोक्ता पितुः शिक्षासु तत्परः।
यत्करोति गृहे कर्म सुखदं जायते हि तत्॥ १३॥

भा० टी०—वह बहुत उद्यमी, गुणी, भोक्ता, पिता की शिक्षा में तत्पर होता है, जो कुछ घर में करता है, वही सुखदायक होता है॥ १३॥

पूर्वरूपो यदा देवि पत्नीपुत्रसमन्वितः।
ततः शरीरं वै त्यक्त्वा धनं गृह्य ततः प्रिये!। १४॥

भा० टी०—ऐसा यह पूर्वमित्र रूपी पुत्र जब जवान होता है और स्त्री-पुत्र से युक्त होता है, तब हे प्रिये! पिता के सब धन को ग्रहण करके शरीर त्याग कर परलोक को प्राप्त हो जाता है॥ १४॥

अथ वक्ष्यामि ते देवि चतुर्थचरणं शिवे!
नक्षत्रतुरगस्यैव प्राणिनां नियतं शृणु॥ १५॥

भा० टी०—हे देवि! हे शिवे!! अब अश्विनी नक्षत्र के चतुर्थ चरण को तुम्हारे आगे कहूँगा, इसमें जन्म लेने वाले प्राणियों के विषय में को सुनो॥ १५॥

कोशला पुरतो देवि सरय्वा उत्तरे तटे।
तत्र क्षत्री वसत्येको नगरे नन्दने तदा॥ १६॥

भा० टी०—हे देवि! अयोध्यापुरी से सरयू नदी के उत्तर किनारे पर नंदन नामक नगर में एक क्षत्रिय रहता था॥ १६॥

स च धर्मविहीनस्तु लक्ष्मणेति च नामतः।
तस्य भार्य्या विशालाक्षी कल्याणी नाम सा प्रिये!। १७॥

भा० टी०—वह धर्म से विहीन क्षत्रिय लक्ष्मण नाम से विख्यात था और हे प्रिये! जिसकी स्त्री सुंदर नेत्रों वाली कल्याणी नाम से विख्यात थी॥ १७॥

कुलटा यौवनोन्मत्ता परपुंसि रता सदा।
व्यापारं कारयामास वस्त्रहेमादिकस्य हि॥ १८॥

भा० टी०—वह यौवन से मतवाली पर-पुरुष में प्रीति रखने वाली कुलटा सदा वस्त्र, सुवर्ण आदि का व्यापार करती थी॥ १८॥

उद्यमं बहुधा कृत्वा द्विजैः सह वरानने!
एवं बहुतिथे काले विप्रद्रव्यं तु चोरितम्॥ १९॥

भा० टी०—बहुत उद्यम करके ब्राह्मण से व्यापार करते हुए इसप्रकार बहुत दिनों के पश्चात उसने ब्राह्मण के द्रव्य को चोर लिया॥ १९॥

तेन शोकेन विप्रस्तु शीघ्रं पञ्चत्वमागतः।
ततो बहुतिथे काले राजपुत्रस्य पञ्चता॥ २०॥

भा० टी०—जिसके शोक से ब्राह्मण शीघ्र ही मर गया और उसके बहुत दिनों बाद राजपुत्र क्षत्रिय की भी मृत्यु हो गई॥ २०॥

गतः स नरकं घोरं निरुश्वासं सुदारुणाम्।
षष्टिवर्षसहस्राणि भुक्त्वा नरकयातनाम्॥ २१॥

फिर वह बहुत बुरे संताप देने वाले दारुण नरक में पहुँचा साठ हजार वर्षों तक नरक की पीड़ा को भोग कर॥ २१॥

नरकान्निःसृतो देवि वृषयोनिः पुराभवत्।
ततो वै राजपुत्रस्तु मानुषत्वमुपागतः॥ २२॥

भा० टी०—हे देवि! नरक से बाहर निकल कर पहले वह बैल की योनि को प्राप्त हुआ, फिर वह राजपुत्र अब इस मनुष्य योनि को प्राप्त हुआ है॥ २२॥

पुरा तु यत्कृतं पापं तदिहैव प्रयुज्यते।
मित्रस्य वञ्चनाद्देवि पुत्रस्यैव च पञ्चता॥ २३॥

भा० टी०—पहले जो पाप किया था वही यहाँ भोगा जाता है। हे देवि! पहले जो मित्र ठगा था, जिससे इसके पुत्र की मृत्यु होती है॥ २३॥

काकवन्ध्याऽभवत्पत्नी दुःखशोकसमन्विता।
तस्य पुण्यं प्रवक्ष्यामि पूर्वपापस्य निग्रहम्॥ २४॥

भा० टी०—इसकी स्त्री, काकवंध्या अर्थात् एक ही बार संतान पैदा करती है फिर कुछ नहीं पैदा करती है, इसलिए दुःख-शोक युक्त है, अब जिसके पूर्व पाप को दूर करने वाले पुण्य को कहूँगा॥ २४॥

गायत्रीलक्षजाप्येन सर्वं पापं प्रणश्यति।
कूष्माण्डं नारिकेलं वा स्वर्णयुक्तं सहाम्बरम्॥ २५॥

भा० टी०—गायत्री का एक लाख जप कराने से संपूर्ण पाप नष्ट होता है और कूष्मांड (पेठे) को अथवा नारियल को सोने से भर कर वस्त्र से आच्छादित कर॥२५॥

गङ्गामध्ये प्रदातव्यं संतानार्थं वरानने!
वर्तुलाकारकुण्डे च होमं यत्नेन कारयेत्॥ २६॥

भा० टी०—हे वरानने! संतान प्राप्ति के लिए गंगा जी के मध्य में उसका दान कर देना चाहिए और गोलकुंड बनाये, यत्न से उसमें होम करें॥ २६॥

स्वर्णशृङ्गीं रौप्यखुरां पट्टवस्त्रसमन्विताम्।
आचार्याय प्रदद्यात्तु सपात्रां विधिवत् प्रिये!॥ २७॥

भा० टी०—सोने के सींग और रूपा के खुर बनवायें, पट्टवस्त्र से युक्त कर दोहनी आदि पात्र से युक्त करें, फिर विधिपूर्वक आचार्य ब्राह्मण को दान दें॥ २७॥

एवं कृते न संदेहो वन्ध्यात्वं च प्रणश्यति।
पुत्रपौत्राश्च वर्द्धन्ते न संदेहो वरानने!। २८॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे अश्विनीनक्षत्रस्य चतुर्थचरणविचारणं नाम षष्ठोऽध्यायः॥ ६॥

भा० टी०—हे वरानने! ऐसा करने से वन्ध्यापन दूर होता है और पुत्र-पौत्र बढ़ते हैं इसमें संदेह नहीं है ॥ २८॥

इति कर्मविपाकसं० भाषाटीकायां अश्विनी० चतुर्थचरण० नाम षष्ठोऽध्यायः॥ ६॥

॥ ७ ॥

स्त्रीकर्मकथनम्

॥ पार्वत्युवाच ॥

देवदेव महादेव सृष्टिस्थितिलयात्मक।
स्त्रीणां च कर्म संब्रूहि दयां कृत्वा ममोपरि॥ १ ॥

भा० टी०—पार्वती पूछती हैं— हे देवों के देव! महादेव!! सृष्टि, स्थिति, संहार करने वाले आप मुझ पर दया करके स्त्रियों के कर्मों को कहो॥ १ ॥

॥ ईश्वर उवाच ॥

नारीणां श्रृणु मे सर्वं यत्कृतं पूर्वजन्मनि।
ततोऽहं संप्रवक्ष्यामि समासेन वरानने!॥ २ ॥

भा० टी०—शिव जी कहते हैं—हे वरानने! स्त्रियों द्वारा जो कुछ पूर्वजन्म में किया गया है, वह सब मुझसे सुनो। मैं संक्षेप में कहता हूँ॥ २ ॥

पूर्वजन्मनि या नारी पतिनिन्दां चकार ह।
तेन पापेन भो देवि न स्त्री पुष्पवती भवेत्॥ ३ ॥

भा० टी०—जो स्त्री पूर्व-जन्म में पति की निंदा करती है, हे देवि! उस पाप से वह पुष्पवती, रजस्वला नहीं होती है॥ ३ ॥

यदा रौप्यस्य वै वृक्षं स्वाङ्गुष्ठपरिमाणकम्।
पलपञ्चमिदं देवि दद्याद्वेदविदे प्रिये!। ४ ॥

भा० टी०—जब वह अपने अंगुष्ठो के प्रमाण में चांदी का वृक्ष बीस तोले प्रमाण का बनाये, फिर वेद को जानने वाले ब्राह्मण को दान दें॥ ४ ॥

तदा पुष्पं भवेद्देवि नात्र कार्या विचारणा।
पतिं सुप्तं परित्यज्य परपुंसि रताभवत्॥ ५ ॥

भा० टी०—हे देवि! तब रजस्वला होती है, इसमें कुछ भी विचारणीय नहीं जो स्त्री सोते हुए अपने पति का त्याग कर पर-पुरुष के संग रमण करती है॥ ५ ॥

तेन पापेन भो देवि वन्ध्या नारी प्रजायते।
सुवर्णस्य कृतं वृक्षं फलपुष्पसमन्वितम्॥ ६ ॥

भा० टी०—हे देवि! उस पाप से वह स्त्री वंध्या होती है, इसलिए फल, पुष्प आदि से युक्त सुवर्ण का वृक्ष बनवा कर॥ ६॥

दद्याद्वेदविदे नारी पतिसेवासुतत्परा।
ततः पुत्रं प्रसूयेत सुवर्णपलतो दश॥ ७॥

भा० टी०—उसको और चालीस तोला सोने को वेद-पाठी ब्राह्मण को दान दे और अपने पति की सेवा में तत्पर रहे, तब पुत्र उत्पन्न होता है।॥ ७॥

परपुंसि रता नारी स्वपतिं मिष्टवादिनी।
तेन पापेन भो देवि कन्यापत्यं च जायते॥ ८॥

भा० टी०—हे देवि! जो स्त्री पर-पुरुष में रत रहे और अपने पति से मीठी-मीठी बातें बनाती रहे, उस पाप से उसकी कन्या ही होती है॥ ८॥

रौप्यस्यैव कृतं लिङ्गं पलपञ्चदशेन तु।
पूजयित्वा प्रयत्नेन दद्याद्विप्राय श्रोत्रिणे॥ ९॥

भा० टी०—पल अर्थात् ६० तोले चांदी का शिव लिंग बनवायें और उसका विधि पूर्वक पूजन करे और बाद में वेद पाठी ब्राह्मण को दान दें॥ ९॥

ततः कन्या तु न भवेच्छुभं पुत्रं प्रसूयते।
सततं वै यदा नारी कुलटा धर्मचारिणी॥ १०॥
तेन कर्मविपाकेन नारी गर्भं विनश्यति।
ततः प्रपूजयेद्देवं शङ्खचक्रगदाधरम्॥ ११॥

भा० टी०—ऐसा करने से फिर कन्या संतान नहीं होती है और सुंदर पुत्र जन्म लेता है और जो सदा जार धर्म में प्रवर्त होने वाली स्त्री है उस स्त्री का उस जार कर्म के पाप के कारण गर्भ नष्ट होता है तो वह स्त्री शंख-चक्र-गदा को धारण करने वाले (विष्णु) देव का पूजन करे॥ १०॥ ११॥

प्रयागे मकरे स्नानं पतिना तु सहाचरेत्।
स्वर्णशृङ्गं रौप्यखुरं मुक्तालाङ्गूलग्रन्थितम्॥ १२॥
दद्यात्सदक्षिणं देवि वृषभं विदुषे तथा।
या पतिं दुर्बलं त्यक्त्वा परेण सह संगता॥ १३॥

भा० टी०—और मकर के सूर्य में पति के सहित प्रयाग में स्नान करे और सुवर्ण के सींग चांदी के खुर, मोतियों से गूंथी हुई पूंछ बना कर ऐसी विधि से दक्षिणा के सहित वृषभ को हे देवि! विद्यावान् ब्राह्मण को दान दे, जो अपने दुर्बल पति को छोड़ कर जारपति के संग जाती है॥ १२॥ १३॥

तेन पापेन भो देवि! दरिद्रा पुत्रवर्जिता।
ततःकुमारीं संपूज्य ब्रह्मविष्णुमहेश्वरान्॥ १४॥

भा० टी०—हे देवि! वह उस पाप के कारण दरिद्र और पुत्र से हीन होती है वह कुमारी कन्या को पूजे और ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव का पूजन करे॥ १४॥

पूजयेदब्दमेकन्तु प्रत्यहं नियता प्रिये!
वर्षे पूर्णे ततस्तस्यै वस्त्रं दत्त्वा विसर्जयेत्॥ १५॥

भा० टी०—हे प्रिये! एक वर्ष तक प्रतिदिन नियम से पूजन करे, वर्ष पूर्ण होने पर तब उस कन्या को वस्त्र दे कर विसर्जित करे॥ १५॥

व्रतं सूर्यस्य वै कुर्यात्प्रणम्य प्रतिवासरम्।
तदा नारी पूर्वपापं दहत्येव न संशयः॥ १६॥

भा० टी०—प्रत्येक रविवार को सूर्य-व्रत करे, प्रणाम करे, तब वह नारी निश्चय ही अपने पूर्व पाप को दग्ध कर देती है॥ १६॥

मिष्टं भुङ्क्ते तु या नारी पत्युर्मिष्टं ददाति न।
तेन पापेन सा नारी मुखे दौर्गन्ध्यधारिणी॥ १७॥

भा० टी०—जो स्त्री मीठा भोजन करे, पति को मीठा नहीं देती हो, उस पाप से उसके मुख में दुर्गंध आ जाती है॥ १७॥

गुडं वा मधु वा खण्डं विप्राय प्रयता सदा।
प्रयच्छति यदा देवि मुखे शुद्धिश्च जायते॥ १८॥

भा० टी०—गुड़ अथवा शहद या खांड को प्रयत्नपूर्वक सदा ब्राह्मण को दान देने पर हे देवि! तब उसके मुख में शुद्धि आती है॥ १८॥

स्वपतिघ्नी च या नारी रण्डा भवति नान्यथा।
तया नित्यं प्रपूज्या च तुलसी भक्तिभावतः॥ १९॥

भा० टी०—जो स्त्री पूर्वजन्म में अपने पति को मार देती है वह रंडा होती है, इसमें संदेह नहीं है। वह भक्ति-भाव से नित्य प्रति तुलसी का पूजन करे॥ १९॥

ऊर्ज्जे माघे च वैशाखे प्रातः स्नानं समाचरेत्।
एकादशीव्रतं नित्यं द्वादशाक्षरविद्यया॥ २०॥

भा० टी०—कार्त्तिक, माघ, वैशाख के इन महीनों में प्रात:काल स्नान करना एकादशी व्रत करे नित्य प्रति द्वादशाक्षर[1] मंत्र का जाप करे॥ २०॥

जपं कृत्वा प्रयत्नेन पतिरूपाय विष्णवे।
समर्पणं ततः कुर्यात् शीघ्रं पापं प्रणश्यति॥ २१॥

भा० टी०—प्रयत्नपूर्वक जपकर पश्चात पतिरूप विष्णु के निमित्त समर्पण करे, तब शीघ्र ही पाप नष्ट होता है॥ २१॥

यदा पापयुता नारी गर्भपातं च कारयेत्।
तेन दुश्चरितेनेह ज्वरकुक्षिप्रपीडनम्॥ २२॥

भा० टी०—यदि कोई स्त्री पूर्वजन्म में गर्भपात कराती है तो उस दुष्टाचरण से इस जन्म में उसको ज्वर और कुक्षि में पीड़ा रहती है॥ २२॥

योनिशूलं भवेद्देवि गुदरोगो भगन्दरः।
तदा कुर्यात् प्रयत्नेन ब्राह्मणीं ब्राह्मणं तथा॥ २३॥

भा० टी०—हे देवि! उसको योनिशूल, गुद—रोग, भगंदर—ये रोग होते हैं, तब प्रयत्न से ब्राह्मण- ब्राह्मणी की मूर्ति बनाये॥ २३॥

रौप्यस्य च महादेवि दशनिष्कस्य भक्तितः।
प्रत्यहं पूजयेद्देवि पत्युराज्ञां समाचरेत्॥ २४॥

भा० टी०—हे महादेवि! भक्ति से चालीस मासे प्रमाण की चांदी की मूर्त्ति बनवाये, फिर प्रतिदिन उस मूर्ति का पूजन करे और अपने पति की सेवा में तत्पर रहे॥२४॥

भोजयेद्विविधैश्चान्नैर्घृतखण्डसमन्वितैः।
गोदानं च ततः कुर्यात् भक्त्या विद्योपजीविने॥ २५॥

भा० टी०—अनेक प्रकार के घृत-खांड-युक्त अन्नों से ब्राह्मणों को भोजन करवायें और भक्ति-पूर्वक विद्या की आजीविका करने वाले ब्राह्मण को गोदान दे॥२५॥

यदा नारी च दुष्टात्मा स्वपतौ दुर्वचो वदेत्।
तदा कण्ठे भवेद्रोगो नासिकायां च पीनसम्॥ २६॥

भा० टी०—जो दुष्ट नारी पूर्वजन्म में अपने पति को कड़वे (अपशब्द युक्त) वचन बोलती है तो उसके कंठ में रोग (गलगण्ड) और नासिका में पीनस (खेहर का) रोग होता है॥ २६॥

---

१. ''ॐ नमो भगवते वासुदेवाय'' यह द्वादशाक्षर मंत्र है।

वातगुल्मं वापि शिवे श्वेतपुष्पं प्रजायते।
रौप्यपुष्पयुतं देवि सुवर्णेन समन्वितम्॥ २७॥

भा० टी०—हे शिवे! उस स्त्री के वातगुल्म (वादी का गोला) अथवा श्वतपुष्प, शरीर में सफेद धब्बे हो जाते हैं। हे देवि, इसके लिए वह चांदी के पुष्पों से युक्त सुवर्ण से बनाया हुआ॥ २७॥

दद्याद्विप्राय विदुषे तदा सप्तपलं शुभे!
कन्यकां कलहाद्दुष्टाहन्ति नारी यदा हठात्॥ २८॥

भा० टी०—सात पल अर्थात् ४० तोले प्रमाण के वृक्ष को विद्वान् ब्राह्मण को दान दें, और जो दुष्टा नारी हठ से कलह करके कन्या को मार देती है॥ २८॥

तदा कुष्ठं भवेद्देवि जन्मजन्मदरिद्रता।
सूर्यस्य पूजनं कान्ते सदा नारीव्रतं चरेत्॥ २९॥

भा० टी०—तो उसको कुष्ठ होता है और जन्म-जन्मान्तर में दरिद्रता होती है। हे कान्ते! वह सूर्य का पूजन करे और सदा स्त्री का व्रत-नियम धारण रखे॥ २९॥

मासे मासे शनौ वारे वृक्षे विष्णुस्वरूपिणि!
विधिवत्पूजनं कुर्यात् पूर्वपापं विशुध्यति॥ ३०॥

भा० टी०—प्रत्येक महीने प्रति शनिवार को विष्णु रूपी पीपल वृक्ष का विधि-पूर्वक पूजन करे, ऐसा करने से पूर्वजन्म के पाप की शुद्धि होती है॥ ३०॥

श्वश्रूं च श्वशुरं चैव नित्यं क्रूरवचो वदेत्।
तेन पापेन भो देवि! श्वेतपुष्पं तनौ भवेत्॥ ३१॥

भा० टी०—हे देवि! जो स्त्री नित्य प्रति अपने सास-श्वशुर को क्रूर वचन बोलती है, उस पाप से उसके शरीर में सफेद धब्बे होते हैं॥ ३१॥

सूर्यस्य प्रतिमां देवि सुवर्णत्रिपलस्य च।
दद्याद्वेदविदे देवि सूर्यस्यैव व्रतं चरेत्॥ ३२॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्व० स्त्रीकर्मकथनं नाम सप्तमोऽध्यायः॥ ७॥

भा० टी०—हे देवि! इसके लिए वह बारह तोले सुवर्ण से सूर्य की मूर्ति बनवाये, वेदपाठी ब्राह्मण को दान दे और सूर्य का व्रत करती रहे, तब पाप नष्ट होता है श्वेत पुष्प, सफेद धब्बे दूर होते हैं॥ ३२॥

इतिश्री कर्मविपाकसंहितायां पार्व० स्त्री कर्मकथनं नाम भाषाटीकायां सप्तमोऽध्यायः॥७॥

॥ ८ ॥

अथ भरणीनक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

भरण्याः प्रथमे पादे नीलकण्ठो भवद्विजः।
ब्रह्मकर्मपरिभ्रष्टः काकुत्स्थनगरे शुभे॥ १॥

भा० टी०—शिव जी कहते हैं—भरणी के प्रथम चरण में जन्म लेने वाला यह मनुष्य पहले जन्म में नीलकंठ नाम वाला ब्राह्मण, ब्राह्मण के कर्म से भ्रष्ट काकुत्स्थ नामक सुंदर नगर में रहता था॥ १॥

वैश्येन सह मित्रत्वं क्रयं कृत्वा दिने दिने।
ब्राह्मणी तत्र वृद्धासीत्पतिपुत्रविवर्जिता॥ २॥

भा० टी०—वह वैश्य से मित्रता करके दिन प्रतिदिन माल खरीदने का व्यवहार करता था, वहीं एक ब्राह्मणी पति और पुत्र से हीन थी॥ २॥

तस्या द्रव्यं गृहीतं च विक्रयार्थं द्विजेन तु।
ततो बहुदिनं यातं तस्य द्रव्यं न दत्तवान्॥ ३॥

भा० टी०—जिसका धन विक्रय के लिए नीलकंठ ब्राह्मण ने उधार ले लिया तदनन्तर बहुत दिन व्यतीत हो गये, परंतु उसका धन दिया नहीं॥ ३॥

एवं बहुतिथे काले तस्य मृत्युरजायत।
ब्रह्मकर्मपरिभ्रंशान्नरके पतनं प्रिये!॥ ४॥

भा० टी०—इसी प्रकार बहुत समय के पश्चात् उस ब्राह्मण की मृत्यु हो गई तो हे प्रिये! ब्रह्म-कर्म से भ्रष्ट होने के कारण नरक में पड़ा॥ ४॥

नरकान्निःसृतो देवि सर्पयोनिरजायत।
सर्पयोनिफलं भुक्त्वा गर्दभत्वमुपागतः॥ ५॥

भा० टी०—हे देवि! नरक से निकल कर वह सर्प योनि में जन्मा और सर्प के फल को भोग कर गर्दभ योनि को प्राप्त हुआ॥ ५॥

पुनः संप्राप्तवान्देवि मध्यदेशे च मानुषम्।
धनधान्यसमायुक्तः पुत्रकन्याविवर्जितः॥ ६॥

भा० टी०—हे देवि! फिर वह मध्यदेश में मुनष्य के रूप में पैदा हुआ, धनधान्य से युक्त और पुत्र-कन्या से वर्जित हुआ॥ ६॥

ततो बहुतिथे काले तदा कन्याभवत्प्रिये!
स्वर्णं पूर्वं हृतं देवि स्वर्णसम्बन्धजा सुता॥ ७॥

भा० टी०—हे प्रिये! तब बहुत काल व्यतीत होने पर पूर्व में जिस स्त्री का सुवर्ण हरा था वह कन्या के रूप में सोने के संबंध से उसकी पुत्री बन कर पैदा हुई॥७॥

ततः सा वर्द्धिता कन्या विवाहश्चाभवत् खलु।
पितृमातृप्रिया नित्यं युवती तु यदाभवत्॥ ८॥

भा० टी०—तदनन्तर वह कन्या बढ़ती गई और फिर उसका विवाह हुआ, तब वह युवती माता-पिता को प्रिय लगने लगी॥ ८॥

तदा सा विधवा जाता मातापित्रोश्च दुःखदा।
पुनः पुत्रविहीनत्वं प्रायश्चित्तमतः शृणु॥ ९॥

भा० टी०—तभी वह विधवा हो गई, माता-पिता को दुःख देती रही। फिर वह पुत्रहीन रहा। अब इसके प्रायश्चित्त को सुनो॥ ९॥

सूर्यमन्त्रस्य जाप्येन लक्षमेकं वरानने!।
पार्थिवस्यार्चनं सम्यक् त्र्यम्बकेति ततो जपेत्॥ १०॥

भा० टी०—हे वरानने! सूर्य-मंत्र का जप एक लाख तक करें पार्थिव शिव बनवा कर उनका पूजन करायें फिर ''त्र्यम्बकं यजामहे०'' इस मंत्र का जप करें॥१०॥

होमं च कारयेद्धीमान् शतब्राह्मणभोजनम्।
पायसं शर्करायुक्तं कारयेद्विधिपूर्वकम्॥ ११॥

भा० टी०—बुद्धिमान् जन होम करें और खीर-खांड से विधि-पूर्वक सौ ब्राह्मणों को भोजन करवायें॥ ११॥

ततः कूपतडागौ च वापिकां च महापथे।
एवं कृते न संदेहो वंशलाभो वरानने!॥ १२॥

भा० टी०—फिर लम्बे—बड़े मार्ग में कुआँ, बावड़ी, तालाब, बनवायें। हे वरानने! ऐसा करने से निश्चय ही वंश बढ़ता है॥ १२॥

यदा न क्रियते देवि तदा वंशो न जायते।

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती० संवादे भरणीनक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नामाऽष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

भा० टी०—हे देवि! जो ऐसा नहीं किया जाये तो वंश आगे नहीं चलता है॥

इति श्रीकर्मविपाकभाषाटीकायां भरणी० प्रथमचर० नाम अष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

॥ ९ ॥

भरणीनक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ ईश्वर उवाच ॥

अथ द्वितीये वक्ष्यामि भरण्याश्चरणे प्रिये!
तस्य सर्वं प्रवक्ष्यामि यत्कृतं पूर्वजन्मनि॥ १ ॥

भा० टी०—शिव जी कहते हैं—हे प्रिये! अब भरणी नक्षत्र के दूसरे चरण में जन्म लेने वाले के पूर्वजन्म में किये गये कर्मफल को कहूँगा॥ १ ॥

अयोध्यापुरतो देवि क्रोशमात्रे प्रदक्षिणे।
जानकीनगरे रम्ये द्विजश्चासीत् स तस्करः॥ २ ॥

भा० टी०—हे देवि! अयोध्यापुरी से दक्षिण की तरफ एक कोश पर जानकी नाम वाले सुंदरपुर में कोई ब्राह्मण रहता था और वह चोरी करता था॥ २ ॥

ब्रह्मकर्मपरिभ्रष्टो मद्यपानरतः सदा।
स वेश्यानिरतो नित्यं पत्नी तस्य पतिव्रता॥ ३ ॥

भा० टी०—ब्रह्म कर्म से परिभ्रष्ट तथा मदिरा पीने में तत्पर वह प्रतिदिन वेश्या के संग में गमन करता था, किन्तु उसकी स्त्री पतिव्रता थी॥ ३ ॥

पतिभक्तिरता नित्यं देवपूजासु तत्परा।
एकदा ब्राह्मणोऽप्येकः क्षुधार्तो दुर्बलः प्रिये!॥ ४ ॥

भा० टी०— वह उसकी पत्नी नित्य पति की भक्ति में रत और देवपूजन में तत्पर थी। हे प्रिये! एक समय एक दुर्बल ब्राह्मण॥ ४ ॥

अन्नं च याचयामास लम्पटं प्रति वत्सले!
दुर्वचश्चावदद्देवि भिक्षुकं प्रति दुर्बलम्॥ ५ ॥

भा० टी०—हे वत्सले! उस लंपट तस्कर ब्राह्मण से अन्न माँग रहा था, तब उस दुर्बलभिक्षुक को उस ब्राह्मण ने कटु वचन बोले॥ ५ ॥

आत्मघातः कृतस्तेन दुर्बलब्राह्मणेन च।
ततो बहुतिथे काले मरणं तस्य चाभवत्॥ ६॥

भा० टी०—फिर उस दुर्बल ब्राह्मण ने अपना अपघात कर दिया अर्थात् मर गया (आत्महत्या कर दी), तत्पश्चात् बहुत-सा समय बीत गया, तब वह लंपट ब्राह्मण भी मर गया॥ ६॥

पातिव्रत्येन तत्पत्न्याः सत्यलोकं जगाम सः।
बहुवर्षसहस्राणि स्वर्गे वासोऽभवत्प्रिये!॥ ७॥

भा० टी०—तदनन्तर अपनी स्त्री के पतिव्रता धर्म के कारण वह सत्य-लोक में जाता है, हे प्रिये! वहाँ स्वर्ग-लोक में बहुत हजार वर्षों तक वास करता है॥ ७॥

ततः पुण्यक्षये जाते मर्त्यलोके स मानुषः।
पूर्वपापफलाद्देवि पुत्रकन्याविवर्जितः॥ ८॥

भा० टी०—फिर पुण्य क्षीण होने पर वह मृत्यु लोक में मनुष्य के रूप में पैदा हुआ है। हे देवि! पूर्व पाप से पुत्र-कन्या से हीन है अर्थात् उसकी कोई सन्तान नहीं होती है॥ ८॥

तदुद्देशेन मरणं ब्राह्मणस्याऽभवत् पुरा।
मद्यपानं कृतं तेन ततः कुष्ठी प्रजायते॥ ९॥

भा० टी०—क्योंकि उसके कारण ही पहले भिक्षुक ब्राह्मण ने आत्माहत्या की थी, और उसने मदिरा पान किया था जिससे उसको अब कुष्ठ है॥ ९॥

तस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि यतः पापात्प्रमुच्यते।
गायत्रीमूलमन्त्रेण लक्षं जाप्यं प्रयत्नतः॥ १०॥

भा० टी०—अब इसकी शांति को कहता हूँ कि, जिससे पाप से छूट जायेगा, यत्न से गायत्री का एक लाख तक जप करवाये॥ १०॥

दशांशहोमः कर्तव्यो विप्राणां भोजनं शतम्।
विधिवत्पूजयेद्देवि कपिलां स्वर्णभूषिताम्॥ ११॥

भा० टी०—दशांश होम करवाये, सौ ब्राह्मणों को भोजन करवाये, हे देवि! विधि पूर्वक कपिला गौ का दान करे और उसे सुवर्ण से विभूषित करे॥ ११॥

दद्याद्विप्राय तां देवि विदुषे ज्ञानरूपिणे।
अतः पुत्र प्रजायेत रोगनाशो भवेदनु॥ १२॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे भरणीनक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥

भा० टी०—हे देवि! उस गाय को विद्वान् और ज्ञानरूपी ब्राह्मण को दान में दें तो फिर उसके घर पुत्र-जन्म और रोगों का नाश होगा॥ १२॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां भाषाटीकायां नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥

॥ १० ॥

भरण्यास्तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

एको वणिग्जनो देवि काकुत्स्थनगरे शुभे!
अग्निकोणे शिवपुरो योजनार्द्धप्रमाणके ॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे देवि! एक वैश्यजन काशी से अग्निकोण में दो कोश के विस्तार में फैले हुए सुंदर काकुत्स्थ नामक नगर में ॥ १ ॥

धनाढ्यो ह्यवसद्देवि वैश्यवृत्तिरतस्सदा।
विक्रयं कुरुते देवि गुडमन्नं रसादिकम् ॥ २ ॥

भा० टी०—धन से पूर्ण हो कर वृत्ति में रत रहता हुआ सदा गुड, अन्न, रस आदि का विक्रय लेना करता हुआ रहता था ॥ २ ॥

एकस्मिन् समये देवि गुडमादाय चाध्वनि।
वृषभं भारसंपन्नं करोति स वरानने! ॥ ३ ॥

भा० टी०—हे वरानने देवि! एक समय में गुड ले कर मार्ग में गमन करते हुए वृषभ को वह भारबोझे से लाद रहा था ॥ ३ ॥

भारणे पीड़ितोऽनड्वान् स वै पथि गतः शिवे!
न ज्ञातं तेन वै पापं वृषभार्तिसमुद्भवम् ॥ ४ ॥

भा० टी०—हे शिवे! वह वृषभ मार्ग में भार से पीड़ित होता हुआ जा रहा था वृषभ की पीड़ा होने से उत्पन्न हुए पाप को उसने जाना नहीं ॥ ४ ॥

एवं बहुतिथे काले बिल्वमङ्गलके पुरे।
वैश्यस्य मरणं जातं सरय्वां सह भार्यया ॥ ५ ॥

भा० टी०—ऐसे बहुत-सा काल व्यतीत होने के बाद बिल्वमंगल नामक पुर में सरयू नदी के किनारे स्त्री सहित उसकी मृत्यु हो गयी ॥ ५ ॥

स्वर्गलोके गतौ द्वौ च तौ तु क्षेत्रप्रभावतः।
षष्टिवर्षसहस्राणि स्वर्गे भुक्तं शुभं फलम्॥ ६॥

भा० टी०—फिर पवित्र क्षेत्र के प्रभाव से वे दोनों स्वर्ग लोक को प्राप्त होते हुए वहाँ स्वर्ग लोक में उन्होंने साठ हजार वर्षों तक उत्तम फल भोगे॥ ६॥

ततः पुण्यक्षये जाते मर्त्यलोके वरानने!
अवन्तीनगरे जातौ धनधान्यसमन्वितौ॥ ७॥

भा० टी०—हे वरानने! पश्चात् पुण्य क्षीण हो गये, तब ये दोनों उज्जैनपुरी में धनधान्य से युक्त होते हुए॥ ७॥

मध्यदेशे विशालक्षि पूर्वकर्मफलेन हि।
पुत्रो न जायते देवि गर्भपातस्तथा शिवे॥ ८॥

भा० टी०—हे देवि! हे विशालाक्षि!! पूर्व-कर्म के प्रभाव से मध्यदेश में उत्पन्न हुए हैं और इनको पुत्र प्राप्त नहीं होता है हे शिवे! हे देवि!! अथवा गर्भपात होता है॥८॥

कन्यका वै प्रजायेत वारंवारं वरानने!
शरीरे च ज्वरोत्पत्तिर्मध्यमा च प्रजायते॥ ९॥

भा० टी०—अथवा वारंवार कन्या का जन्म होता है। हे वरानने! उसके शरीर में मध्यम-सा ज्वर रहता है॥ ९॥

प्रायश्चित्तं प्रवक्ष्यामि पूर्वपापविशुद्धये।
सुवर्णस्य वृषं शुभ्रं पलपञ्चमितं तथा॥ १०॥

भा० टी०—अब इसके पूर्व पाप की शुद्धि के लिए प्रायश्चित्त को कहता हूँ कि बीस तोले सुवर्ण का सुंदर (वृष) बैल बनवायें॥ १०॥

प्रतिमां कारयेद्देवि वृषमेकं विभूषितम्।
प्रपूज्य शिवमन्त्रेण वैदिकेन यथाविधि॥ ११॥

भा० टी०—हे देवि! एक बैल की मूर्ति बना उसको विभूषित कर फिर वेद के शिव मंत्र द्वारा यथार्थ विधि से उसका पूजन करे॥ ११॥

प्रदद्याद्विदुषे तस्मै ज्ञानिने शुद्धबुद्धये।
नमः शिवाय मन्त्रेण लक्ष्यजाप्यं प्रयत्नतः॥ १२॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे भरण्यास्तृतीयचरणप्रायश्चित्तक० नाम दशमोऽध्यायः॥ १०॥

भा० टी०—पश्चात् शुद्ध बुद्धि वाले ज्ञानी विद्वान् ब्राह्मण को उसका दान दे ''नमः शिवाय'' और इस मंत्र का एक लाख तक प्रयत्नपूर्वक जप करवायें॥ १२॥

रोगतो मुच्यते देवि नात्र कार्या विचारणा।

भा० टी०—हे देवि! रोग से वह छूट जाता है, इसमें कुछ विचारणीय नहीं है॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां भरण्यास्तृतीयचरणप्रायश्चित्त० नाम दशमोऽध्यायः॥ १०॥

॥ ११ ॥

अथ भरण्याश्चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ ईश्वर उवाच ॥

शृणु देवि वरारोहे नृणां कर्मविपाकजम्।
प्रवक्ष्यामि न संदेहो यदि ते श्रवणे मतिः ॥ १ ॥

उत्तरे चाप्ययोध्यायास्ततः क्रोशत्रयोपरि।
तत्र तस्थौ च भो देवि लोकशर्मेति नामतः ॥ २ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे देवि! हे वरानने!! मैं मनुष्यों के कर्म-विपाक को निसंदेह कहूंगा, यदि तुम्हारी बुद्धि सुनने में उत्सुक है तो (सुनो) अयोध्यापुरी से उत्तर दिशा में तीन कोश पर लोक शर्मा नामक ब्राह्मण रहता था॥ १ ॥ २ ॥

तस्य पत्नी शुभाङ्गी वै लीलानाम्नीति विश्रुता।
ब्राह्मणः कर्मविभ्रष्टो व्याधरूपो वरानने ॥ ३ ॥

भा० टी०—उसकी स्त्री सुंदर अंग वाली लीला नाम से प्रसिद्ध थी। हे वरानने! वह ब्राह्मण अपने कर्म से भ्रष्ट हो कर व्याध रूप हो गया॥ ३ ॥

मृगान् सबालकान् हत्वा पक्षिणो विविधानपि।
भुभुजे पत्नीयुक्तस्तु तुतोष बहुधा तदा ॥ ४ ॥

भा० टी०—शावकों सहित मृगों को मार कर तथा अनेक पक्षियों को मार कर अपनी स्त्री सहित उनका भक्षण करता हुआ बहुत प्रसन्न होता था॥ ४ ॥

तस्य पत्नी महादुष्टा मुखरा चञ्चला तथा।
परपुंसि रता नित्यं धर्मकर्मविवर्जिता ॥ ५ ॥

भा० टी०—उसकी स्त्री महादुष्टा क्रोधिनी और चंचल थी, नित्य प्रति पर-पुरुष मे रत रहा करती थी और नित्य नैमित्तिक किये जाने वाले अपने धर्म-कर्म से वर्जित थी॥ ५ ॥

एवं सर्वं वयो जातं वृद्धे सति वरानने!
मरणं तस्य वै देवि स्वपुरे सर्प्यतस्तथा ॥ ६ ॥

भा० टी०—हे वरानने! इसप्रकार उसकी संपूर्ण अवस्था बीत गई, फिर वह वृद्ध हो गया। तब हे देवि! वह अपने ही पुर में कहीं गमन करता हुआ मर गया॥ ६॥

पत्नी चैव तदा तस्य दुष्टा वै व्यभिचारिणी।
उभौ च नरके यातौ स्वकर्मवशतः प्रिये!॥ ७॥

भा० टी०—उसकी दुष्टा व्यभिचारिणी वह स्त्री भी मृत्यु को प्राप्त हो गई। हे प्रिये! फिर वे दोनों ही अपने कर्म-वश नरक को प्राप्त हो गये॥ ७॥

कुम्भीपाके महाघोरे नानानरकयातनाम्।
भुक्त्वा बहु सहस्त्राणि पुनर्यातश्च सूकरः॥ ८॥

भा० टी०—कुम्भीपाक नामक महाघोर नरक में अनेक प्रकार की पीड़ाओं को कई हजार वर्षों तक भोग कर फिर वह सूकर हो गया॥ ८॥

योनिं च शूकरीं भुक्त्वा बिडालत्वं पुनः प्रिये!
ततो बिडालयोनिं च भुक्त्वा गृध्रस्ततोऽभवत्॥ ९॥

भा० टी०—हे प्रिये! शूकर की योनि को भोग कर बिलाव योनि को भोग कर फिर गीध हो गया॥ ९॥

पुनः कर्मवशाद्देवि मानुषत्वं ततोऽभवत्।
इह लोके वरारोहे पूर्वकर्मप्रभावतः॥ १०॥

भा० टी०—हे देवि! पश्चात् वह कर्म-वश मनुष्य योनि में इस मृत्यु लोक में उत्पन्न हुआ है॥ १०॥

मृतवत्सा भवेन्नारी पुत्रश्चैव न जीवति।
बहुरोगो भवेद्देवि ज्वरेणैव प्रपीडितः॥ ११॥

भा० टी०—उसकी स्त्री की संतान नहीं जीती है (मृतवत्सा है)। पुत्र नहीं जीता है। वह बहुत रोग और ज्वर से पीड़ित है॥ ११॥

पूर्वजन्मकृतं पापमिहजन्मनि भुज्यते।
इह लोके कृतं कर्म जन्मजन्मनि भुज्यते॥ १२॥

भा० टी०—पूर्वजन्म में किया हुआ पाप इस जन्म में भोगा जाता है और इस जन्म में जो कर्म किया जाता है, वह अन्य जन्मों में भोगा जाता है॥ १२॥

अथ शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणु त्वं गिरिजे मम।
वंशगोपालमन्त्रेण लक्ष्यजाप्यं वरानने!॥ १३॥

भा० टी०—हे पार्वति! अब इसकी शांति कहूँगा सुनो, हे वरानने! संतान गोपाल-मंत्र का एक लाख जप करवायें॥ १३॥

दशांशहोमः कर्तव्यो विप्राणां भोजनं शतम्।
मन्त्रं च संप्रवक्ष्यामि येन पुत्रमवाप्स्यसि॥ १४॥

भा० टी०—दशांश होम करवायें सौ ब्राह्मणों को भोजन करायें, अब मंत्र को कहूँगा जिससे पुत्र की प्राप्ति होगी॥ १४॥

मन्त्रः—

ॐ देवकीसुत गोविन्द वासुदेव जगत्पते!
देहि मे तनयं कृष्ण त्वामहं शरणं गतः॥ १५॥

भा० टी०—मंत्र—ॐ हे देवकी-सुत! हे गोविंद! हे वासुदेव! हे जगत्पते! मुझको पुत्र दो। हे कृष्ण! मैं तुम्हारी शरण हूँ, यह मंत्र संतान गोपाल का है॥ १५॥

ततो वै समृगान् कृत्वा मृगबालान् सपक्षिणः।
स्वर्णपञ्चपलेनैव मृगान् कृत्वा सबालकान्॥ १६॥

भा० टी०—इसके अनंतर वह बच्चों सहित मृगों की और पक्षियों की मूर्ति बनवाये बच्चों सहित मृग को पांच पल सुवर्ण का बनवायें॥ १६॥

रौप्यस्यैव वरारोहे पक्षिणः पञ्च कारयेत्।
पूजनं विधिवत् कृत्वा संप्रार्थ्य परमेश्वरम्॥ १७॥

भा० टी०—हे वरारोहे! पांच पक्षी चांदी के बनवायें, पश्चात् विधिपूर्वक पूजन कर परमेश्वर की प्रार्थना करें॥ १७॥

स्त्रष्टा त्वं सर्वलोकानां सर्वकामप्रदः सताम्।
देवदेव जगन्नाथ शरणागतवत्सल!॥ १८॥

भा० टी०—हे देवों के देव! हे जगन्नाथ! शरणागतवत्सल! तुम सब लोकों को रचने वाले हो और श्रेष्ठ पुरुषों को सब मनोकामनाएँ देने वाले हो॥ १८॥

त्राहि मां कृपया देव पूर्वकर्मविपाकतः।
एवं संपूज्य देवेशं ततो विप्रं प्रपूजयेत्॥ १९॥

भा० टी०—हे देव! कृपा करके पूर्व-कर्म के विपाक से मेरी रक्षा करो। ऐसे विष्णु भगवान् का पूजन कर पश्चात् ब्राह्मण की पूजा करे॥ १९॥

सुवर्णेन वरारोहे अश्वादिवाहनेन वै।
प्रतिमामर्प्ययेद्देवि विप्राय ज्ञानरूपिणे॥ २०॥

भा० टी०—हे वरारोहे! सुवर्ण तथा अश्व आदि वाहन के साथ ब्राह्मण का पूजन करें फिर ज्ञानरूपी ब्राह्मण को उन मूर्त्तियों को भी दान दे॥ २०॥

वापिकां कूपखातं च पथि मध्ये वरानने!
प्रकरोति यदा देवि तदा पुत्रः प्रजायते।
रोगात्प्रमुच्यते देवि जीवेत् पुत्रो न संशयः॥ २१॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे भरण्याश्वतुर्थचरणप्रायश्चि० नामैकादशोऽध्यायः ॥ ११॥

भा० टी०—हे वरानने! यदि मार्ग में बावड़ी बनवाये अथवा कुआँ खुदवायें तब पुत्र उत्पन्न होता है। हे देवि! रोग से छुटकारा मिलता है और उसका पुत्र जीये इसमें संदेह नहीं॥ २१॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे भरण्याश्वतुर्थचरण० नामैकादशोऽध्यायः॥ ११॥

॥ १२ ॥

कृत्तिकाप्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ ईश्वर उवाच ॥

कृत्तिकायां वरारोहे प्रथमे चरणे तथा।
यो जायेत नरो देवि तस्य वक्ष्ये शुभाशुभम्॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहतें हैं—हे देवि! कृत्तिका नक्षत्र के प्रथम चरण में जो जन्म लेता है। हे वरारोहे! उस मनुष्य के शुभाशुभ योग को कहूँगा॥ १ ॥

ईशानेऽपि महादेवि कोसलापुरतोऽनघे!
राजपुत्रोवसत्कश्चिन्नगरे गूढसंज्ञके॥ २ ॥

भा० टी०—हे महादेवि! हे अनघे!! अयोध्यापुरी से ईशान की तरफ गूढ नाम वाले नगर में॥ २ ॥

नामतो अहिशर्मेति तस्य पत्नी कला शुभा।
धनधान्यसमायुक्तो रूपवान् मन्मथो यथा॥ ३ ॥

भा० टी०—अहिशर्मा नाम वाला ब्राह्मण धन-धान्य से युक्त और कामदेव के समान रूप वाला था। उसकी स्त्री कला नाम वाली शुभ गुणों से युक्त थी॥ ३ ॥

याति चाखेटकं नित्यं मृगीं हत्वा च गर्भिणीम्।
प्रत्यहं मृगमांसेन पोषयेत्स्वतनुं तथा॥ ४ ॥

भा० टी०—वह नित्य शिकार को जाता, तब गर्भिणी मृगी को मार कर और दिन-प्रतिदिन मृगों के मांस से अपने शरीर का पोषण करता॥ ४ ॥

शरीरे वृद्धता जाता दया तस्य न चाभवत्।
ततो वै मरणाद्देवि सती भार्य्या ततोऽभवत्॥ ५ ॥

भा० टी०—फिर उसको वृद्ध-अवस्था प्राप्त हुई और उसको दया तब भी नहीं आयी बाद में वह मृत्यु को प्राप्त हुआ। तब उसकी स्त्री उसके संग अग्नि में सती हो गई॥ ५ ॥

सत्यलोकं गतस्तेन भार्य्यायाः सुकृतेन तु।
भुक्तं कल्पमितं पुण्यं सत्यलोके वरानने!॥ ६॥

भा० टी०—वह स्त्री के सुकृत से सत्य (पुण्य) लोक को चला गया और हे वरानने! एक कल्प तक उसने सत्यलोक में पुण्य भोगा॥ ६॥

पुनः पुण्यक्षये जाते मानुषत्वमुपागतः।
पत्न्या सह ततो देवि कुले महति पूजिते॥ ७॥

भा० टी०—फिर पुण्य पूरा हाने पर तब वह मनुष्य शरीर को प्राप्त हुआ। हे देवि! उसकी स्त्री और उसने बड़े कुलों में जन्म लिया॥ ७॥

पूर्वजन्मविपाकेन मृतवत्सत्वमाप्नुयात्।
मृगीं सगर्भां हतवान् पूर्वजन्मनि सुव्रते!। ८॥

भा० टी०—पूर्व कर्मविपाक से (मृतवत्सत्व) जिसकी संतान नहीं जीती है क्योंकि हे सुव्रते! वह गर्भिणी मृगी को मारता था॥ ८॥

तेन कर्मविपाकेन मर्त्यलोके ह्यपुत्रकः।
तस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि यतः पुत्रः प्रजायते॥ ९॥

भा० टी०—जिस कर्म-विपाक से वह मृत्यु लोक में पुत्र रहित हुआ है, अब उसकी शांति को कहूँगा जिससे उसकी संतान होगी॥ ९॥

गायत्रीजातवेदाभ्यां लक्षमेकं जपं तथा।
दशांशहोमः कर्त्तव्यो विप्राणां भोजनं ततः॥ १०॥

भा० टी०—गायत्री मंत्र और ''जातवेदसे सुनवाम०'' इस मंत्र से एक लाख जप करवाये पश्चात् दशांश होम करवायें फिर ब्राह्मण को भोजन करवायें॥ १०॥

सौवर्णेन मृगीं कृत्वा मृगबालं तथैव च।
पूजयित्वा विधानेन कपिलां च ततः प्रिये!। ११॥

भा० टी०—सुवर्ण की मृगी और मृगी के बच्चे बना कर उनका विधिपूर्वक पूजन करें। हे प्रिये! पीछे कपिला गौ को॥ ११॥

प्रदद्याद्वेदविदुषे ब्राह्मणाय सुतेजसे।
हरिवंशस्य श्रवणं चण्डीपाठं शिवार्चनम्॥ १२॥

भा० टी०—वेद को जानने वाले सुंदर तेज वाले विद्वान् ब्राह्मण को दान दें, हरिवंश को सुनें और दुर्गापाठ करें तथा शिव-पूजन करवायें॥ १२॥

एवं कृत्वा विधानेन शीघ्रं पुत्रः प्रजायते।
कन्यका न भवेत्तस्य गर्भपातो न जायते॥ १३॥

भा० टी०—यदि ऐसे विधान से करें तो शीघ्र ही पुत्र उत्पन्न होता है, कन्या उत्पन्न न हो और गर्भपात भी नहीं होता है॥ १३॥

रोगत्प्रमुच्यते रोगी सर्वकामः प्रजायते।

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे कृत्तिका० प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम द्वादशोऽध्यायः॥ १२॥

भा० टी०—रोगी रोग से मुक्त हो जाता है, सब कामनाएँ सिद्ध हो जाती हैं॥१४॥

इति कर्मविपाकस० पार्वतीहरसंवादे कृत्तिका-प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम द्वादशोऽध्यायः॥ १२॥

॥ १३ ॥

कृत्तिकानक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच॥

नराणां पुण्यशीलानामिह जन्मसमुद्भवम्।
सुखं वक्ष्याम्यहं देवि पूर्वकर्मफलं यतः॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे देवि! पुण्यात्मा मनुष्यों को इस जन्म में पूर्व-कर्म के प्रभाव से सुख की प्राप्ति होती है, उसको कहता हूँ॥ १ ॥

येन दत्तं पुरादानं गोसुवर्णगजादिकम्।
तत्फलेन महादेवि इह तस्मात् सुखं भवेत्॥ २ ॥

भा० टी०—जिसने पूर्व जन्म में गौ, सुवर्ण, हाथी आदि का दान किया हो, हे महादेवि! इस जन्म में उस दान से उसको सुख मिलता है॥ २ ॥

शरीरे जन्मतः कान्तिर्लक्ष्मीवान् गुणवानपि।
सौख्यं प्रभुज्यते नित्यं पुत्रतो धनतस्तथा॥ ३ ॥

भा० टी०—जन्म से ही शरीर में कांति रहती है, लक्ष्मीवान् और गुणवान् होता है नित्य प्रति पुत्रों के और धन के सुख को भोगता है॥ ३ ॥

न रोगो जायते देवि दुःखं नैव कदाचन।
इह लोके सुखं भुक्त्वा कीर्त्तिमान् सुखमेधते॥ ४॥

भा० टी०—हे देवि! उसे रोग नहीं होता है और दुःख भी कभी नहीं होता है। इस जन्म में सुख भोग कर कीर्तिमान् हो कर सुख की वृद्धि को प्राप्त होता है॥

अथ वक्ष्याम्यहं देवि नक्षत्रे कृत्तिकाह्वये।
द्वितीयचरणे देवि पूर्वं यत् फलमुच्यते॥ ५ ॥

भा० टी०—हे देवि! अब कृत्तिका नक्षत्र के दूसरे चरण में जन्म लेने वाले के पूर्वजन्म के कर्मफलों को कहता हूँ॥ ५ ॥

कान्यकुब्जो द्विजः कश्चिदिन्द्रशर्मेति नामतः।
पत्नी रुद्रमती देवि कुशीला कलहप्रिया॥ ६ ॥

भा० टी०—कान्यकुब्ज वंश का कोई इन्द्रशर्मा नाम वाला ब्राह्मण था। हे देवि! उसकी स्त्री रुद्रमती दुष्ट स्वभाव की और कलह करने वाली थी॥ ६॥

वेदपाठरतो नित्यं षडङ्गस्य च पाठकः।
एकदा तत्र वै देशे कश्चित् क्षत्री नराधिपः॥ ७॥

भा० टी०—वह ब्राह्मण वेद-पाठ और षडंग के पाठ करने में तत्पर रहता था। एक समय उस देश में कोई क्षत्रिय राजा आया॥ ७॥

मरणे तस्य वै याते तद्विप्रस्य निमन्त्रणम्।
भुक्तं तेन तदा देवि क्षत्रियस्य क्रियासु च॥ ८॥

भा० टी०—उस राजा की मृत्यु हो गई। तब वहाँ उस ब्राह्मण का निमंत्रण हुआ हे देवि! वहाँ उस क्षत्रिय की क्रिया में उस ब्राह्मण ने भोजन किया॥ ८॥

गृहीतं तस्य वै दानं शय्या चैव गजादिकम्।
सर्वं गृह्य गृहं गत्वा भुक्तं बहुदिनं प्रिये!। ९॥

भा० टी०—उसने शय्या, हस्ती आदि दान ग्रहण किया है। प्रिये! संपूर्ण दान ग्रहण करके घर में जा कर उसने बहुत दिन तक भोगा॥ ९॥

ततो बहुगते काले तस्य विप्रस्य पञ्चता।
स यातो यमलोके वै नरके च सुदारुणे॥ १०॥

भा० टी०—फिर बहुत समय बीत जाने के बाद उस ब्राह्मण की मृत्यु हो गयी तब वह धर्मराज के लोक में प्राप्त हो कर दारुण नरक में पड़ गया॥ १०॥

भुक्तं स्वकर्मजं दुःखं युगमेकं वरानने!
गजव्याघ्रकृमेर्योनिं ततो भुङ्क्ते पृथक् पृथक्॥ ११॥

भा० टी०—हे वरानने! एक युग तक अपने कर्मों का दुःख भोगता हुआ, हाथी, व्याघ्र, कृमि—इन योनियों को अलग अलग भोग कर॥ ११॥

मनुष्यत्वं ततः प्राप्तः पूर्वकर्मविपाकतः।
पुत्रो न जायते देवि कन्यका विविधास्तथा॥ १२॥

भा० टी०—फिर पूर्व कर्मों के प्रभाव से मनुष्य योनि को प्राप्त हुआ है। हे देवि! उसके पुत्र नहीं होता है और अनेक कन्याएँ ही जन्म लेती हैं॥ १२॥

मृतवत्सा भवेन्नारी रोगाश्च विविधाः प्रिये!
शान्तिं तस्य प्रवक्ष्यामि यतः पुत्रमवाप्स्यते॥ १३॥

भा० टी०—अथवा उसकी स्त्री के संतान नहीं जीती है और उसे अनेक प्रकार के रोग रहते हैं। हे प्रिये! अब इसकी शांति को कहूँगा, जिससे पुत्र की प्राप्ति होगी ॥१३॥

गायत्रीलक्षजाप्येन त्र्यम्बकेण तथा प्रिये!
होमं च कारयामास षडंशं दानमेव च॥ १४॥

भा० टी०—हे प्रिये! गायत्री मंत्र तथा ''त्र्यंबकं यजामहे०'' इस मंत्र के एक लाख तक जप करायें, दशांश होम करायें, घर के द्रव्य में से षडंश (छठे हिस्से) धन का दान करें॥ १४॥

दशवर्णाश्च गा दद्याद्विधिवद्ब्राह्मणाय वै।
भोजयेच्छतसंख्यं च ब्राह्मणं वेदपारगम्॥ १५॥

भा० टी०—और विधिपूर्वक दश प्रकार के रंगों वाली गौओं को ब्राह्मण को दान दें, वेदपाठी सौ(१००) ब्राह्मणों को भोजन करवायें॥ १५॥

एवं कृतेन भो देवि पुत्रश्चैव प्रजायते।
रोगाणां च निवृत्तिः स्यात् पूर्वपापक्षयो भवेत्॥ १६॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे कृत्तिकानक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम त्रयोदशोऽध्यायः॥ १३॥

भा० टी०—हे देवि! ऐसा करने से पुत्र होता है, रोगों की निवृत्ति होती है और पूर्वजन्म के पाप नष्ट होतें हैं॥ १६॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे कृत्तिकानक्षत्रस्य द्वितीयचरणे प्रायश्चित्तकथनं नाम त्रयोदशोऽध्यायः॥ १३॥

॥ १४ ॥

कृत्तिकानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

तृतीयं तस्य वै देवि चरणं वदतः शृणु।
कान्यकुब्जकुले कश्चिन्नगरे सूर्यसंज्ञके ॥ १ ॥

उद्योतशर्मा विख्यातस्तस्य स्त्री गिरिजाभवत्।
वेदपाठरतो नित्यं दारिद्र्येणैव पीडितः ॥ २ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे देवि! अब कृत्तिका नक्षत्र के तीसरे चरण के कमल को सुनो। सूर्यपुर में कान्यकुब्ज कुल में कोई उद्योतशर्मा नाम वाला ब्राह्मण हुआ, जिसकी गिरिजा नामक स्त्री हुई। वह ब्राह्मण नित्यप्रति वेदपाठ करने में रहता रत था और दारिद्र्य से पीड़ित था॥ १ ॥ २ ॥

कर्कशा भामिनी तस्य निष्ठुरं वदती स्मृता।
एकदा सूर्यग्रहणे तैलकारस्तदागतः ॥ २ ॥

भा० टी०—उसकी स्त्री कर्कशा (कठोर बोलने वाली) थी, उसको क्रूर वचन बोलती थी। एक समय सूर्य ग्रहण में कोई तैलकार (तेली) वहाँ आया॥ ३ ॥

गङ्गामध्ये ततो दानं तस्मै विप्राय वै शिवे!
प्रददौ लक्षसंख्यां वै स्वर्णमुद्रां तु दक्षिणाम् ॥ ४ ॥

भा० टी०—हे शिवे! तदनन्तर उस तैलकार ने उस ब्राह्मण को गंगाजी के मध्य में लाख मोंहरों का दान दिया॥ ४ ॥

प्रतिगृह्य ततो दानं गृहं गत्वा द्विजस्तदा।
व्ययं करोति स्म तदा भार्यापुत्रेण चैव हि ॥ ५ ॥

भा० टी०—तब वह ब्राह्मण उस दान को ग्रहण कर अपने घर मे जाकर दिन प्रतिदिन स्त्री-पुत्र सहित व्यय करता गया॥ ५ ॥

वेदपाठं ततस्त्यक्त्वा प्रत्यहं ससुखं प्रिये!
मरणं वृद्धसमये गृहे शय्योपरि स्थिते ॥ ६ ॥

भा० टी०—हे शिवे! पश्चात् वह वेदपाठ को त्याग कर दिन प्रतिदिन सुख को भोगता हुआ फिर वृद्ध अवस्था में घर में खाट पर पड़े-पड़े उसकी मृत्यु हो गई॥ ६॥

स्वर्णमध्ये च दानं वै न दत्तं गिरिनन्दिनि!
स गतो नरके घोरे यमराजेन प्रेरितः॥ ७॥

भा० टी०—हे गिरिजे! उसने सुवर्ण-मोह से कुछ भी दान नहीं किया था, इसलिये वह के द्वारा घोर नरक में डाला गया॥ ७॥

भुङ्क्ते नरकजं दुःखं स्त्रीपुत्रेण च संयुतः।
युगमेकं वरारोहे प्रेतत्वं काकतां गतः॥ ८॥

भा० टी०—हे वरारोहे! स्त्री-पुत्र से संयुक्त वह वहाँ नरक के दुःखों को एक युग तक भोगता हुआ फिर काग (कौआ) हुआ॥ ८॥

ततः शृगालयोनिं च मानुषत्वं ततो गतः।
पूर्वजन्मकृतं कर्म इह लोके प्रभुज्यते॥ ९॥

भा० टी०—पश्चात् गीदड़ की योनि को प्राप्त हो कर फिर मनुष्य योनि को प्राप्त हुआ है क्योंकि, पूर्वजन्म में किया हुआ कर्म इस लोक में भोगा जाता है॥ ९॥

पाठयामास वै वेदान् ब्राह्मणेभ्यो वरानने!
तत्संचितफलाद्देवि महदैश्वर्यमाप्नुयात्॥ १०॥

भा० टी०—हे देवि! वह जो ब्राह्मणों को वेद पढ़ाता था, उस कर्म-फल से वह महान् ऐश्वर्यवान् हुआ है॥ १०॥

भार्या मृता ततः पुत्रो द्वितीया च विवाहिता।
शरीरे बहवो रोगाः सुखं तस्य न जायते॥ ११॥

भा० टी०—स्त्री मर गई, फिर पुत्र मर गया। पश्चात् उसने दूसरी स्त्री से विवाह किया है, इसके शरीर में बहुत से रोग हैं, उसे सुख नहीं मिलता है॥ ११॥

वृद्धे सति वरारोहे पुत्रः शत्रुर्भवेदिति।
मृतवत्सा भवेन्नारी पूर्वजन्मविपाकतः॥ १२॥

भा० टी०—हे वरारोहे! वृद्ध-अवस्था में उसका पुत्र ही अत्यंत शत्रु हो जाता है अथवा पूर्वजन्म के कर्म से उसकी स्त्री के संतान ही नहीं जीती॥ १२॥

तस्य पुण्यमहं वक्ष्ये यतो रोगो निवर्तते।
पुनः पुत्रो भवेद्देवि कन्यका नैव जायते॥ १३॥

भा० टी०—उसके पुण्य को मैं कहूँगा, जिससे रोग-निवृत्त हो कर फिर पुत्र उत्पन्न हो, हे देवि! कन्या नहीं होंगी॥ १३॥

जातवेदादिमन्त्रेण जपं वै कारयेद्बुधः।
लक्षत्रयं प्रयत्नेन ततो होमं तिलादिभिः॥ १४॥

भा० टी०—''जातवेदसे सुनवाम०'' इस मंत्र का बुद्धिमान् जन यत्न से तीन लाख तक जप करायें, पश्चात् तिल आदि से होम करवायें॥ १४॥

चतुरस्त्रे शुभे कुण्डे हरिवंशश्रवणं ततः।
भूदानं विधिवत्कुर्याच्छायां पात्राय दापयेत्॥ १५॥

भा० टी०—चौकोर शुभ कुंड में होम करायें, हरिवंशपुराण सुनें, पृथ्वी (भूमि) का दान करें, सत्पात्र ब्राह्मण को विधिपूर्वक शय्या का दान दें॥ १५॥

एवं कृते न संदेहो रोगनाशो भविष्यति।
पुत्रश्च जायते देवि नात्र कार्य्या विचारणा॥ १६॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे कृत्तिकानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम चतुर्दशोऽध्यायः॥ १४॥

भा० टी०—ऐसा करने से निश्चय ही रोग का नाश होगा, दे देवि! पुत्र भी उत्पन्न होगा। इसमें कुछ भी सन्देहस्पद नहीं है॥ १६॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां कृत्तिका० तृतीयचर० नाम चतुर्दशोऽध्यायः॥१४॥

॥ १५ ॥

कृत्तिकानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

कान्यकुब्जो द्विजः कश्चिन्नर्मदादक्षिणे तटे।
माहिष्मत्यां वसत्येको द्विजः परमवैष्णवः॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—नर्मदा नदी के दक्षिण किनारे पर माहिष्मती नामक नगरी में परम वैष्णव कोई ब्राह्मण रहता था॥ १ ॥

नामतो योधशर्मेति तस्य भार्या तु दानवी।
प्रत्यहं वैश्यवृत्तिस्तु विक्रयं चाकरोत्सदा॥ २ ॥

भा० टी०—योधशर्मा नाम वाले उस ब्राह्मण की स्त्री दानवी नाम वाली थी जो प्रतिदिन वैश्य-वृत्ति द्वारा सदा शरीर को बेचने का व्यवहार करती थी॥ २ ॥

तत्र वैश्य उवासैको धनधान्यसमन्वितः।
वैश्यतस्तेन विप्रेण स्वर्णं नीतमृणं बहु॥ ३ ॥

भा० टी०—वहाँ धनाढ्य एक वैश्य रहता था, उस वैश्य के पास से उस ब्राह्मण ने बहुत सा सुवर्ण उधार में लिया॥ ३ ॥

ततो बहुतिथे काले स विप्रो मृत्युमागतः।
ऋणं तस्मै न दत्तं वै वैश्याय तु स्वकर्मणे॥ ४ ॥

भा० टी०—फिर बहुत-सा समय बीतने के बाद तब वह ब्राह्मण मृत्यु को प्राप्त हो गया और अपने काम आने वाले उस वैश्य को वह ऋण, दान नहीं दिया॥ ४ ॥

मरणे सति विप्रस्तु रौरवं नरकं गतः।
वैश्यकर्म कृतं तेन स्वकर्म परिमुच्यते॥ ५ ॥

भा० टी०—वह ब्राह्मण मर गया, तब रौरव नरक को प्राप्त हुआ, क्योंकि उसने वैश्य कर्म किया, अपने धर्म से भ्रष्ट रहा था॥ ५ ॥

विंशद्वर्षसहस्राणि यमलोके वसत्यसौ।
नरकान्निःसृतो देवि यातो वृषभशूकरौ॥ ६ ॥

भा० टी०—वह बीस हजार वर्षों तक धर्मराज के लोक में रहा था। हे देवि! नरक से निकल कर बैल और शूकर की योनि को प्राप्त हुआ॥ ६॥

योनिद्वयफलं भुक्त्वा मनुष्यत्वमवाप्नुयात्।
धनधान्यसमायुक्तस्तत्पुण्यस्य प्रभावतः॥ ७॥

भा० टी०—इन दोनों योनियों के फल को भोग कर मनुष्य योनि को प्राप्त हुआ है, जिस पुण्य के प्रभाव से धनधान्य से संयुक्त है॥ ७॥

ऋणसंबन्धतो देवि वैश्यः पुत्रत्वमागतः।
प्रत्यहं तस्य वै द्रव्यं व्ययं कुर्याद्दिने दिने॥ ८॥

भा० टी०—हे देवि! ऋण के संबंध से वह वैश्य उसके पुत्र के रूप में हुआ है और दिन प्रतिदिन जिस के द्रव्य को खर्च करता रहता है॥ ८॥

मद्यवेश्याप्रदानेन धनं सर्वं व्ययं कृतम्।
यदा पुत्रः समुत्पन्नो युवा तस्य भवेत्प्रिये॥ ९॥

भा० टी०—मदिरापान के लिए और वैश्या को देने से संपूर्ण धन खर्च दिया। हे प्रिये! जब उसका यह पुत्र जवान हुआ॥ ९॥

तदा मृत्युमवाप्नोति शोकं दत्त्वा तयोस्तदा।
पुनः पुत्रो न जातो वै पूर्वजन्मविपाकतः॥ १०॥

भा० टी०—तब इन दोनों स्त्री-पुरुषों को शोक देकर मर गया है। पूर्वजन्म के कर्म विपाक से फिर इनको पुत्र प्राप्त नहीं हुआ है॥ १०॥

प्रायश्चित्तं प्रवक्ष्यामि पूर्वपापविशुद्धये।
गायत्री लक्षजाप्येन तदर्थं वाटिकां पथि॥ ११॥

भा० टी०—पूर्व पाप की शुद्धि के लिए प्रायश्चित्त कहूँगा गायत्री का एक लाख तक जप करायें, पाप की शुद्धि के लिए मार्ग में धर्मशाला बनवायें॥ ११॥

कूपं प्रयत्नतः कुर्यात्तडागं विधिपूर्वकम्।
होमं वै कारयेच्चैव विधिपूर्वं वरानने!॥ १२॥

भा० टी०—यत्न से विधिपूर्वक कूआँ अथवा तालाब बनवायें। हे वरानने! विधिपूर्वक होम करवायें॥ १२॥

पलपञ्चसुवर्णस्य दानं दद्याद्विशेषतः।
दशवर्णाः प्रदातव्याः स्वर्णयुक्ताः सहाम्बराः॥ १३॥

भा० टी०—विशेष करके पाँच पल, बीस तोले सुवर्ण का दान करें दश प्रकार के वर्णों वाली सुवर्ण और वस्त्रों से युक्त गौओं का दान करें॥ १३॥

भोजयेच्छतविप्रांस्तु यथाशक्ति सदक्षिणान्।
एवं कृते न संदेहो रोगनाशो भवेदनु॥ १४॥

भा० टी०—सौ ब्राह्मणों को भोजन करवायें, शक्ति के अनुसार दक्षिणा दें ऐसा करने से वात-रोग का नाश होगा, इसमें संदेह नहीं॥ १४॥

पुत्रपौत्रा विवर्द्धन्ते मम वाक्यं न चाऽन्यथा॥ १५॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे कृत्तिकानक्षत्रस्य चतुर्थचरणे प्रायश्चित्तकथनं नाम पञ्चदशोऽध्यायः॥ १५॥

भा० टी०—उसके पुत्र-पौत्र बढेंगे, यह मेरा वाक्य अन्यथा नहीं है॥ १५॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां भाषाटीकायां कृत्तिकानक्षत्रस्य चतुर्थचरणे प्रायश्चित्तकथनं नाम पंचदशोऽध्यायः॥ १५॥

॥ १६ ॥

रोहिणीनक्षत्रस्य प्रथमचरणकथनम्

॥ महादेव उवाच॥

अथातः संप्रवक्ष्यामि ब्रह्मनक्षत्रजं फलम्।
रोहिण्याः प्रथमे पादे यस्य जन्म च जायते॥ १॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—अब रोहिणी नक्षत्र में जन्म लेने वाले के कर्म-फल को कहूँगा—रोहिणी के प्रथम चरण में जिसका जन्म हो॥ १॥

तस्य कर्म पुरा देवि संचितं संब्रवीम्यहम्।
अन्तर्वेद्यां द्विजः कश्चिद्भोपनामावसत्प्रिये!॥ २॥

भा० टी०—हे देवि! उसके पूर्व संचित कर्म को मैं कहता हूँ। हे प्रिये! गंगा-यमुना के मध्य देश में कोई भोप नाम वाला ब्राह्मण रहता था॥ २॥

ब्रह्मकर्मविहीनश्च चौरकर्मरतः सदा।
सार्द्धं चौरेण भो देवि बहु द्रव्यमुपार्जितम्॥ ३॥

भा० टी०—हे देवि! वह ब्राह्मण के कर्म से विहीन था और सदा चोरी के काम में तत्पर रहता था। हे देवि! उसने चोरों के संग मिल कर बहुत-सा द्रव्य इकट्ठा किया॥३॥

परस्त्रीलम्पटो देवि स्वां भार्यां परिमुच्य च।
एवं बहुगते काले कालवश्यस्ततोऽभवत्॥ ४॥

भा० टी०—हे देवि! वह अपनी स्त्री को त्याग कर अन्य स्त्री में अभिलाषा रखता। ऐसे बहुता सा काल बीत चुका, तब वह काल के वश हो गया॥ ४॥

यमः कर्मप्रभावेण नरके नाम कर्दमे।
वासयामास भो देवि षष्टिवर्षसहस्त्रकम्॥ ५॥

भा० टी०—हे देवि! धर्मराज ने उसके कर्मों के प्रभाव से उसे कर्दम नामक नरक में साठ हजार वर्षों तक वास कराया॥ ५॥

नरकान्निःसृतो देवि कुक्कुटत्वं प्रजायते।
ततो यातो महादेवि नरयोनिं च दुर्लभाम्॥ ६॥

भा० टी०—हे देवि! नरक से निकल कर वह मुरगा हुआ। हे महादेवि! पीछे दुर्लभ इस मनुष्य योनि को प्राप्त हुआ है॥ ६॥

पाण्डुरोगेण संयुक्तः पुत्रो नैव प्रजायते।
वेश्याः कन्याः प्रजायन्ते पुत्रस्य मरणं भवेत्॥ ७॥

भा० टी०—वह पांडुरोग (पीलिया रोग) से युक्त है, इसके पुत्र नहीं होता है और उसने जिन वेश्याओं के संग रमण किया था, वे वेश्याएँ इसकी पुत्रियाँ हो गयी हैं। पुत्र होके मर जाता है॥ ७॥

तस्योपदानं वक्ष्यामि तत्सर्वं शृणु मे प्रिये!
ॐ नमः शिवाय मन्त्रेण लक्षजाप्यं च कारयेत्॥ ८॥

भा० टी०—अब इसके उपाय को कहता हूँ—हे प्रिये! वह सब सुनो 'ॐ नमः शिवाय' इस मंत्र का एक लाख तक जप करायें॥ ८॥

पार्थिवं तिलपिष्टेन गोमयेन तथा प्रिये!
पूजयामास विधिवद्भक्तियुक्तेन चेतसा॥ ९॥

भा० टी०—हे प्रिये! तिल की पीठी से अथवा गोबर से पार्थिव शिव बना कर पश्चात् विधिपूर्वक भक्ति युक्त चित्त से उसका पूजन करें। हे देवि! होम करायें। पश्चात् घर के द्रव्य का छठे हिस्से को दान करें॥ ९॥

होमं वै कारयेद्देवि षडंशं दक्षिणां ततः।
आचार्याय सुवर्णं च पूर्वपापविशुद्धये॥ १०॥

भा० टी०—हवन करने के बाद दक्षिणा देने के पश्चात् आचार्य को पूर्वपाप की शुद्धि के लिये सुवर्ण का दान करें॥१०॥

कूपं खातं ततो देवि वाटिकां चैव कारयेत्।
एवं कृते न संदेहो रोगनाशो भवेदनु॥ ११॥

भा० टी०— हे देवि! कुआँ खुदवायें, धर्मशाला बनवायें, ऐसा करने से निश्चय ही बाद में रोग का नाश होगा॥ ११॥

कन्यका न भवेद्देवि पुत्रश्चैव प्रजायते।
मृतवत्सा लभेत्पुत्रं चिरंजीविनमुत्तमम्॥ १२॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे रोहिणीनक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम षोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥

भा० टी०—हे देवि! उसकी कन्या न हो, पुत्र हो, जिस स्त्री के संतान नहीं जीती हो वह दीर्घ आयु वाले पुत्र को जन्म देती है॥ १२॥

इति कर्मविपाकसं० पार्वतीहरसंवादे रोहिणी० द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम षोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥

॥ १७ ॥

रोहिणीनक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

द्वितीयचरणं देवि रोहिण्याः शृणु विस्तरम्।
गङ्गाया उत्तरे कूले पुरं वैमानिकं शुभम् ॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं— हे देवि! रोहिणी के दूसरे चरण को विस्तार पूर्वक सुनो। गंगा के उत्तर किनारे पर सुंदर वैमानिक नामक नगर था ॥ १ ॥

वासुदेवश्च नाम्ना हि ब्राह्मणो वेदपारगः।
लीलावती पवित्रा च तस्य पत्नी शुभा तथा ॥ २ ॥

भा० टी०—वहाँ वासुदेव नामक वेदपाठी ब्राह्मण रहता था, लीलावती नामक उसकी स्त्री पवित्र रहने वाली सुंदर महिला थी ॥ २ ॥

युवती रूपसंपन्ना स्वैरिणी च सदा प्रिये!
बहु द्रव्यतया लब्धं परपुंसप्रसंगतः ॥ ३ ॥

भा० टी०—वह जवान और रूप-यौवन से युक्त थी। सदा इच्छापूर्वक विचरती थी। हे प्रिये! उसने पर-पुरुष के संग से बहुत-सा द्रव्य संचित किया ॥ ३ ॥

पापादुपार्जितं द्रव्यं भुज्यते पतिना सह।
गङ्गायां मरणं तस्य विप्रस्य भार्यया सह ॥ ४ ॥

भा० टी०—उसने पाप से संचित किया हुआ द्रव्य पति के संग भोगा। फिर स्त्री सहित उस ब्राह्मण की मृत्यु गंगा में हुई ॥ ४ ॥

स्वर्गवासो हि दम्पत्त्योः षष्टिवर्षसहस्त्रकम्।
ततः पुण्यक्षये जाते मर्त्यलोके वरानने! ॥ ५ ॥

भा० टी०—इसलिये साठ हजार वर्षों तक उन दोनों स्त्री-पुरुष का स्वर्ग में वास रहा। हे वरानने! पश्चात् पुण्य क्षीण होने पर वे मृत्यु लोक में आये ॥ ५ ॥

धनधान्यसमायुक्तो धर्मे मतिरथाधिका।
पुत्राश्च बहवस्तेषां मरणं चैव जायते॥ ६॥

भा० टी०—वह धनधान्य से समायुक्त, धर्म में अधिक बुद्धि रखने वाला हुआ। उसके बहुत से पुत्र हुए और उनका मरण हो गया॥ ६॥

कन्यका विविधास्तासां मृत्युश्चैव प्रजायते।
पुनश्च तस्य हानिश्च बहुरोगः प्रजायते॥ ७॥

भा० टी०—उसकी अनेक कन्याएँ हुईं, उनकी भी मृत्यु हो गई, फिर इसकी हानि होती है और उसको अनेक रोग लग गये॥ ७॥

तस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि यत्कृतं पूर्वजन्मनि।
त्र्यम्बकेति च मन्त्रेण लक्षजाप्यं च कारयेत्॥ ८॥

भा० टी०—उसने जो पूर्वजन्म में कर्म किये हैं, उनकी शांति को कहता हूँ, 'त्र्यम्बकं...' इस मन्त्र का एक लाख तक जप करायें॥ ८॥

देवस्य प्रतिमां कृत्वा पूजयेच्चैव शास्त्रतः।
सुवर्णस्य शिवं कुर्यात् पलपञ्चप्रमाणकम्॥ ९॥

भा० टी०—महादेव की मूर्ति बनाकर शास्त्र के अनुसार पूजन करें और पांच पल प्रमाण सोने की शिव जी की मूर्ति बनवायें॥ ९॥

धूपैर्दीपैश्च नैवेद्यैर्मन्त्रेणानेन पूजयेत्।
ॐ ह्रौं ह्रीं जूं सः हराय नमः इति प्रतिमास्थापनम्।
रौप्यपात्रे ॐ ह्रीं ह्रौं जूं सः महेश्वराय नमः।
इति धूपकरणानि संगृह्य स्थापयेत्।
ॐ ह्रौं ह्रीं जूं सः पिनाकधृते नमः इति स्पृश्यावाहनं च।
आवाहये महादेव देवदेव सनातन।
इमां पूजां गृहाण त्वं मम पापं व्यपोहतु॥
ॐ ह्रौं ह्रीं जूं सः यं रं लं वं शं षं सं हं क्षं सोहं शङ्करस्य सर्वेन्द्रिय-वाङ्मनश्चक्षुःश्रोत्रघ्राणइहागत्यइहजीवस्थितिं सुखं चिरं तिष्ठन्तु।
इति प्राणप्रतिष्ठां विधाय शिवं ध्यायन् पूजयेत्।
ॐ ह्रौं ह्रीं जूं सः पशुपतये नमः इति पञ्चामृतेन स्नानम्।
ॐ ह्रौं ह्रीं जूं सः शिवाय नमः इति चन्दनादिभिः पूजनम्।
ॐ ह्रौं ह्रीं जूं सः महादेवाय नमः। इति विसर्जनम्।
गोदानं च ततः कुर्यात्कृष्णां च कपिलां ततः।
विप्राय: वेदविदुषे सुवर्णं दक्षिणां ततः॥ १०॥

प्रदक्षिणां ततः कुर्याद्विप्रस्येशानरूपिणः।
शतसंख्यद्विजांश्चैव भोजयित्वा विसर्जयेत्॥ ११॥

भा० टी०—धूप, दीप, नैवेद्य इत्यादि करके इस मंत्र से पूजें—ॐ ह्रौं ह्रीं जूं सः हर के लिए नमस्कार है। ऐसा कहकर रूपा के पात्र में मूर्ति को स्थापित करें ॐ ह्रौं ह्रीं जूं सः महेश्वर के लिए नमस्कार है ऐसा कहकर धूप पात्र को उठा कर स्थापित करें ॐ ह्रौं ह्रीं जूं सः पिनाकधारी को नमस्कार है ऐसा कहकर स्पर्श करके आवाहन करें। हे देवों के देव महादेव! सनातन तुम इस पूजा को ग्रहण करो मेरे पापों को दूर करो। तत्पश्चात् ॐ ह्रौं ह्रीं जूं सः यं रं लं वं शं षं सं हं क्षं सोहं शंकरस्य सर्वेन्द्रिय वाङ्मनश्चक्षुः श्रोत्रघ्राण-इहागत्य-इह जीव स्थितिं सुखं चिरं तिष्ठन्तु, ऐसा उच्चारण कर, प्राण-प्रतिष्ठा कर शिवजी का ध्यान करते हुए पूजन करें। ॐ ह्रौं ह्रीं जूं सः पशुपतये नमः ऐसा कहकर पंचामृत से स्नान करायें। ॐ ह्रौं ह्रीं जूं सः इस मंत्र से चंदनादि दे करके पूजा करें ॐ ह्रौं ह्रीं जूं सः महादेवाय नमः ऐसा कहकर विसर्जन करें, फिर गोदान करें। काली अथवा कपिला गौ को वेदपाठी ब्राह्मण को दें। सुवर्ण की दक्षिणा दें पश्चात्। शिव रूपी ब्राह्मण की प्रदक्षिणा करें तब १०० ब्राह्मणों को भोजन करवाकर उनका विसर्जन करें॥ १०॥ ११॥

प्रयागे मकरे माघे पत्न्या सह वरानने!
स्नानं कुर्याच्च भो देवि व्रतमेकादशीं चरेत्॥ १२॥

भा० टी०—हे वरानने! मकर संक्रांति युक्त माघ महीने में प्रयागजी में स्नान करें। दे देवि! एकाददी का व्रत करें॥ १२॥

एवं कृते न संदेहो रोगनाशश्च जायते।
पुत्रं चापि लभेद्देवि चिरंजीविनमुत्तमम्॥ १३॥

भा० टी०—ऐसा करने से निःसंदेह रोग का नाश होता है। हे देवि! वह बहुत काल तक जीने वाले पुत्र को प्राप्त करता है इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है॥ १३॥

यद्येवं न प्रकुरुते सप्तजन्मस्वपुत्रकः।

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे रोहिणीनक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नामसप्तदशोऽध्यायः॥ १७॥

भा० टी०—यदि ऐसा नहीं करे तो सात जन्म तक पुत्र की प्राप्ति नहीं होती है॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिता० भाषाटीकायां पार्वतीह० रोहिणी० द्वितीयचरणप्राय० नाम सप्तदशोऽध्यायः॥ १७॥

॥ १८ ॥

रोहिणीतृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनम्

शिव उवाच॥

गोमत्या उत्तरे कूले क्रोशद्वयप्रमाणतः।
विष्णुदासेति विख्यातो देवीपुत्रो वरानने!। १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे वरानने! गोमती नदी के उत्तर तट से दो कोस पर विष्णु दास नाम का विख्यात देवीपुत्र संज्ञक मनुष्य रहता था॥ १ ॥

शंकरे वै पुरे रम्ये तस्य भार्या च सुन्दरी।
कर्कशा कुलटा सा वै पतिविद्वेषकारिणी॥ २ ॥

भा० टी०—वह रमणीक शंकरपुर नामक नगर में रहता था और उसकी स्त्री सुंदरी नाम वाली कर्कशा और जारिणी थी, इसलिए वह पति से विद्वेष करती॥ २ ॥

शुश्रूषां कुरुते नैव श्वश्रूणां च वरानने!
स्वधर्मनिरतो नित्यं शिवभक्तिपरायणः॥ ३ ॥

भा० टी०—हे वरानने! वह अपने सास की सेवा नहीं करती थी और वह विष्णुदास नित्य अपने धर्म में तत्पर शिवजी की भक्ति में तल्लीन रहता था॥ ३ ॥

कृषिं वै सोकरोच्चैव विप्राणां चैव सेवकः।
पित्रोश्च परमो दासः सदा च प्रियभाषणः॥ ४ ॥

भा० टी०—खेती करता हुआ ब्राह्मणों का सेवक वह माता-पिता का परम दास तथा प्रिय बोलने वाला था॥ ४ ॥

एतस्मिन्नगरे देवि व्रती कश्चित्समागतः।
भिक्षार्थमागतो द्वारे तया भिक्षा ददे न च॥ ५ ॥

भा० टी०—हे देवि! इस नगर में कोई ब्रह्मचारी भिक्षा के लिए उस विष्णुदास के द्वार पर आ गया, तब उसकी स्त्री ने उसे भिक्षा नहीं दी॥५ ॥

अपभ्रंशमवोचत्सा भिक्षुकं प्रति सुन्दरी।
विष्णुदासो गृहे नासीत्तद्दिने कुत्रचिद्गतः॥ ६ ॥

भा० टी०—वह सुन्दरी नामक स्त्री ने उस भिक्षुक को दुष्ट वचन बोले। उस दिन विष्णुदास घर पर नहीं था वहा कहीं गया था॥ ६॥

एवं बहुगते काले तस्य मृत्युर्बभूव ह।
भक्तत्वान् मम भो देवि यक्षलोके गतस्स वै॥ ७॥

भा० टी०—ऐसे बहुत-सा समय बीत चुका, तब उस विष्णुदास की मृत्यु हो गई। हे देवि! वह मेरा भक्त था इस लिये यक्ष लोक को प्राप्त हुआ॥ ७॥

त्रिंशद्वर्षसहस्राणि यक्षेण यह भोगवान्।
तस्य भार्या मृता क्रूरा श्वश्रूणां दुःखदायिनी॥ ८॥

भा० टी०—वह तीस हजार वर्षों तक यक्ष अर्थात् कुबेर के लोक में भोग भोगता रहा जब सास-श्वशूर को दुःख देने वाली वह उसकी स्त्री भी मरती है॥ ८॥

सा गता नरके घोरे रौरवे नाम्नि भामिनि!
भुक्त्वा नरकजं दुःखं पुनर्व्याघ्री बभूवह॥ ९॥

भा० टी०—हे भामिनि! वह रौरव नामक नरक को प्राप्त होती हुई नरक के दुःखों को भोग कर बाद में व्याघ्री हो गयी॥ ९॥

पुनः शृगाली वै जाता मानुषी च ततोऽभवत्।
पुनर्विवाहिता सा वै मर्त्यलोके वरानने!॥ १०॥

भा० टी०—फिर शृगाली 'गीदड़ी' हुई। पीछे अब स्त्री हुई है। हे वरानने! इस मृत्यु लोक में फिर वही उसके संग विवाही गई है॥ १०॥

वन्ध्या चैव विशालाक्षि पूर्वजन्मविपाकतः।
रोगो बहुभवेद्देवि सुखं नैवोपजायते॥ ११॥

भा० टी०—हे विशालाक्षि! पूर्वजन्म के विपाक से वह वंध्या भी है। हे देवि! उसको बहुत सा रोग हैं उसे सुख नहीं मिलता है॥ ११॥

तस्याः पुण्यं प्रवक्ष्यामि पूर्वपापप्रणाशनम्।
स्वपतिं प्रत्यहं माघे स्नापयेदुष्णवारिणा॥ १२॥

भा० टी०—अब मैं उसके पूर्व पापों को नष्ट करने वाले उसके लिए पुण्य कर्मों को कहता हूँ प्रतिदिन माघ महीने में गरमजल से अपने पति को स्नान कराये॥ १२॥

श्वश्रूचरणयोः प्रातर्नमस्कुर्यात् प्रयत्नतः।
अलाबूं नैवखादेत्तु षोडशाब्दप्रमाणतः॥ १३॥

भा० टी०—प्रतिदिन प्रात:काल सास के चरणों में यत्न पूर्वक प्रणाम करे और सोलह वर्षों तक तूंबी का भक्षण नहीं करे॥ १३॥

माघे नियमतो देवि पतिना सह सुव्रते!
स्नानं प्रतिदिनं कुर्याद्दीपं दद्याद्यथाविधि॥ १४॥

भा० टी०—दे देवि! माघ के महीने में नियम से हमेशा पति के संग स्नान करे। हे सुव्रते! यथार्थविधि से दीपदान भी करे॥ १४॥

ततः कृत्वा सुवर्णस्य वृक्षं वै द्विपलस्य च।
रौप्यां दशपलां देवि वेदीं शुभ्रां च कारयेत्॥ १५॥

भा० टी०—फिर दो पल सुवर्ण अर्थात् आठ तोले सुवर्ण का वृक्ष बनाये और दश पल प्रमाण चांदी की वेदी बनाये॥ १५॥

वृक्षं तस्यां च संस्थाप्य कल्पवृक्षस्वरूपिणम्।
पूजयित्वा ततो देवं शङ्खचक्रगदाधरम्॥ १६॥

भा० टी०—उस वेदी पर कल्पवृक्षरूपी उस वृक्ष को स्थापित कर शंख-चक्र गदा-धारी विष्णुदेव की पूजा करे॥ १६॥

सगणं देवदेवेशं वृषकेतुं वरप्रदम्।
ततो वै पूजयेद्देवि विधिवच्चारुरूपिणम्॥ १७॥

भा० टी०—हे देवि! तदनन्तर विधिपूर्वक सुंदर रूप वाले वरदायक महादेव को (सगण) गणों सहित पूजे॥ १७॥

वस्त्रकाञ्चनकेयूरैः कुण्डलाभ्यां विशेषतः।
तद्वृक्षं वेदिकायुक्तं तस्मै विप्राय दापयेत्॥ १८॥

भा० टी०—वस्त्र, सुवर्ण के आभूषण, कुंडल इन से युक्त किये हुए उस वृक्ष को वेदी समेत उस आचार्य ब्राह्मण को दान कर दें॥ १८॥

अन्यान्विप्रान् वरारोहे भोजयेद्विविधै रसैः।
पायसैर्मोदकैः शुभ्रैः षट्षष्टिप्रमितान्प्रिये!॥ १९॥

भा० टी०—हे वरारोहे! हे प्रिये!! अन्य छियासठ ब्राह्मणों को अनेक प्रकार के रसों से बनी हुई खीर, सुंदर लड्डू आदि का भोजन कराये॥ १९॥

ततो गां कपिलां दद्यात्स्वर्णशृङ्गीं सनूपुराम्।
सप्तम्यां रवियुक्तायां व्रतं कुर्यान्मम प्रिये!॥ २०॥

भा० टी०—फिर सुवर्ण की सींगड़ी और खुरों के आभूषणों से युक्त की हुई कपिला गौ का दान करे। हे प्रिये! रविवार सप्तमी के दिन मेरा व्रत करे॥ २०॥

गोपालस्य च मन्त्रेण लक्षजाप्यं च कारयेत्।
हवनं तद्दशांशेन मार्जनं तर्पणं तथा॥ २१॥

भा० टी०—गोपाल देव के मंत्र से एक लाख जप कराये तद्दशांश होम, तद्दशांश तर्पण और मार्जन कराये॥ २१॥

एवं कृते न संदेहो शीघ्रं पुत्रमवाप्नुयात्।
कन्यका नैव जायन्ते रोगश्चैव निवर्त्तते॥ २२॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्व० रोहिणी० तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नामाष्टादशोऽध्यायः॥ १८॥

भा० टी०—ऐसा करने से निस्संदेह पुत्र उत्पन्न होता है, कन्या नहीं जन्मती। रोग निवृत्त होते हैं॥ २२॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे रोहि० तृतीय० नाम अष्टादशोऽध्यायः॥ १८॥

॥ १९ ॥

रोहिणीनक्षत्रचतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

रोहिण्याश्चरणं देवि चतुर्थं साम्प्रतं शृणु।
यत्कृतं संचितं पूर्वमिह जन्मनि तत्फलम्॥ १॥

भा० टी०—हे देवि! अब रोहिणी के चौथे चरण को सुनो, जो पूर्वसंचित कर्म किये हैं, वे इस जन्म में भोगे जाते हैं॥ १॥

बुद्धिशर्मा द्विजः कश्चिदन्तर्वेद्यां बभूव ह।
पुरोहितो महाभ्रष्टः परपाके सदा रतः॥ २॥

भा० टी०—कोई बुद्धिशर्मा नामक ब्राह्मण गंगा-यमुना के मध्य देश में रहता था। वह पुरोहित पदवी वाला और महाभ्रष्ट था सदा अन्यों की रसोई बनाया करता था॥२॥

भार्या पररता तस्य चञ्चला चपला सदा।
धनं च संचितं तेन प्रतिग्रहप्रसङ्गतः॥ ३॥

भा० टी०—उसकी स्त्री पर-पुरुष-रत और चंचल तथा चपला थी। उस ब्राह्मण नें सदा प्रतिग्रह के प्रभाव से धन-संचित किया॥ ३॥

मरणं तस्य वै जातं पश्चाद्भार्या मृता तु सा।
गतोऽसौ नरके घोरे पूर्वजन्मविपाकतः॥ ४॥

भा० टी०—उस ब्राह्मण की मृत्यु हो गयी। फिर उसकी स्त्री भी मर गई। वह अपने पूर्व जन्म के कर्मों के कारण घोर नरक में गया॥ ४॥

युगमेकं वरारोहे भुक्त्वा नरकयातनाम्।
वृषयोनिं च संप्राप्तो रासभत्वं ततोऽलभत्॥ ५॥

भा० टी०—हे वरारोहे! एक युग तक वहाँ नरक की पीड़ा को भोग कर बैल की योनि को प्राप्त हुआ पश्चात् गधे की योनि में पैदा हुआ॥ ५॥

मानुषत्वं पुनर्याति मध्यदेशे वरानने!
अपुत्रता भवेद्देवि कन्यका चैव जायते॥ ६॥

भा० टी०—हे वरानने! पश्चात् मध्यदेश में मनुष्य योनि में पैदा हुआ है। हे देवि! उसका पुत्र नहीं है। कन्या ही जन्मती है॥ ६॥

शरीरे रोगमुत्पन्नं सुखं नैव प्रजायते।
प्रायश्चित्तं ततो देवि प्रवक्ष्यामि वरानने!॥ ७॥

भा० टी०—शरीर में रोग उत्पन्न हो रहा है। उसे सुख नहीं मिलता है। हे देवि! हे वरानने! अब इसका प्रायश्चित्त कहूँगा॥ ७॥

आकृष्णेति जपेन्मन्त्रं लक्षं वै विधिवत्प्रिये!
होमं कुर्यात्प्रयत्नेन तिलाज्यमधुना सह॥ ८॥

भा० टी०—'आकृष्णेनरजसा०' इस मंत्र का विधिपूर्वक एक लाख तक जप करायें, फिर यत्न से तिल, घृत, मधु आदि करके होम करे॥ ८॥

कुण्डे वै वर्त्तुलाकारे दशांशं तर्पणं तथा।
मार्जनं तु विशेषेण ततो ब्राह्मणभोजनम्॥ ९॥

भा० टी०—वर्त्तुल (गोल) आकार वाले कुंड में हवन करे और दशांश तर्पण तथा मार्जन कराये पश्चात् ब्राह्मणों को भोजन कराये॥ ९॥

दशवर्णाः प्रदातव्या गुडधेनुस्तथा प्रिये!
शय्यां दद्यात्प्रयत्नेन विधिवद्ब्राह्मणाय च॥ १०॥

भा० टी०—दश प्रकार के वर्णों वाली दश गौओं का दान करे। हे प्रिये! गुडधेनु अर्थात् शास्त्रोक्त विधि से लाई हुई गुडकी धेनु तथा शय्या को विधिपूर्वक यत्न से ब्राह्मण को दान करे॥ १०॥

भोजयेद्ब्राह्मणान् शुद्धान् वेदपाठरतान् प्रिये!
सप्तसप्ततिसंख्यान् वै दीक्षितान् शुद्धमानसान्॥ ११॥

भा० टी०—हे प्रिये! वेदपाठ में तत्पर हुए शुद्ध दीक्षित अर्थात् यज्ञादि करने वाले शुद्ध मन वाले ७७ ब्राह्मणों को भोजन कराये॥ ११॥

प्रयागे माघमासे वै प्रातःस्नानं सभार्यया।
एवं कृते न संदेहः पुत्रस्तस्य प्रजायते॥ १२॥

भा० टी०—माघ महीने में प्रयागजी में प्रात:काल स्त्री सहित स्नान करे ऐसा करने से निश्चय ही पुत्र उत्पन्न होता है॥ १२॥

रोगः प्रमुच्यते तस्य वन्ध्यत्वं च प्रणश्यति।
मृतवत्सा लभेत्पुत्रं कन्यका नैव जायते॥ १३॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती० रोहिणीनक्ष० चतुर्थचरणप्रा० नामैकोनविंशोऽध्यायः॥ १९॥

भा० टी०—उसका रोग दूर हो और वंध्यापन दूर हो, यदि उसकी संतान नहीं जीती हो तो उसके पुत्र जीयें और कन्या उत्पन्न नहीं हो॥ १३॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां रोहिणीनक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं नामैकोनविंशोऽध्यायः॥ १९॥

॥ २० ॥

मृगशिरानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनम्

शिव उवाच॥

अथ वक्ष्ये महादेवि चन्द्रनक्षत्रजं फलम्।
यत्कृतं मानुषैः पूर्वं तच्छृणुष्व वरानने!॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे महादेवि! अब मृगशिरा नक्षत्र में जन्मने वाले मनुष्यों द्वारा पूर्व जन्म में किये कर्मों के फल को कहता हूँ हे वरानने! उसको सुनो ॥१ ॥

मध्यदेशे पुरे शुभ्रे वसत्येको द्विजः खलु।
ब्रह्मकर्मरतो नित्यं वेदवेदाङ्गपारगः॥ २॥

भा० टी०—मध्यदेश में सुंदरपुर में एक ब्राह्मण रहता था, वह ब्राह्मण के कर्म में हमेशा तत्पर रहता था और वेद-वेदांग के सार को जानने वाला था॥ २॥

प्रत्यहं पाठयामास चतुर्वेदान्तविस्तरान्।
वेदशर्मा द्विजः ख्यातस्तस्य पत्नी सुशीलका॥ ३॥

भा० टी०—वेदशर्मा नामक वह प्रतिदिन विस्तार सहित चारों वेदों को पढ़ाया करता था। उसकी स्त्री का नाम सुशीला था॥ ३॥

प्रत्यहं पाठयेद्वेदं जीविकार्थं वरानने!
लोहकारस्य मरणं तत्पुरेऽभूद्वरानने!॥ ४॥

भा० टी०—हे वरानने! वह आजीविका के लिए नित्यप्रति वेद पढ़ाया करता था। हे वरानने! उस नगरी में एक लोहकार की मृत्यु हो गई॥ ४॥

न दत्तं तस्य वै स्वर्णं लोहकारस्य संस्थितम्।
तत्स्वर्णं प्रत्यहं देवि बुभोज सह भार्यया॥ ५॥

भा० टी०—उसके पास उस लोहकार का जमा किया हुआ सुवर्ण उस ब्राह्मण ने वापस उसे नहीं दिया। हे देवि! उस सुवर्ण को दिन प्रतिदिन स्त्री समेत वह भोगता गया॥ ५॥

एवं बहुगते काले मरणं ब्राह्मणस्य वै।
सूर्यलोकोऽभवद्देवि यतः सूर्यस्य सेवकः॥ ६॥

भा० टी०—इसप्रकार बहुत-सा काल बीत जाने पर उस ब्राह्मण की मृत्यु हो गयी। तब उसे सूर्य का लोक प्राप्त हुआ। क्योंकि वह सूर्य का (भक्त) सेवक था॥ ६॥

विंशद्वर्षसहस्राणि सूर्यलोकेऽवसत्प्रिये!
ततः पुण्यक्षये जाते मर्त्यलोके च मानवः॥ ७॥

भा० टी०—हे प्रिये! वह बीस हजार वर्षों तक सूर्यलोक में रहता रहा, फिर पुण्यक्षीण हो जाने पर मृत्यु लोक में मनुष्य योनि में पैदा हुआ है॥ ७॥

पुत्रकन्याविहीनस्तु धनधान्यसमन्वितः।
लोहकारस्य स्वर्णं हि गृहीतं नैव दत्तवान्॥ ८॥

भा० टी०—पुत्र-कन्या से हीन है और धनधान्य से संयुक्त है। उसने पूर्वजन्म में जो लोहकार (लुहार) का सुवर्ण लेकर वापस नहीं दिया था॥ ८॥

तेन कर्मविपाकेन लोहकारः सुतोऽभवत्।
प्रीतिमांश्चैव सर्वेषां पितृमातृप्रियंकरः॥ ९॥

भा० टी०—उस कर्म-विपाक से लुहार इसका पुत्र हुआ, जो कि सबसे प्रीति रखने वाला और माता-पिता से प्यार करने वाला हुआ॥ ९॥

युवरूपसमापन्नस्तदा मृत्युर्भवेदनु।
पुत्रः पुत्रस्य चाभावः कन्या चैव प्रजायते॥ १०॥

भा० टी०—जब वह जवान हुआ, तब उसकी मृत्यु हो गई, फिर उसके पुत्र नहीं होता केवल कन्या जन्मती है॥ १०॥

तत्पापस्य विशुद्ध्यर्थं प्रायश्चित्तमतः शृणु।
गायत्रीलक्षजाप्येन दुर्गायाः पूजने न च॥ ११॥

दशवर्णाप्रदानेन भूमिदानेन पार्वति!।
सर्वं पापं क्षयं याति पूर्वजन्मसमुद्भवम्॥ १२॥

भा० टी०—उस पाप की शुद्धि के लिए मुझसे उसका प्रायश्चित्त सुनो, गायत्री मंत्र का एक लाख तक जप, दुर्गापूजन, दशवर्ण वाली गौओं का दान, भूमिदान, इनके करने से हे पार्वति! पूर्वजन्म का सब पाप नष्ट होता है॥ १२॥

गयाश्राद्धं प्रयत्नेन तदर्थं नियतः प्रिये!
प्रयागे मकरे मासि स्नानं कुर्यात्प्रयत्नतः॥ १३॥

भा० टी०—हे प्रिये! उसके लिए नियम से गया में श्राद्ध करें। मकर के महीने में यत्न से प्रयागजी में स्नान करें॥ १३॥

ततः पापं क्षयं याति पुनः पुत्रश्च जीवति।
रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति नात्र कार्या विचारणा॥ १४॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिता० पार्वती० मृगशिरानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम विंशोऽध्यायः॥ २०॥

भा० टी०—तब पाप नष्ट होता है और पुत्र जीता है संपूर्ण रोग नष्ट हो जाते हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं है॥ १४॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिता० पार्वति० मृगशिरानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम विंशोऽध्यायः॥ २०॥

॥ २१ ॥

मृगशिराद्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनम्

शिव उवाच॥

कान्यकुब्जे शुभे देशे कश्चिच्च नन्दने पुरे।
बोधशर्मा द्विजश्चासीत् भिक्षुवृत्तिस्तु निर्धनः॥ १॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—सुंदर कान्यकुब्ज देश में नंदनपुर में कोई बोधशर्मा नामक भिक्षुक वृत्ति करने वाला निर्धन ब्राह्मण रहता था॥ १॥

परान्नं भुज्यते नित्यं परप्रेष्यरतः सदा।
तस्य पत्नी समाख्याता बाधमानाम वैपुरा॥ २॥

भा० टी०—वह नित्य पराये अन्न का भोजन करता और सदा पराई प्रेरणा से घूमता था। उसकी बाधमा नामकी स्त्री थी, जो कि यत्र-तत्र विख्यात थी॥ २॥

जन्मतो मरणं यावत् परान्नं भुज्यते च वै।
नरके पतनं तेन तयोर्जातं प्रतिग्रहात्॥ ३॥

भा० टी०—उसने जन्म से मरण पर्यंत पराये अन्न का भोजन किया। जिससे प्रतिग्रह के प्रभाव से उन दोनों का नरक में वास हुआ॥ ३॥

बहुवर्षसहस्राणि प्रवासो नरकेऽभवत्।
नरकान्निःसृतो देवि काकश्चैव मृगोऽभवत्॥ ४॥

भा० टी०—उसका बहुत हजार वर्षों तक नरक में वास रहा। हे देवि! नरक से निकल कर बाद मे वह काक और फिर मृग की योनि को प्राप्त हुआ॥ ४॥

पुनर्वै मेषयोनिश्च पूर्वकर्मविपाकतः।
ततो वै मानुषो जातो मध्यदेशे वरानने!। ५॥

भा० टी०—पश्चात् पूर्व कर्म-विपाक से मेंढा हुआ। हे वरानने! तदनन्तर मध्यदेश में मनुष्य-योनि में पैदा हुआ है॥ ५॥

रोगवान्नृत्यशीलश्च पुत्रकन्याविवर्जितः।
परान्नं प्रत्यहं भुङ्क्ते श्राद्धं नैव कृतं पुरा॥ ६॥

भा० टी०—वह रोगवान् है और नाचने में तत्पर रहता है। पुत्र-कन्या से हीन है। उसने पहले नित्य प्रति पराये अन्न का भोजन किया, कभी श्राद्ध नहीं किया॥ ६॥

अतो वंशस्य वै छेदः फलं चैव तु पूर्वजम्।
शान्तिं तस्य प्रवक्ष्यामि पूर्वपापक्षयो यतः॥ ७॥

भा० टी०—इसलिये पूर्व जन्म के फल से वंश नष्ट हो गया है, अब इसकी शांति को कहता हूँ जिससे कि पूर्व पाप नष्ट हो जायेगा॥ ७॥

गायत्रीजातवेदाभ्यां द्विलक्षं जापयेच्छिवे!
ततः पापविशुद्धिः स्याद्दशांशहवनं यदा॥ ८॥

भा० टी०—'गायत्री' मंत्र तथा ''जात वेदसे सुन०'' इस मंत्र से दो लाख तक जप करायें। हे शिवे! जप के दशांश तक होम करायें। तब पाप की शुद्धि होती है॥ ८॥

तर्पणं मार्जनं देवि ब्राह्मणान् भोजयेत्ततः।
शतसंख्यामितान् शुद्धान्गृहस्थानतिभक्तितः॥ ९॥

भा० टी०—हे देवि! तर्पण तथा मार्जन करायें और शुद्ध तथा गृहस्थी सौ ब्राह्मणों को भक्तिपूर्वक भोजन करवायें॥ ९॥

वृषमेकं प्रदद्यात्तु नीलवर्णं विभूषितम्।
एवं कृते न संदेहो रोगनाशो भवेद्ध्रुवम्॥ १०॥

भा० टी०—तत्पश्चात् नील वर्ण वाले विभूषित किये हुए एक बैल का दान करें। ऐसा करने से निश्चय ही रोग का नाश होता है, इसमें संदेह नहीं है॥ १०॥

पुत्रस्तु जायते देवि वन्ध्यत्वं च प्रणश्यति।

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे मृगशिराद्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नामैकविंशतितमोऽध्यायः॥ २१॥

भा० टी०—हे देवि! उसका पुत्र उत्पन्न होगा और उसकी पत्नी का वंध्यापन दूर होगा॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे मृगशिराद्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नामैकविंशतितमोऽध्यायः॥ २१॥

॥ २२ ॥

मृगशिरानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनम्

शिव उवाच॥

नर्मदादक्षिणे तीरे पुरीका नाम वै पुरी।
तस्यां पुर्य्यां विशालाक्षि कुलालो धनवानपि॥ १॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे विशालाक्षि! नर्मदा नदी के दक्षिण तट पर पुरीका नाम वाली नगरी थी, जहाँ कोई धनाढ्य (कुलाल) कुम्हार रहता था॥ १॥

कुलालकर्मतो देवि बहु द्रव्यमुपार्जितम्।
कर्मचन्द्र इतिख्यातस्तस्य पत्नी च देवकी॥ २॥

भा० टी०—हे देवि! उसने कुम्हार के कर्म से बहुत-सा द्रव्य संचित किया-वह कर्म चंद्र नाम से विख्यात था और उसकी स्त्री का नाम देवकी था॥ २॥

स्वकर्मनिरतो नित्यं पात्रं कृत्वा दिने दिने।
एवं सर्वं वयो जातं वृद्धत्वं च ततोऽभवत्॥ ३॥

भा० टी०—वह दिन प्रतिदिन घट आदि पात्र बनाकर निरंतर अपने कर्म में रत रहता था, ऐसे ही संपूर्ण अवस्था बीत गई, तदनन्तर वह वृद्ध हो गया॥ ३॥

वृद्धे जाते तदा देवि दारिद्र्यत्वमजायत।
शूर्पकारस्य वै द्रव्यं व्यवहारे गृहीतवान्॥ ४॥

भा० टी०—हे देवि! वृद्ध होने पर वह दरिद्र हो गया, तब व्यवहार के लिए उसने छाज बनाने वाले (धानक) के धन को ग्रहण किया॥ ४॥

शतसंख्यामितं स्वर्णं व्ययं सर्वं कृतं शिवे!
कुलालस्याभवन्मृत्युः पत्नी तस्य मृता पुरा॥ ५॥

भा० टी०— हे शिवे! सुवर्ण की सौ मोहरें, जो उसने धानक से ली थी, वे सब उसने खर्च कर दीं। बाद में उस कुम्हार की मृत्यु हो गई और उसकी स्त्री पहले ही मर गई थी॥ ५॥

नर्मदायां महादेवि तावुभौ मृत्युमापतुः।
तत्तीर्थस्य फलाद्देवि स्वर्गलोकं गतावुभौ॥ ६॥

भा० टी०—हे महादेवि! वे दोनों नर्मदा नदी पर मृत्यु को प्राप्त हुए। जिस तीर्थ के प्रभाव से वे दोनों स्वर्गलोक को प्राप्त हुए॥ ६॥

बहुवर्षसहस्राणि ताभ्यां भुक्तं फलं शुभम्।
ततः पुण्यक्षये जाते मृत्युलोके च जायते॥ ७॥

भा० टी०—उन्होंने बहुत हजार वर्षों तक सुंदर फल भोगे, फिर पुण्यक्षीण हो जाने पर मृत्यु लोक में जन्म लिया है॥ ७॥

मानुषेऽपि शुभं जन्म धनधान्यसमन्वितः।
पुनर्विवाहिता नारी पूर्वजन्मप्रसङ्गतः॥ ८॥

भा० टी०—मनुष्य लोक में उनका जीवन सुखमय है वह धनधान्य से युक्त है। पूर्वजन्म के प्रसंग से उसी स्त्री से फिर उसका विवाह हुआ॥ ८॥

ऋणसंबन्धतो देवि पुत्रो जातस्तदा शिवे!
सूर्पकारो महादेवि वैरुध्यं बालतः कृतम्॥ ९॥

भा० टी०—हे देवि! हे शिवे!! ऋण के संबंध से ही वह सूर्पकार (छाज बनाने वाला) धानक, इसके पुत्र रूप में पैदा हुआ। उसने बचपन से इसका विरोध किया॥९॥

प्रत्यहं वसु यल्लब्धं तत्सर्वं च व्ययं तथा।
द्यूतवेश्याप्रदानेन धनं सर्वं व्ययं गतम्॥ १०॥

भा० टी०—प्रतिदिन जो धन प्राप्त होता है वह सब खर्चकर देता है जूआ खेलता है और वेश्या-संग करने में सब धन खर्च करता है॥ १०॥

युवा जातो यदा देवि पुत्रकन्यासमन्वितः।
मरणं तस्य वै जातं पुनः पुत्रो न जायते॥ ११॥

भा० टी०—हे देवि! जब वह पुत्र जवान हुआ और उसके लड़का-लड़की हुए, तब उसके पुत्र की मृत्यु हो गयीफिर उसके संतान नहीं हुई है॥ ११॥

अथ शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणु सर्वं वरानने!
गायत्रीलक्षजाप्येन त्र्यम्बकेन तथा प्रिये!॥ १२॥

भा० टी०—हे वरानने! अब इसकी शांति कहता हूँ सब सुनो। हे प्रिये! गायत्री का अथवा 'त्र्यंबकं यजामहे' इस मंत्र का एक लाख तक कराने से शांति होगी॥ १२॥

कर्तव्यं कुण्डमुच्चैस्तु त्रिकोणं विधिवत्प्रिये!
होमं च कारयेद्देवि दशांशं तर्पणं ततः॥ १३॥

भा० टी०—हे देवि! त्रिकोण ऊँचा कुंड विधिपूर्वक बनवायें दशांश होम करायें और दशांश तर्पण करायें॥ १३॥

ततो वै कपिलां दद्याद्धेमशृङ्गीं सहाम्बराम्।
एवं कृत्वा वरारोहे पुनः पुत्रः प्रजायते॥ १४॥

भा० टी०—फिर सुवर्ण के सींग और वस्त्र से युक्त कपिला गौ का दान करें। हे वरारोहे! ऐसा करने से फिर पुत्र प्राप्त होगा॥ १४॥

शूर्पकारस्य प्रतिमां पलसप्तदशस्य तु।
सुवर्णस्यैव भो देवि रचितां वस्त्रच्छादिताम्॥ १५॥
शूर्पं रौप्यस्य वै कुर्य्यात्पलषष्टिप्रमाणतः।
प्रदद्याद्वेदविदुषे ब्राह्मणाय सुतेजसे॥ १६॥

भा० टी०—और सतरह पल सोने की (सूपकार की) मूर्त्ति बनाकर हे देवि! उस पर वस्त्र ओढायें और साठ पल अर्थात् २४० तोले चांदी का छाज बनायें फिर इन सब को सुंदर तेजस्वी वेदपाठी ब्राह्मण को दान दें॥ १५॥ १६॥

तस्योद्देशेन भो देवि ऋणबन्धात्प्रमुच्यते।
पुत्रश्च जायते देवि नात्र कार्या विचारणा॥ १७॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे मृगशिरानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम द्वाविंशोऽध्यायः॥ २२॥

भा० टी०—हे देवि! उस (सूर्पकार (छाज बनाने वाले) धानक के निमित्त) इस दान को देने से, पूर्वजन्म के ऋणपापबन्धन से छुटकारा मिलता है, इसमें कोई सन्देह नहीं है॥ १७॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां भाषाटीकायां मृगशिरानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम द्वाविंशोऽध्यायः॥ २२॥

॥ २३ ॥

मृगशिरानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच॥

अथ वक्ष्याम्यहं देवि चतुर्थचरणं तथा।
मृगशिरो नाम नक्षत्रं तस्य पूर्वं च सञ्चितम्॥ १ ॥

भा० टी०—हे महादेवि! अब मृगशिरा नक्षत्र के चौथे चरण में जन्म लेने वालों के पूर्व संचित कर्म को कहता हूँ॥ १ ॥

अवन्तीपुरतो देवि दक्षिणे क्रोशपञ्चके।
पुरं तच्चैव विख्यातं केशवं नाम शोभनम्॥ २ ॥

भा० टी०—हे देवि! उज्जैन नगरी से दक्षिण में पांच कोश की दूरी पर केशव नामक सुंदर पुर है॥ २ ॥

वसत्येको हि देवेशि ब्राह्मणो वेदपारगः।
किशोरशर्म्मा विख्यातो मृतगेहे प्रभुज्यते॥ ३ ॥

भा० टी०—हे देवेश्वरि! वहां किशोरशर्मा नामक एक वेदपाठी ब्राह्मण रहता था। वह प्रतिदिन मृतक के घर भोजन करता था॥ ३ ॥

कष्टेनैव महादेवि व्ययं कुर्य्याद्दिने दिने।
धनं च बहुधा कृत्वा पुण्यकार्यं न कारयेत्॥ ४॥

भा० टी०—हे महादेवि! उसने बड़ी कृपणता से खर्च चला कर बहुत-सा धन संचित किया और पुण्य कार्य कुछ नहीं किया॥ ४॥

ततो भ्रातुः कनिष्ठस्य भागं नैव ददौ च सः।
त्रिकोटिप्रमितं द्रव्यं स्वगृहे चैव सञ्चितम्॥ ५ ॥

भा० टी०—पश्चात् उसने अपने छोटे भाई को धन का हिस्सा नहीं दिया उसने तीन करोड़ रुपयों का धन अपने ही घर में संचित कर दिया॥ ५ ॥

द्रव्यस्यैव विभागाय मरणं ब्राह्मणोपरि।
कृतं भ्रात्रा कनिष्ठेन द्रव्यं तस्मै न दत्तवान्॥ ६ ॥

भा० टी०—फिर द्रव्य के विभाग के लिए उस छोटे भाई ने उस ब्राह्मण के कारण अपनी मृत्यु (आत्माहत्या) कर दी, किन्तु उसने उसको द्रव्य नहीं दिया॥ ६॥

एवं बहुतिथे काले किशोरः स मृतस्तु वै।
गतो वै नरके घोरे युगमेकोनविंशतिम्॥ ७॥

भा० टी०—इसप्रकार बहुत काल बीत जाने पर तब वह किशोर शर्मा ब्राह्मण मर गया फिर उन्नीस युगों तक घोर नरक में उसका वास हुआ॥ ७॥

पुनः कर्मवशाद्देवि गर्द्दभत्वं च जायते।
वृकयोनिस्ततो जातो मानुषत्वं भवेत्पुनः॥ ८॥

भा० टी०—हे देवि! पश्चात् कर्म के कारण वह गधे की योनि को प्राप्त हुआ, फिर भेड़िये की योनि को और फिर मनुष्य योनि में पैदा हुआ॥ ८॥

मध्यदेशे वरारोहे पुत्रो नैव प्रजायते।
कन्यका बहवो गर्भा विनश्यन्ति वरानने!। ९॥

भा० टी०—हे वरारोहे! वर्तमान में वह मध्य देश में जन्मा है। उसके पुत्र नहीं होता, कन्या जन्मती है, बहुत गर्भ खंडित होते हैं॥ ९॥

पूर्वजन्मकृतं कर्म भुज्यते देवि मानवैः।
इह लोके वरारोहे पुण्यं पापमनूनकम्॥ १०॥

भा० टी०—हे देवि! पूर्वजन्म में किया हुआ कर्म-पुण्य अथवा पाप-संपूर्ण मनुष्यों द्वारा इस लोक में भोगा जाता है॥ १०॥

भ्रातुस्तस्य कनिष्ठस्य मरणं पूर्वजन्मनि।
तदुद्देशेन भो देवि तस्माद्रोगं च जायते॥ ११॥

भा० टी०—हे देवि! पूर्वजन्म में उसके भाई ने उसके कारण आत्माहत्या की थी, इसलिये उसको रोग होता है॥ ११॥

तस्य पापस्य शुद्धिं च शृणु देवि प्रयत्नतः।
गायत्रीमूलमन्त्रेण लक्षजाप्यं च कारयेत्॥ १२॥

भा० टी०—हे देवि! अब ध्यान से उसके पाप की शुद्धि को सुनो। गायत्री मूल मंत्र का एक लाख तक जप करायें॥ १२॥

गृहवित्तषडंशेन पुण्यकार्य्यं च कारयेत्।
गायत्रीजातवेदेन त्र्यम्बकेन तथैव च॥ १३॥

भा० टी०—घर के धन में से छठे हिस्से को पुण्य के कार्य में खर्च करें और गायत्री अथवा "त्र्यंबकं यजामहे०" इस मंत्र का जप करें॥ १३॥

लक्षत्रयं जपं चैव दशवर्णाः प्रदापयेत्।
हवनं विधिवत्कुर्यात् तर्पणं मार्जनं तथा॥ १४॥

भा० टी०—उपर्युक्त दोनों मंत्रों का तीन लाख तक जप करायें, दश प्रकार के वर्णों वाली गौओं का दान करायें, विधिपूर्वक हवन करायें तर्पण तथा मार्जन करायें॥१४॥

सौवर्णस्य वरारोहे सूर्यं कुर्यात्प्रयत्नतः।
पलपञ्चप्रमाणेन द्विगुणं चन्द्रमेव च॥ १५॥

भा० टी०—हे वरारोहे! पांच पल प्रमाण सोने का सूर्य बनायें, दश पल का चंद्रमा बनायें॥ १५॥

रौप्यस्यैव प्रकुर्यात्तु यथाशास्त्रं प्रपूजयेत्।
मन्त्रेणानेन भो देवि दद्याद्विप्राय तद्द्वयम्॥ १६॥

भा० टी०—हे देवि! रूपा का चंद्रमा बनाये पश्चात् शास्त्र के अनुसार इस मंत्र से पूजा कर उन दोनों मूर्तियों को ब्राह्मण को दान करें॥ १६॥

मंत्रः॥

ॐ ह्रीं मार्त्तण्डाय स्वाहा।
सूर्यदेव महाभाग त्रैलोक्यतिमिरापह!
मम पूर्वकृतं पापं क्षम्यतां परमेश्वर!॥ १७॥

मन्त्र "ॐ ह्रीं मार्त्तण्डाय स्वाहा" हे सूर्य देव महाभाग! त्रिलोकी के अंधकार को दूर करने वाले हे परमेश्वर! तुम मेरे पूर्वजन्म के पाप को क्षमा करो॥ १७॥

ॐ सोमाय स्वाहा।
ॐ सौम्यरूप महाभाग मन्त्रराज द्विजोत्तम!
पूर्वजन्मकृतं पापमोषधीश क्षमस्व मे॥ १८॥

भा० टी०—ॐ "सोमाय स्वाहा" हे सौम्यरूप महाभाग! हे मंत्रराज! हे द्विजोत्तम! हे औषधीश! पूर्वजन्म में किये हुए मेरे पाप को दूर करो॥ १८॥

ततश्च ब्राह्मणान् पूज्य भोजयित्वा विसर्जयेत्।
एवं कृते न संदेहो विद्वान् पुत्रोऽभिजायते॥ १९॥

भा० टी०—फिर ब्राह्मणों का पूजन कर उन्हें भोजन कराकर विसर्जन करें देवें ऐसा करने से विद्वान् पुत्र उत्पन्न होता है, इसमें संदेह नहीं॥ १९॥

रोगः सर्वः क्षयं याति नात्र कार्या विचारणा॥ २०॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे० मृगशिर० नक्षत्र० चतुर्थचरणप्राय० नाम त्रयोविंशोऽध्यायः॥ २३॥

भा० टी०—संपूर्ण रोग नष्ट होता है इसमें कुछ भी चिन्तनीय नहीं है ॥ २०॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्व० मृगशि० प्रायश्चित्तकथनं नाम त्रयोविंशोऽध्यायः॥ २३॥

॥ २४ ॥

रौद्र(आर्द्रा)नक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

अथातः संप्रवक्ष्यामि रौद्रनक्षत्रजं फलम्।
येन कर्मविपाकेन मृत्युलोके च भुज्यते॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—अब आर्द्रा नक्षत्र में जन्म लेने वाले के कर्म फल को कहता हूँ जिस कर्मविपाक को मृत्यु लोक में भोगा जाता है॥ १ ॥

अवन्तीपुर्य्यां भो देवि रङ्गकारश्च तिष्ठति।
वस्त्राणि रङ्गयन्नित्यं स्वधर्मं पालयेत्सदा॥ २ ॥

भा० टी०—हे देवि! उज्जैन नगरी में एक वस्त्र रंगने वाला (रंगकार) रहता था वह सदा अपने धर्म का पालन करता हुआ अनेक प्रकार के वस्त्रों को रंगा करता था॥२ ॥

कुबेर इति तन्नाम लीलानाम्नी च तत्प्रिया।
पतिव्रता च सा देवि रङ्गकारश्च तां त्यजन्॥ ३ ॥

भा० टी०—उसका नाम कुबेर था, उसकी स्त्री का नाम लीला था। हे देवि! वह पतिव्रता थी, उस रंगकार ने अपनी स्त्री को त्याग दिया॥ ३ ॥

ब्राह्मणीं रमते चैकां पापप्रीतिं समुद्वहन्।
त्यक्त्वा पतिव्रतां भार्यां ब्राह्मणीं प्रीतितोऽभजत्॥ ४ ॥

भा० टी०—एक (अन्य) ब्राह्मणी से रमण करता हुआ वह पाप की प्रीति बढ़ाता हुआ अपनी पतिव्रता भार्या को त्याग कर ब्राह्मणी की प्रीति के वशीभूत हो गया॥ ४ ॥

द्रव्यं च संचितं तेन रङ्गकारेण वै शिवे!
भूमिमध्ये च तद्द्रव्यं कृतं तेन च सुन्दरि!॥ ५ ॥

भा० टी०—हे शिवे! उस रंगकार ने जो द्रव्य संचित किया हे सुंदरी! वह संपूर्ण उसने पृथ्वी में गाड़ दिया॥ ५ ॥

किञ्चिद्दानं कृतं तेन गङ्गायमुनसंगमे।
मरणं तस्य वै जातं सा च भार्या विवाहिता॥ ६॥

भा० टी०—उसने गंगा-यमुना नदी के संगम पर कुछ दान भी किया, फिर वह मर गया और उससे विवाही हुई, वह उसकी स्त्री भी मर गई॥ ६॥

तत्पुरे च सती जाता लीलानाम पतिव्रता।
सत्यलोकं गतः सोऽपि लक्षद्वयमितं प्रिये!॥ ७॥

भा० टी०—वह लीला नाम वाली उसकी पतिव्रता स्त्री उसके ही पुर में सती हो गई जिससे उसने भी हे प्रिये! दो लाख वर्ष तक स्वर्ग लोक में वास किया॥ ७॥

पुनः पुण्यक्षये जाते मनुष्योऽभूत्सदाशिवे!
मध्यलोके च विख्यातो धनधान्यसमन्वितः॥ ८॥

भा० टी०—हे सदाशिवे! पश्चात् पुण्य क्षीण हो गया, तब वह मध्य लोक में धनधान्य से युक्त प्रसिद्ध मनुष्य के रूप में पैदा हुआ॥ ८॥

पुत्राश्च बहवो जाताः कोपितेषु न जीवति।
शरीरे च ज्वरोत्पत्तिः खञ्जत्वं चरणे तथा॥ ९॥

भा० टी०—इसके बहुत से पुत्र हुए, परंतु उनमें कोई भी जीवित नहीं रहता है शरीर में ज्वर रहता है पैर से लंगड़ा है॥ ९॥

ब्राह्मणीगमनं देवि पूर्वजन्मनि वै कृतम्।
तेन पापेन भो देवि पुत्रस्तस्य न जीवति॥ १०॥

भा० टी०—हे देवि! उसने पूर्वजन्म में ब्राह्मणी के संग गमन किया था, उस पाप के कारण उसके पुत्र नहीं जीते हैं॥ १०॥

अस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि तां शृणुष्व वरानने!
दशायुतं जपेद्देवि गायत्रीं वेदमातरम्॥ ११॥

भा० टी०—हे वरानने! इसकी शांति को कहता हूँ उसको सुनो। हे देवि! वेदमाता गायत्री का एक लाख तक जप करायें॥ ११॥

हवनं तद्दशांशेन तर्पणं मार्जनं तथा।
षडंशं चैव दानं वै दद्याद्वेदविदे शिवे!॥ १२॥

भा० टी०—तद्दशांशहवन और तिल का दशांशतर्पण तथा मार्जन कराये हे शिवे! वेद को जानने वाले ब्राह्मण के अर्थ घर के वित्त से छठे हिस्से को दान करें॥ १२॥

ब्राह्मणान् भोजयेत्पश्चाच्छर्करापायसेन च।
गामेकां विधिवद्द्याद्धेमवर्णां सुभूषिताम्॥ १३॥

भा० टी०—तदनन्तर शर्करा और खीर से ब्राह्मणों को भोजन कराये, विधिपूर्वक सुवर्ण से एक गौ को विभूषिते करके उसे दान करें॥ १३॥

एवं कृते न संदेहो बहुपुत्रश्च जायते।
रोगस्यैव विमुक्तिः स्यान्नात्र कार्या विचारणा॥ १४॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे रौद्रनक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम चतुर्विंशोऽध्यायः॥ २४॥

भा० टी०—ऐसा करने से निश्चय ही पुत्र होता है, रोग से छूटजाये, इसमें कुछ चिन्तनीय नहीं है॥ १४॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्व०रौद्रनक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम चतुर्विंशोऽध्यायः॥ २४॥

॥ २५ ॥

रौद्र(आर्द्रा)नक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

श्रृणु देवि वरारोहे नृणां वै पूर्वजन्मनि।
यत्कृतेन महाघोरे नरके परिपच्यते॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे देवि! हे वरारोहे!! मनुष्यों के पूर्वजन्म के, जिस कर्म से उनके द्वारा महाघोर नरक में दुःख भोगा जाता है उनको सुनो॥ १॥

अवन्त्यां पश्चिमे द्वारे वैश्यो वसति भाग्यवान्।
धनधान्यसमायुक्तः स्वधर्मनिरतः सदा॥ २॥

भा० टी०—उज्जैन नगरी में पश्चिम के दरवाजे की तरफ एक भाग्यवान् वैश्य रहता था, वह धनधान्य से युक्त और अपने धर्म में सदा तत्पर रहता था॥ २॥

एवमर्द्धं वयो जातं दरिद्रत्वं ततोऽभवत्।
व्ययार्थं वै ततो देवि विप्रस्वर्णं गृहीतवान्॥ ३॥

भा० टी०—इस प्रकार जब उसकी आधी अवस्था बीत जाने पर तब वह दरिद्री हो गया, हे देवि! तब उसने व्यय के लिए ब्राह्मण के द्रव्य को (उधार) लिया॥ ३॥

पलविंशप्रमाणं तद्व्ययं जातं वरानने!
ततो वैश्यस्य मृत्युर्वै भार्यया सहितस्य वै॥ ४॥

भा० टी०—हे वरानने! ऐसे बीस पल प्रमाण जो सुवर्ण उसने लिया था, वह सब खर्च हो गया, फिर स्त्री सहित उस वैश्य की मृत्यु हो गई॥ ४॥

स्वर्गं जातं ततो देवि नर्मदामरणादपि।
षष्टिवर्षसहस्राणि स्वर्गस्यैव फलं शुभम्॥ ५॥

भा० टी०—हे देवि! पश्चात् नर्मदा नदी के किनारे मरने से स्वर्ग लोक प्राप्त हुआ, साठ हजार वर्षों तक उसने स्वर्ग लोक का सुंदर फल भोगा॥ ५॥

भुक्तं बहुविधं देवि भार्यया सहितेन वै।
ततः पुण्यक्षये जाते पुनर्मर्त्त्यो बभूव तु॥ ६॥

भा० टी०—हे देवि! पश्चात् स्त्री सहित उसने अनेक सुख भोगे, फिर पुण्य क्षीण हो गये, तब ये दोनों मनुष्य हो गये॥ ६॥

धनधान्यसमायुक्तौ पुत्रकन्याविवर्जितौ।
रुग्णौ दुर्बलगात्रौ च पूर्वकर्मफलेन तु॥ ७॥

भा० टी०—वे दोनों धनधान्य से युक्त हैं पुत्र-कन्या से रहित हैं रोग वाले हैं, दुर्बल शरीर वाले हैं, यह सब पूर्व कर्म फल से हो रहा है॥ ७॥

ऋणसम्बन्धतो देवि विप्रः पुत्रोऽभवत्तदा।
ऋणं यावत्प्रमाणं वै गृहीतं पूर्वजन्मनि॥ ८॥

भा० टी०—हे देवि! ऋण के संबंध से उस ब्राह्मण का पुत्र हो गया, जितने प्रमाण का द्रव्य उधार के रूप में पूर्वजन्म में ग्रहण किया था॥ ८॥

तावन्मात्रं गृहित्वा तु ततो वै मरणं भवेत्।
पुनः पुत्रो न तस्यैव विंशद्वर्षे गते सति॥ ९॥

भा० टी०—उतने ही प्रमाण में द्रव्य को ग्रहण करके अर्थात् खर्च कर वह पुत्र मर जाता है फिर इसके पुत्र नहीं हुआ है, बीस वर्ष व्यतीत हो चुके हैं॥ ९॥

तस्य दानं शृणुष्वादौ पूर्वपापक्षयो यतः।
गृहवित्ताष्टमं भागं ब्राह्मणाय समर्पयेत्॥ १०॥

भा० टी०—पहले उसके दान को सुनो, जिससे पूर्वजन्म का पाप नष्ट होगा, घर के वित्त के अष्टमांश द्रव्य को ब्राह्मण को समर्पण करें॥ १०॥

स्वर्णपञ्चपलेनैव पुष्पं च मकराकृतिम्।
प्रदद्याद्वेदविदुषे पूर्वपापक्षयो भवेत्॥ ११॥

भा० टी०—पांच पल सुवर्ण का मकराकार पुष्प बनाकर उसको वेद को जानने वाले ब्राह्मण को दान कर दे, तब पूर्वजन्म का पाप नष्ट होता है॥ ११॥

पुनः पुत्रः प्रसूयेत नात्र कार्या विचारणा॥ १२॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे रौद्रनक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्त-कथनं नामपञ्चविंशोऽध्यायः॥ २५॥

भा० टी०—फिर उसका पुत्र उत्पन्न होता है, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है॥१२॥

इति श्रीकर्मविपाक० रौद्रनक्षस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम पंचविंशोऽध्यायः॥ २५॥

॥ २६ ॥

रौद्र(आर्द्रा)नक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

अवन्तीनगरी नाम्ना ततः क्रोशद्वयोपरि ।
अग्निकोणे महादेवि मङ्गलं नाम वै पुरम् ॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे देवि! उज्जैन नगरी से दो कोश की दूरी पर अग्नि कोण में मंगल नामक पुर है ॥ १ ॥

तस्मिन्ग्रामे वसत्येको ब्राह्मणो द्यूततत्परः ।
अन्ये तु बहवस्तत्र वसन्ति सुद्विजोत्तमाः ॥ २ ॥

भा० टी०—वहाँ उस ग्राम में जुए में तत्पर रहने वाला एक ब्राह्मण रहता था, अन्य तो वहाँ बहुत उत्तम ब्राह्मण रहते थे ॥ २ ॥

मद्यपानरतो नित्यं चौरविद्यासु तत्परः ।
परस्त्रीलम्पटो देवि वेश्यायां निरतः सदा ॥ ३ ॥

भा० टी०—वह ब्राह्मण मद्यपान और प्रतिदिन चोरी की विद्या में तत्पर था, हे देवि! पर स्त्री केप्रति लंपट और वेश्यागामी था ॥ ३ ॥

प्रत्यहं स च भोदेवि द्विजरूपो नराधमः ।
चौरत्वाद्द्रव्यमुत्पाद्य नैव दानं समाचरेत् ॥ ४ ॥

भा० टी०—हे देवि! ब्राह्मण के रूप को धारण करने वाला वह अधम नर प्रतिदिन चोरी से धन को इकट्ठा कर, दान नहीं करता था ॥ ४ ॥

एवं बहुदिने याते तस्य मृत्युर्बभूव ह ।
नरके पातयामास यमदूतो यमाज्ञया ॥ ५ ॥

भा० टी०—ऐसे बहुत से दिन बीत जाने पर उसकी मृत्यु हो गई, धर्मराज का दूत यम की आज्ञा से उसे नरक में पटक गया ॥ ५ ॥

सप्ततिर्वै सहस्राणि रौरवे परिपच्यते ।
महाकष्टं लभेद्देवि कृमिसूचीमुखादिभिः ॥ ६ ॥

भा० टी०—उसने सत्तर हजार वर्षें तक रौरव नामक नरक में दु:ख भोगा, सुई सरीखे कृमियों से उसे महाकष्ट प्राप्त हुआ॥ ६॥

पुनः कर्मवशाद्देवि नरकान्निर्गतो यदा।
बिडालकाकयोनिञ्च तदा प्राप्तो द्वयं हि च॥ ७॥

भा० टी०—हे देवि! फिर कर्म-वश जब वह नरक से निकला तब बिलाव और काग इन दोनों योनियों को प्राप्त हुआ॥ ७॥

योनिद्वयफलं भुक्तं मानुषत्वं ततोलभेत्।
मध्यदेशे वरारोहे ततः पीडा महत्यपि॥ ८॥

भा० टी०—इन दानों योनियों के फल को भोग कर पश्चात् मध्य देश में मनुष्य योनि को प्राप्त हुआ है। हे वरारोहे! वहाँ भी उसे बहुत-सी पीड़ा है॥ ८॥

वंशछेदो भवेद्देवि पूर्वकर्मविपाकतः।
तस्योपरि विशालाक्षि शान्तिं शृणु वरानने!॥ ९॥

भा० टी०— हे देवि! हे वरानने! पूर्व कर्मविपाक से उनका वंश नष्ट हो गया, अब उसकी शांति को सुनो॥ ९॥

गायत्रीजातवेदाभ्यां त्र्यम्बकेण यथाविधि।
जपं वै कारयामास हवनं तर्पणं तथा॥ १०॥

भा० टी०—'गायत्री,' 'जातवेदसे०' 'त्र्यम्बकं यजा०'—इन मंत्रों से यथार्थ विधि पूर्वक जप, हवन और तर्पण करायें॥ १०॥

लक्षत्रयं जपेद्देवि पूर्वपापविशुद्धये।
ततो वै पूजयेद्देवि तुलसीं शुद्धरूपिणीम्॥ ११॥

भा० टी०—हे देवि! पूर्व पाप की शुद्धि के लिए तीन लाख जप करायें, हे देवि! तदनन्तर शुद्ध रूप वाली तुलसी की पूजा करें॥ ११॥

पूजयेद्विविधैश्चान्नैर्धूपनैवेद्यदीपकैः।
भूमिदानं ततो देवि यथाशक्ति प्रदापयेत्॥ १२॥

भा० टी०—अनेक प्रकार के अन्न, धूप, दीप, नैवेद्य—इन सबसे पूजन करें, हे देवि! पश्चात् शक्ति के अनुसार भूमि का दान करें॥ १२॥

एवं कृते महादेवि सर्वरोगक्षयो भवेत्।
पुत्रश्च जायते देवि वन्ध्यात्वं च प्रणश्यति॥ १३॥

इति श्रीकर्मविपाक० रौद्र (आर्द्रा) नक्षत्रतृतीयचरण प्रायाश्चित्त कथनं नाम षड्विंशोऽध्यायः ॥ २६ ॥

भा० टी०—हे महादेवि! ऐसा करने से संपूर्ण पाप नष्ट होते हैं, हे देवि! पुत्र उत्पन्न होता है और वंध्यापन रोग दूर होता है॥ १३ ॥

इति श्रीकर्मविपाक० भाषाटी० षड्विंशोऽध्यायः ॥ २६ ॥

॥ २७ ॥

रौद्रनक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

अथातः संप्रवक्ष्यामि तृतीयचरणं शिवे!
कृतं नरेण यद्देवि पूर्वजन्मनि किल्बिषम् ॥ १ ॥

भा० टी०—हे शिवे! अब आर्द्रा नक्षत्र के तीसरे चरण के कर्मफल को कहता हूँ, इसमें जन्म लेने वाले मनुष्य ने पूर्वजन्म में जो पाप किये हैं, वह सुनो ॥ १ ॥

अवन्तीपुरतोऽवात्सीत् शूद्र एको महाधनः।
विक्रयं क्रियते छागमेषयोर्गृहवासिनोः ॥ २ ॥

भा० टी०—उज्जैन नगरी में एक महाधनी शूद्र रहता था, वह घर में रहने वाले बकरी और मेंढ़कों को बेचने का व्यवहार करता था ॥ २ ॥

गजमश्वं तथा रत्नं वस्त्राणि विविधानि च।
एकदा सूर्यग्रहणं दृष्टं तेन वरानने! ॥ ३ ॥

भा० टी०—हाथी, घोड़ा, रत्न—अनेक प्रकार के वस्त्र—इन सब को बेचनें का व्यवहार करता था, हे वरानने! एक समय उसने सूर्य का ग्रहण देखा ॥ ३ ॥

गोसहस्रं कृतं दानं भार्यया सहितेन वै।
नर्मदायां विशालाक्षि स्वर्णवस्त्रयुतं तथा ॥ ४ ॥

भा० टी०—हे विशालाक्षि! तब स्त्री सहित उसने नर्मदा-नदी पर जाकर सुवर्ण, वस्त्र से युक्त की हुई हजार गौओं का दान किया ॥ ४ ॥

तत्रैव चाभवत् पीड़ा मृत्युलोकसमुद्भवा।
स्वर्णकारस्य वै द्रव्यं व्यवहारनिमित्तकम् ॥ ५ ॥

भा० टी०—वहीं उसको मृत्योलोक में होने वाली पीड़ा हुई (वह दरिद्र हो गया) तब उसने व्यवहार निमित्त एक सुनार से द्रव्य लिया ॥ ५ ॥

गृहीतं चैव नोदत्तं ततः शृणु वरानने!
ततो बहुगते काले शूद्रस्य मरणं ह्यभूत् ॥ ६ ॥

भा० टी०—सुनार से ग्रहण किया हुआ धन उसने वापस नहीं दिया। हे वरानने! सुनो, तदनन्तर बहुत-सा काल बीत चुका, तब उस शूद्र की मृत्यु हो गयी॥ ६॥

ततोऽसौ नरके घोरे वर्षलक्षद्वयं तथा।
तत्रैव बहुधा पीड़ां भुक्त्वा चैव स्वकर्मतः॥ ७॥

भा० टी०—तदनन्तर वह दो लाख वर्षों तक नरक-वास करता हुआ वहाँ अपने कर्म से बहुत-सी पीड़ा भोगता रहा॥ ७॥

पुनर्जातो मर्त्यलोके काकश्च महिषो बकः।
मानुषत्वं ततो देवि कुले महति वै शुभे॥ ८॥

भा० टी०—पश्चात् वह मनुष्य-लोक में काग हुआ, फिर भैंसा तथा बगुला हुआ। हे देवि! तदनन्तर महान् शुभ कुल में मनुष्य-योनि में पैदा हुआ है॥ ८॥

स्वर्णकारस्य द्रव्यं वै गृहीतं पूर्वजन्मनि।
न दत्तं वै ऋणं देवि पुत्रस्य मरणं ततः॥ ९॥

भा० टी०—उसने पूर्वजन्म में सुनार का द्रव्य ग्रहण किया था और वापस नहीं दिया, हे देवि! इसलिये के पुत्र की मृत्यु होती है॥ ९॥

युवरूपो यदा जातो व्याधिग्रस्ततनुस्तदा।
देहार्द्धवातरोगश्च पुत्रस्य मरणं ततः॥ १०॥

भा० टी०—जब उसका पुत्र जवान हुआ, वह बीमारी से ग्रस्त हो गया, अर्द्धांग वात- रोग है पुत्र की मृत्यु हुई॥ १०॥

भार्याद्वयसमायुक्त एका प्रीतिमती भवेत्।
पूर्वजन्मनि यत्कर्म पुण्यं पापं शरीरतः॥ ११॥

भा० टी०—उसकी दो स्त्रियाँ हैं, जिनमें से एक अत्यंत प्रीति वाली है पूर्वजन्म में जो कर्म पुण्य अथवा पाप शरीर से होता है॥ ११॥

मर्त्यलोके मनुष्येण भुज्यते नात्र संशयः।
अथातः संप्रवक्ष्यामि पापनिग्रहहेतवे॥ १२॥

भा० टी०—मनुष्य द्वारा मृत्युलोक में वही फल भोगा जाता है, इसमें संदेह नहीं। अब पाप दूर करने के उपाय कहता हूँ॥ १२॥

गायत्रीलक्षजाप्येन हरिवंशश्रुतेन च।
रथाश्ववस्त्रदानेन ग्रामदानेन वै तथा॥ १३॥

भा० टी०—गायत्री के एक लाख जप करने से , हरिवंश सुनने से, रथ, अश्व और ग्राम के दान से॥ १३॥

तिलधेनुप्रदानेन सर्वपापक्षयो भवेत्।
स्वर्णमुद्रासहस्त्रस्य प्रतिमां कारयेद्बुधः॥ १४॥

भा० टी०—तिल और गाय के दान से संपूर्ण पाप नष्ट हो जाये, हजार सुवर्ण मुद्राओं से मूर्त्ति बनवायें॥ १४॥

पूर्वोक्तेन विधानेन पूजयित्वा प्रदापयेत्।
पार्थिवं पूजयेच्छंभुं तथा गोमयनिर्मितम्॥ १५॥

भा० टी०—फिर पूर्वोक्त विधि-विधान से उसका पूजन कर दान करें। पश्चात् पार्थिव शिव लिंग का अथवा गोबर से बनाये हुए शिव लिंग का पूजन करें॥ १५॥

लक्षत्रयं प्रमाणं च पञ्चगव्येन पूजयेत्।
पञ्चामृतेन भो देवि गोदुग्धेनैव पूजयेत्॥ १६॥

भा० टी०—इसप्रकार तीन लाख प्रमाण पार्थिव शिव बनवा कर पंचगव्य से पूजन करें। हे देवि! पंचामृत और दुग्ध से पूजा करें॥ १६॥

तथा च विविधैर्मन्त्रैः षडङ्गैर्वेदसंभवैः।
मुच्यतेऽर्द्धाङ्गरोगेण नात्र कार्या विचारणा॥ १७॥

भा० टी०—अनेक प्रकार के वेदमन्त्रों और षडंग के मंत्रों से पूजन करने से अर्धाङ्ग रोग से छुटकारा मिल जायेगा, इसमें कुछ भी चिन्तनीय अर्थात् सन्देहास्पद नहीं है॥ १७॥

बन्ध्यात्वं प्रशमं याति लभेत्पुत्रं न संशयः।
मृतवत्सा लभेत्पुत्रं चिरञ्जीविनमुत्तमम्॥ १८॥

इतिश्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे रौद्रनक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम सप्तविंशोऽध्यायः॥ २७॥

भा० टी०—इससे वंध्यापन रोग दूर होता है, पुत्र उत्पन्न होता है, इसमे संदेह नहीं हैं। जिसकी संतान नहीं जीती हो उस स्त्री के गर्भ से चीरंजीवी, दीर्घायु उत्तम पुत्र उत्पन्न होता है॥ १८॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां० रौद्रनक्षत्रस्य चतुर्थ० प्रायश्चित्तकथनं नाम सप्तविंशोऽध्यायः॥ २७॥

॥ २८ ॥

पुनर्वसुनक्षत्रस्य प्रथमचरणे प्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच॥

ये नराः परद्रव्यं च हरन्ति सततं प्रिये!।
ते नरा दुःखितां यान्ति रोगेण च प्रपीडिताः॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—जो मनुष्य पराये द्रव्य को हरते हैं, हे प्रिये! वे मनुष्य निरंतर रोग से ग्रस्त हो कर दुःख को भोगते हैं॥ १ ॥

ऋणं यस्य गृहीतं वै तदृणं न ददाति च।
ऋणसंबन्धतो देवि पुत्रो भवति दारुणः॥ २॥

भा० टी०—जिसका ऋण लिया हो उसको फिर वापस नहीं दिया हो तो हे देवि! ऋण के संबंध से दारुण पुत्र उत्पन्न होता है॥ २॥

गृहीतमात्रं वै भग्नं धातुभग्नस्तथा नरः।
कन्याघातात्तु पूर्वं हि फलं भवति तादृशम्॥ ३॥

भा० टी०—ग्रहण किया हुआ सब धन नष्ट हो जाये तथा धातु गिरने लग जाये, ऐसा यह फल कन्या को मारने से होता है॥ ३॥

अवन्तीपुरतो देवि ख्यातं चैव सुशोभनम्।
क्रोशमात्रं ततो देवि चोत्तरे नगरे तथा॥ ४॥

भा० टी०—हे देवि! उज्जैन नगरी से उत्तर की तरफ एक कोश की दूरी पर पर सुंदर विख्यात नगर॥ ४॥

वसन्तपुरमित्याख्यं वसन्ति बहवो जनाः।
नाम्ना तन्मध्य आभीरो नन्दनो वसति प्रिये॥ ५॥

भा० टी०—वसंतपुर है। हे प्रिये! वहाँ बहुत से जन रहते हैं। हे प्रिये! वहाँ नंदन नाम वाला एक (आभीर) अहीर जाति का व्यक्ति बसता था॥ ५॥

तस्य भार्या तु विख्याता नाम्ना वै सुन्दरी प्रिये!
सर्वथा च महादेवि कृपणः सह भार्यया॥ ६॥

भा० टी०—हे प्रिये! उसकी पत्नी सुंदरी नाम की विख्यात स्त्री थी। हे महादेवि! वह स्त्री सहित अत्यन्त कृपण था॥ ६॥

मित्रं तस्य महादेवि ब्राह्मणो वेदपारगः।
स तिष्ठति पुरीमध्ये धनं तस्य स्थितं बहु॥ ७॥

भा० टी०—एक वेदपाठी ब्राह्मण उसका मित्र था, वह भी उज्जैनपुरी में रहता था उसके पास बहुत-सा धन था॥ ७॥

प्रत्यहं च परान्नेन भोजनं कुरुते स तु।
यदा वृद्धत्वमायातः पुरीं चैव तदात्यजत्॥ ८॥

भा० टी०—वह प्रतिदिन पराये अन्न से भोजन करता था जब वह वृद्ध अवस्था को प्राप्त हुआ उसने तब उज्जैनपुरी को त्याग दिया ॥ ८॥

आगतो मित्रपार्श्वे वै वसन्ते वै पुरे शुभे।
आभीरेण गृहे वासं मित्रत्वाद्दत्तवान् स्वयम्॥ ९॥

भा० टी०—वसंतपुर में वह उस अपने मित्र के पास आया, तब उस अहीर ने मित्रभाव से उसको अपने घर में रोक लिया॥ ९॥

बहुकालमवात्सीत् स तत्प्रीत्या सुरसुन्दरि!
आभीरस्तु ततो देवि स्वर्णं दृष्ट्वा प्रहर्षितः॥ १०॥

भा० टी०—हे देवि! वह ब्राह्मण उसकी प्रीति से आकर्षित हो, बहुत काल तक वहाँ वास करता रहा, वह अहीर सुवर्ण को देख अत्यंत प्रसन्न हुआ॥ १०॥

तस्य स्वर्णं समाहृत्य स्वगृहे स्थापितं तदा।
ब्राह्मणेन महत्कष्टं कृतं द्रव्यस्य शोकतः॥ ११॥

भा० टी०—उसके सुवर्ण को ग्रहण करके उस अहीर ने अपने घर में रख लिया तब द्रव्य के शोक से ब्राह्मण ने अत्यंत कष्ट पाया॥ ११॥

महाशोकसमायुक्तः काश्यां चैव समागतः।
शरीरं चापि तत्त्याज स्वर्णशोकेन वै द्विजः॥ १२॥

भा० टी०—वह महाशोक से युक्त हुआ और काशी में चला गया, उस ब्राह्मण ने सुवर्ण के चोरी के शोक से शरीर भी त्याग दिया॥ १२॥

शूद्रेणैव महादेवि तस्य स्वर्णं प्रभुज्यते।
ततो बहुगते काले मरणं तस्य चाभवत्॥ १३॥

भा० टी०—हे महादेवि! उस शूद्र ने उसके सुवर्ण को भोगा, पश्चात् बहुत काल बीत जाने पर तब उसकी मृत्यु हो गई॥ १३॥

नरके पातयामास यमदूतो यमाज्ञया।
षष्टिवर्षसहस्त्राणि भुक्ता नरकयातना॥ १४॥

भा० टी०—धर्मराज के दूत ने यम की आज्ञा से उसे नरक में पटक दिया साठ हजार वर्षों तक उसने नरक की पीड़ा भोगी॥ १४॥

ततस्तेन तु प्रेतत्वं भुक्तमब्दसहस्त्रकम्।
उलूकत्वं वरारोहे कौशिक्या निकटे ततः॥ १५॥

भा० टी०—पश्चात् उसने एक हजार वर्षों तक प्रेत योनि भोगी। हे वरारोहे! तदनन्तर कौशिकी नदी के निकट उल्लू के रूप में पैदा हुआ॥ १५॥

शरय्वा उत्तरे कूले मानुषत्वं ततोऽभवत्।
मध्यदेशे च भो देवि पत्न्या सह वरानने॥ १६॥

भा० टी०—फिर शरयू नदी के उत्तर किनारे पर मनुष्य योनि में पैदा हुआ। हे देवि! मध्यदेश में वह अब स्त्री सहित है॥ १६॥

धनधान्यसमायुक्तो राजसेवासु तत्परः।
जातः पुनर्वसोर्देवि प्रथमे चरणे खलु॥ १७॥

भा० टी०—वह धनधान्य से युक्त है और राजा की सेवा में तत्पर है। हे देवि! वह पुनर्वसु के प्रथमचरण में जन्मा है॥ १७॥

पूर्वजन्मनि भो देवि यतो गोशतदत्तवान्।
भूपतित्वं ततो देवि धनाढ्यत्वं भवेत् खलु॥ १८॥

भा० टी०—हे देवि! उसने पूर्वजन्म में जो सौ गौओं का दान किया था, इसलिये वह राजकार्य में प्रवृत्त है और धनाढ्य है॥ १८॥

ब्राह्मणस्य हृतं स्वर्णं स्वयं चौर्येण यत्पुरा।
तेन पापेन भो देवि पुत्रस्य मरणं खलु॥ १९॥

भा० टी०—पूर्वजन्म में उसने जो ब्राह्मण का सुवर्ण चुराया था, हे देवि! इसलिये उसके पुत्र की मृत्यु होती है॥ १९॥

तस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि तत्सर्वं शृणु पार्वति!
गृहवित्ताष्टमैर्भागैः पुण्यकार्यं च कारयेत्॥ २०॥

भा० टी०—हे पार्वति! उसकी शांति को कहता हूँ, सुनो, घर के वित्त में से आठवें भाग को पुण्य के कार्य में खर्च करें॥ २०॥

गायत्रीजातवेदाभ्यां याः फलेति तथा प्रिये!
लक्षत्रयं जपं कुर्याद्दशांशहवनं ततः॥ २१॥

भा० टी०—हे प्रिये! गायत्री, तथा "जातवेदसे सुनवाम० याः फला०" इन मंत्रों से तीन लाख जप करायें फिर तद्दशांश हवन करायें॥ २१॥

तर्पणं मार्जनं चैव दशांशः क्रमतस्तथा।
हरिवंशस्य श्रवणं चण्डिकार्चनमेव च॥ २२॥

भा० टी०—तर्पण तथा मार्जन भी दशांश क्रम से करायें, हरिवंश को सुनें, देवी का पूजन करें॥ २२॥

शिवार्चनमशेषेण वापिकां चैव कारयेत्।
कूपं चैव तडागं च पथि मध्ये च कारयेत्॥ २३॥

भा० टी०—अच्छे प्रकार से शिवपूजन करें, बावड़ी खुदवायें, मार्ग में कुआँ खुदवायें और तालाब बनवायें॥ २३॥

कूष्माण्डं नारिकेरं च पञ्चरत्नसमन्वितम्।
गङ्गामध्ये प्रदातव्यं शनौ चाश्वत्थपूजनम्॥ २४॥

भा० टी०—कूष्मांड अर्थात् पेठे को पंचरत्न से भर कर गंगाजी में दान करें, शनिवार के दिन पीपल वृक्ष का पूजन करें॥ २४॥

पलसप्तदशेनैव प्रतिमां कारयेद्बुधः।
चतुष्कोणगतां वेदीं रौप्यैर्दशपलान्वितैः॥ २५॥

भा० टी०—सतरह पल सुवर्ण की प्रतिमा बना कर फिर दशपल प्रमाण की चांदी की चतुष्कोण वेदी बनायें॥ २५॥

तन्मध्ये प्रतिमां स्थाप्य सपुत्रस्य द्विजस्य तु।
पूजां कुर्यात्तु वै भक्त्या मन्त्रेणानेन वै शिवे!॥ २६॥

भा० टी०—हे शिवे! उसके ऊपर प्रतिमा को स्थापित कर पुत्र सहित उस ब्राह्मण की उस मूर्ति को भक्ति पूर्वक इस मंत्र से पूजें॥ २७॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय। ॐ ब्रह्मणे नमः।
ॐ अनन्ताय नमः। ॐ पुरुषाय नमः। ॐ पुरुषोत्तमाय नमः।

ॐ शार्ङ्गिणे नमः। ॐ पीताम्बराय नमः। ॐ चक्रपाणये नमः।
ॐ अच्युताय नमः। ॐ गदाधराय नमः॥

वासुदेवादिदशभिर्मन्त्रैरेभिः पृथक् पृथक्।
पूजयेत्प्रतिमां तां तु ततो दद्याद्द्विजन्मने॥ २७॥

भा० टी०—ॐ नमो भगवते वासुदेवाय १, ॐ ब्रह्मणे नमः २, ॐ अनंताय नमः ३, ॐ पुरुषाय नमः ४, ॐ पुरुषोत्तमाय नमः ५, ॐ शार्ङ्गिणे नमः ६, ॐ पीताम्बराय नमः ७, ॐ चक्रपाणये नमः ८, ॐ अच्युताय नमः ९, ॐ गदाधराय नमः १०— ऐसे इन वासुदेव के दश मंत्रों से पृथक्-२ उस प्रतिमा का पूजन कर पश्चात् ब्राह्मण को अर्थ दान कर दें॥ २७॥

पूजयेद्देवदेवेशं सर्वपापापनुत्तये।
ततः संप्रार्थ्य देवेशं शङ्खचक्रगदाधरम्॥ २८॥

भा० टी०—संपूर्ण पाप दूर होने के लिए शंखचक्रगदाधारी विष्णु भगवान् देवेश की प्रार्थना कर विष्णु का पूजन करें॥ २८॥

पीताम्बरं चतुर्बाहुं पुण्डरीकनिभेक्षणम्।
वासुदेवं जगन्नाथं धराधरगुरो हरे!॥ २९॥

भा० टी०—पीतांबरधारी, चतुर्भुज, कमलनेत्र, वासुदेव, जगन्नाथ—ऐसे उनकी प्रार्थना करें, हे धरणीधर! हे गुरो! हे हरे!॥ २९॥

मम पूर्वकृतं पापं क्षम्यतां परमेश्वर!
ततो गां कपिलां दद्यात्स्वर्णशृङ्गीं सनूपुराम्॥ ३०॥

भा० टी०—हे परमेश्वर! पूर्वजन्म में किये हुए मेरे पापों को क्षमा करो। ऐसे कह कर पश्चात् सुवर्ण के सींग और खुरों से युक्त की हुई कपिला गौ का दान करें॥ ३०॥

विधिवद्वेदविदुषे ब्राह्मणाय तपस्विने।
दशवर्णास्ततो दद्याद्ब्राह्मणान्भोजयेत्ततः॥ ३१॥

भा० टी०—वेद को जानने वाले तपस्वी ब्राह्मण को दश प्रकार की गौओं का विधिपूर्वक दान करें तदनन्तर ब्राह्मणों को भोजन करायें॥ ३१॥

भूमिदानं ततो दद्याद्विप्राय विदुषे ततः।
एवं कृते न संदेहः पूर्वपापं विनश्यति॥ ३२॥

भा० टी०—पश्चात् वेद को जानने वाले ब्राह्मण को पृथ्वी का दान दें। ऐसा करने से पूर्व में किये गये पाप नष्ट होते हैं। इसमें संदेह नहीं है॥ ३२॥

सन्तानं जायते देवि रोगाणां संक्षयस्ततः।
कन्यका नैव जायन्ते वन्ध्यत्वं च प्रणश्यति॥ ३३॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे पुनर्वसुनक्षत्रस्य प्रथमचरणे प्रायश्चित्तकथनं नामाष्टविंशोऽध्यायः॥ २८॥

भा० टी०—हे देवि! तदनन्तर संतान उत्पन्न होती है और रोगों का नाश होता है और पुत्रियों की उत्पत्ति नहीं होती है। वंध्यत्व दूर होता है॥ ३३॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे पुनर्वसुनक्षत्रस्य प्रथमचरणे प्रायश्चित्तकथनं नामाष्टविंशोऽध्यायः॥ २८॥

॥ २९ ॥

पुनर्वसुनक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

अथातः संप्रवक्ष्यामि यत्कृतं पूर्वजन्मनि।
अवन्तीपुरतो देवि पूर्वे क्रोशप्रमाणतः॥ १॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं— हे देवि! अब पूर्वजन्म में किये गये कर्मों के विषय में कहता हूँ, उज्जैन पुरी से पूर्व दिशा में एक कोश के विस्तार में॥ १॥

लक्ष्मणस्य पुरं ख्यातं तत्रैव बहवो जनाः।
वसन्ति वैष्णवाः सर्वे वेदकर्मविचक्षणाः॥ २॥

भा० टी०—लक्ष्मणजी का पुर विख्यात है। वहाँ बहुत से वैष्णव जन और वेद-कर्मों को जानने वाले वास करते हैं॥ २॥

स्वर्णकारो वसत्येकः स्वकर्मनिरतः सदा।
दामोदर इति ख्यातस्तस्य पत्नी प्रभावती॥ ३॥

भा० टी०—जहाँ अपने कर्म को सदा करने वाला दामोदर नामक एक स्वर्णकार अर्थात् सुनार विख्यात हुआ और उसकी स्त्री का नाम प्रभावती था॥ ३॥

विष्णुभक्तिरतः शान्तः सज्जनानां च सेवकः।
पत्नी पतिव्रता तस्य पतिशुश्रूषणे रता॥ ४॥

भा० टी०—वह विष्णु की भक्ति में प्रीति करने वाला, शांतचित्त वाला, सज्जनों का दास थाप जिसकी पतिव्रता स्त्री पति की सेवा करने वाली थी॥ ४॥

तस्य पुत्रद्वयं जातं गुणज्ञं पितृसेवकम्।
एका च बल्लवी तत्र निवासाय तदागता॥ ५॥

भा० टी०—उस सुनार के पिता की सेवा करने वाले दो गुणवान् पुत्र उत्पन्न हुए और वहाँ एक बल्लवी अर्थात् गौओं का पालन करने वाली स्त्री वसने के लिए आयी॥५॥

पुत्रद्वयसमायुक्ता बहुगोधनसंयुता।
एको द्यूतरतः पुत्रो द्वितीयश्चोरसंमतः॥ ६॥

भा० टी०—वह दो पुत्रों से युक्त और बहुत से गोधन से युक्त थी। परंतु उसका एक पुत्र तो जुआ खेलने वाला था और दूसरा चोरों से मिला हुआ था अर्थात् चोर था॥६॥

उपार्जितं महिषीस्वं गोधनं बहुधा तथा।
चौरदूतोपचाराभ्यां धनाढ्यत्वमजायत॥ ७॥

भा० टी०—महिषीधन और अनेक प्रकार की गौओं का धन उसने चोरी के कर्म से संचित किया तब वह धनाढ्य होता गया॥ ७॥

दुग्धादिकं महादेवि भुज्यते प्रत्यहं तदा।
स्वर्णकारो महाद्रव्यामाभीरीं सर्वसंयुताम्॥ ८॥

भा० टी०—हे देवि! प्रतिदिन दूध आदि पदार्थों को भोगता था, फिर वह सुनार महाद्रव्य वाली सभी प्रकार के सुखसाधनों से युक्त उस अहीरी को॥ ८॥

आनीतवान् स्वगेहे तां तदा च वरवर्णिनीम्।
ततो बहुगते काले महामारीज्वरादिना॥ ९॥

भा० टी०—उस धनाढ्य स्त्री को अपने घर में ले आया, फिर बहुत दिन पश्चात् महामारी और ज्वर आदि के कारण॥ ९॥

पुत्राभ्यां सममद्राक्षीद्वल्लव्या मरणं तदा।
द्रव्यं तस्यास्तदा देवि स्वर्णकारो गृहीतवान्॥ १०॥

भा० टी०—पुत्रों सहित वह अहीरी मर गई, तब हे देवि! उसके द्रव्य को उस सुनार ने अधिगृहीत किया॥ १०॥

भुक्तं द्रव्यं च तत्सर्वं यावत्तिष्ठति भूतले।
भार्यया सह पुत्राभ्यां महिषीगोधनादिकम्॥ ११॥

भा० टी०—जब तक वह पृथ्वी-तल पर रहा (जीवन पर्यंत) उसके संपूर्ण द्रव्य- महिषी और गोधन आदि को स्त्री-पुत्रों सहित भोगता गया॥ ११॥

ततो वयोत्तरे देवि मृत्युस्तस्याभवत्किल।
पत्नी तस्य मृता साध्वी ताभ्यां स्वर्गमभूत्पुरा॥ १२॥

भा० टी०—हे देवि! फिर अवस्था पूरी होने पर उसकी मृत्यु हो गई और वह पतिव्रता स्त्री भी मर गई, तब उन्हें पहले स्वर्ग प्राप्त हुआ॥ १२॥

पञ्च वर्षसहस्राणि स्वर्गे सुखमजीजनत्।
पुनः पुण्यक्षये जाते मानुषत्वं भवेद्भुवि॥ १३॥

भा० टी०—पाँच हजार वर्षों तक स्वर्ग में उनका वास रहा, फिर पुण्य क्षीण हो जाने पर मनुष्य शरीर उनको प्राप्त हुआ है॥ १३॥

अयोध्यानगराद्देवि सरय्वा उत्तरे तटे।
क्रोशद्वये विशालाक्षि पुरे देहलसंज्ञके॥ १४॥

भा० टी०—हे देवि! सरयू नदी के उत्तर किनारे पर अयोध्या नगरी से दो कोश की दूरी पर देहल नामक पुर में॥ १४॥

स्वकर्मनिरतः प्राज्ञः स्वविद्यायां विचक्षणः।
स्वदेशे चैव विख्यातः शत्रूणां च विमर्द्दनः॥ १५॥

भा० टी०—वह अपने कर्म में तत्पर विद्वान्, अपनी विद्या में निपुण, अपने देश में विख्यात शत्रुओं को नष्ट करने वाला व्यक्ति है॥ १५॥

पुनर्विवाहिता पत्नी साध्वी या पूर्वजन्मनि।
तस्य नेत्रे विशालाक्षि पूर्वजन्मफलाद्गते॥ १६॥

भा० टी०—जो पूर्वजन्म में उसकी पतिव्रता स्त्री थी, वही फिर इस जन्म में विवाही गई है, हे विशालाक्षि! पूर्वजन्म के कर्म फल से उसके नेत्र चले गये अर्थात् वह अंधा है॥ १६॥

बाल्ये चैव तु पुत्रस्य नेत्रं वामं प्रणाशितम्।
तेन पापेन भो देवि गतं नेत्रद्वयं शिवे!॥ १७॥

भा० टी०—हे देवि! इसने बालक-अवस्था में पुत्र का वाम नेत्र नष्ट कर दिया था, हे शिवे! उस पाप से इसके दोनों नेत्र नष्ट हो गये हैं॥ १७॥

भक्षितं तस्य तत्स्वर्णं न दत्तं ब्राह्मणाय वै।
तेन पापेन भो देवि मृतः पुत्रो वरः शुभे!॥ १८॥

भा० टी०—पूर्वजन्म में अहीरी का जो सुवर्ण इसने भोगा। ब्राह्मण को दान नहीं दिया, हे देवि! हे शुभे! उस पाप से इसका उत्तम पुत्र मर गया है॥ १८॥

मित्रसंबन्धतः पापात् पुत्रपौत्रद्वयं मृतम्।
पूर्वजन्मकृतं देवि शुभाशुभफलं तथा॥ १९॥

भा० टी०—मित्र संबंधी पाप होने से पुत्र और पौत्र दोनों मर गये हैं हे देवि! पूर्वजन्म में किया हुआ शुभाशुभ फल॥ १९॥

भुज्यते प्राणिभिः सर्वैस्तथा देवि विशेषतः।
म्लेच्छसेवारतो नित्यं म्लेच्छस्यैव च संगतिः॥ २०॥

भा० टी०—संपूर्ण प्राणियों द्वारा विशेष करके इस जन्म में भोगा जाता है। हे देवि! पूर्वजन्म में नित्य यह म्लेच्छ की सेवा में रहता था, इसलिये म्लेच्छ की ही संगति हुई है॥२०॥

कुमार्गतो भवेद्देवि मर्त्यलोके जनिर्यदा।
शान्तिं शृणु महादेवि पूर्वपापप्रणाशिनीम्॥ २१॥

भा० टी०—जब मृत्यु लोक में जन्म हुआ, तब से ही कुमार्ग में रहता है। हे देवि! पूर्व पापों को नष्ट करने वाली शांति को सुनो॥ २१॥

गृहवित्ताष्टमैर्भागैः पुण्यकार्यं च कारयेत्।
गायत्रीजातवेदाभ्यां याःफलीत्र्यम्बकेण वा॥ २२॥

भा० टी०—घर के वित्त के आठवें भाग को पुण्य के कार्यों में खर्च करें। गायत्री, याः फली०, जातवेदसे सुन० अथवा त्र्यंबक मंत्र॥ २२॥

विष्णोरराटमन्त्रेण जपं वै कारयेत्तथा।
पञ्चलक्षप्रमाणेन यथा पापं प्रणश्यति॥ २३॥

भा० टी०—अथवा विष्णोरराट०—इन मंत्रों से पांच लाख प्रमाण तक जप करायें तब संपूर्ण पाप नष्ट होते हैं॥ २३॥

होमं वै कारयेद्देवि दशांशं विधिपूर्वकम्।
ततो वै तर्पणं कुर्यान्मार्जनं तु विशेषतः॥ २४॥

भा० टी०—विधिपूर्वक दशांश होम करायें, उसके अनंतर तर्पण और मार्जन करायें॥ २४॥

प्रतिमां कारयेत्तद्वद्विष्णोश्चैव सदाशिवे!
अष्टादशपलस्यैव सुवर्णस्य हरिं विभुम्॥ २५॥

भा० टी०—हे सदाशिवे! अठारह पल सुवर्ण की हरि-विष्णु भगवान् की मूर्ति बनवायें॥ २५॥

तद्वदेव शिवस्यैव रजतस्य परं विभुम्।
प्रतिमां पूजयेद्देवि मन्त्रेणानेन सुव्रते!॥ २६॥

भा० टी०—इसी तरह अठारह पल प्रमाण चांदी की शिव की मूर्ति बनवायें हे देवि! हे सुव्रते! पश्चात् इस मंत्र से पूजन करें॥ २६॥

ॐ गरुडध्वजदेवेश चराचरगुरो हरे!
वासुदेव जगन्नाथ पूर्वपापं विनाशय॥ २७॥

भा० टी०—ॐ हे गरुडध्वज! हे चर और अचर के गुरु! हे हरे! वासुदेव! हे जगन्नाथ! मेरे पूर्व पापों को नष्ट करो॥ २७॥

ॐ नन्दिकेश्वर भूतेश देवदेव सुरेश्वर!
मम पूजां गृहाण त्वं पूर्वपापं प्रणाशय॥ २८॥

भा० टी०—ॐ हे नंदिकेश्वर! हे भूतेश! हे देवदेव! सुरेश्वर! तुम मेरी पूजा को ग्रहण करो। पूर्वजन्म के पापों को नष्ट करो॥ २८॥

॥ ततः इन्द्रादिदशदिक्पालान्पूजयेत्॥

ॐ इन्द्राय नमः ॐ अग्नये नमः ॐ यमाय नमः।
ॐ निर्ऋतये नमः ॐ वरुणाय नमः ॐ वायवे नमः।
ॐ कुबेराय नमः ॐ ईशानाय नमः ॐ ब्रह्मणे नमः।
ॐ अनन्ताय नमः॥

गन्धपुष्पाक्षतैः सर्वान्पूजयेच्च पृथक् पृथक्।
ततो गां कपिलां देवि स्वर्णशृङ्गीं प्रपूजयेत्॥ २१॥

भा० टी०—तदनन्तर इंद्र आदि दशदिक्पालों का पूजन करें— ॐ इंद्राय नमः १, ॐ अग्नये नमः २, ॐ यमाय नमः ३, ॐ निर्ऋतये नमः ४, ॐ वरुणाय नमः ५, ॐ वायवे नमः ६, ॐ कुबेराय नमः ७, ॐ ईशानाय नमः ८, ॐ ब्रह्मणे नमः ९, ॐ अनंताय नमः १०—ऐसे इनका नाम उच्चारण कर गंध, पुष्प, अक्षत आदि सभी को पृथक्- पृथक् पूजें। हे देवि! पश्चात् सुवर्ण के सींग से युक्त की हुई कपिला गौ का पूजन करें॥ २९॥

मन्त्रेणानेन भो देवि सर्वपापहरां शुभाम्।
ॐ नमो भगवत्यै कामेश्वर्य्यै मम पापं व्यपोहतु स्वाहा
पुरा मम कृतं पापं कामधेनो सुरेश्वरि!।
कपिले त्वं जगन्मातर्मम कार्यं प्रसाधय॥ ३०॥

भा० टी०—हे देवि! संपूर्ण पापों को हरने वाली शुभ कपिला गौ को इस मंत्र से पूजें, मंत्रः—ॐ नमो भगवत्यै कामेश्वर्यै मम पापं व्यापोहतु स्वाहा। पहले किये हुए मेरे पापों को दूर करो। हे कामधेनो! हे सुरेश्वरि!! हे कपिले!! तुम जगत् की माता हो। मेरे कार्य को सिद्ध करो॥ ३०॥

ततश्च दद्याद्गां देवि ब्राह्मणाय शिवात्मने।
दशवर्णास्ततो दद्यात् पात्राणि विविधानि च॥ ३१॥

वृषभं च ततो देवि नीलवर्णं सुसंस्कृतम्।
ब्राह्मणाय प्रदद्यात्तु सर्वपापस्य संक्षयः॥ ३२॥

भा० टी०—दे देवि! पश्चात् शिव स्वरूपी ब्राह्मण को उस गौ का दान कर दें पश्चात् दश प्रकार के वर्णों वाली गौओं का दान करें और अनेक प्रकार के पात्रों का दान करें। हे देवि! पश्चात् अलंकृत किये हुए नील वृषभ को ब्राह्मण को दान करें। तब पाप नष्ट होते हैं॥ ३१॥ ३२॥

भोजयेद्विविधैरन्नैः पायसैश्च समोदकैः।
ब्राह्मणान् शतसंख्याकान् रुद्रविष्णुस्वरूपिणः॥ ३३॥

भा० टी०—अनेक प्रकार के अन्नों से, दूध के पदार्थ और लड्डू आदि से शिव-विष्णु स्वरूपी सौ ब्राह्मणों को भोजन करवायें॥ ३३॥

प्रतिमां दापयेत्पश्चाद्ब्राह्मणाय वराय च।
बन्धुभिः सह भुञ्जीत ततो विप्रविसर्जनम्॥ ३४॥

भा० टी०—पश्चात् उस मूर्ति को उत्तम ब्राह्मण को दान दें और बंधुजनों से युक्त हो कर भोजन करें तदनन्तर ब्राह्मणों का विसर्जन करें॥ ३४॥

यथाशक्ति प्रदद्याद्वै ब्राह्मणेभ्यश्च दक्षिणाम्।
हरिवंशस्य श्रवणं पार्थिवस्य च पूजनम्॥ ३५॥

भा० टी०—शक्ति के अनुसार ब्राह्मणों को दक्षिणा दें हरिवंश पुराण को सुनें, पार्थिव शिव का पूजन करें॥ ३५॥

भूमिदानं विशेषेण ब्राह्मणाय च दापयेत्।
एवं कृते वरारोहे पूर्वजन्मसमुद्भवम्॥ ३६॥

भा० टी०—विशेष कर ब्राह्मण को पृथ्वी का (भूमि का) दान दें हे वरारोहे! ऐसा करने से पूर्वजन्म का पाप दूर होता है॥ ३६॥

पापं प्रशमयेच्छीघ्रं मम वाक्यं च नान्यथा।
रोगादिविविधं दुःखं तत्सर्वं विलयं व्रजेत्॥ ३७॥

भा० टी०—पाप शीघ्र ही शांत होता है, यह मेरा वचन अन्यथा नहीं है। रोग आदि जो अनेक दु:ख हैं, वे सब शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं॥ ३७॥

वंशवृद्धिर्भवेद्देवि नात्र कार्या विचारणा।

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे पुनर्वसुनक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नामैकोनत्रिंशोऽध्यायः ॥ २९ ॥

भा० टी०—हे देवि! वंश की वृद्धि होती है इसमें भी सन्देह नहीं है ॥ ३८ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां भाषाटीकायां पुनर्वसु० द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नामैकोनत्रिंशोऽध्यायः ॥ २९ ॥

॥ ३० ॥

पुनर्वसुनक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

पुर्यामवन्तिकायां वै नापितो वसति प्रिये!।
स्वकर्मणः परिभ्रष्टः कृषिकर्मरतः सदा॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे देवि! उज्जैन नगरी में एक नाई रहता था, वह अपने कर्म से भ्रष्ट था और सदा खेती का काम किया करता था॥ १ ॥

पत्नी तस्य महादेवि परपुंसि रता सदा।
कर्कशा नाम विख्याता दर्दुरा नाम नामतः॥ २ ॥

भा० टी०—हे महादेवि! उसकी स्त्री सदा पर-पुरुष से रमण करती थी, वह कर्कशा थी। उसका नाम दुर्दरा था॥ २ ॥

एकस्मिन् दिवसे देवि वैश्यो धनसमन्वितः।
स्वर्णकोटिं च संगृह्य निकटे तस्य चागतः॥ ३ ॥

भा० टी०—हे देवि! एक दिन एक धनाढ्य वैश्य करोड़ों रुपयों के सुवर्ण को ले कर उसके पास आया॥ ३ ॥

नापितेन ततो देवि वैश्यो धनसमन्वितः।
अर्द्धरात्रे गते काले ततः खड्गेन वै हतः॥ ४ ॥

भा० टी०—हे देवि! तब उस नाई ने धन से युक्त उस वैश्य को अर्द्ध रात्रि के समय तलवार से मार दिया॥ ४ ॥

द्रव्यं सर्वं गृहीत्वा तु तां पुरीं च ततस्त्यजन्।
सर्वं स्वर्णं व्ययीकृत्वा न दानं च कृतं क्वचित्॥ ५ ॥

भा० टी०—फिर संपूर्ण द्रव्य को ग्रहण कर उस पुरी को त्याग कर संपूर्ण सुवर्ण को खर्च कर दिया और कुछ भी दान नहीं किया॥ ५ ॥

एकदा समये देवि नापितेन सह स्त्रिया।
प्रयागे मकरे मासि मासमेकं निरन्तरम्॥ ६ ॥

भा० टी०—हे देवि! एक बार उस नाई ने स्त्री सहित माघ महीने में प्रयागजी में निरंतर॥ ६॥

प्रत्यहं क्रियते स्नानं प्रातःकाले सदाशिवे!
गोदानं च कृतं तेन वृषभं स्वर्णभूषितम्॥ ७॥

भा० टी०—प्रतिदिन प्रातःकाल स्नान किया। हे सदाशिवे! फिर गोदान किया और स्वर्ण से विभूषित किये बैल का दान किया॥ ७॥

ततो वै मरणं तस्य नापितस्य सुरेश्वरि!
निर्जले तस्य भो देवि चोपले पथि मध्यगे॥ ८॥

भा० टी०—हे सुरेश्वरि! पश्चात् उस नाई की मृत्यु मार्ग में कहीं निर्जल स्थान में एक पत्थर पर हो गयी॥ ८॥

यमदूतैर्महादेवि नरके नाम कर्दमे।
क्षिप्तो यमाज्ञया वर्षसहस्त्रं षष्टिसंमितम्॥ ९॥

भा० टी०—हे महादेवि! तदनन्तर धर्मराज के दूतों ने यम की आज्ञा से साठ हजार वर्षों तक उसे नरक में रखा॥ ९॥

नरकान्निर्गतो देवि व्याघ्रयोनिस्ततोऽभवत्।
पुनर्महिषयोनिं च मानुषत्वं ततो गतः॥ १०॥

भा० टी०—हे देवि! नरक से निकरल कर वह व्याघ्र की योनि में पश्चात् भैंसे की योनि फिर मनुष्य योनि को प्राप्त हुआ॥ १०॥

ऋक्षे पुनर्वसौ देवि तृतीयचरणे वरे!
प्रातःस्नानफलं देवि नृपवंशसमुद्भवः॥ ११॥

भा० टी०—हे देवि! पुनर्वसुनक्षत्रके तीसरे चरण में जन्म लेने वाला यह प्रातःकाल स्नान के फल से राजकुल में उत्पन्न हुआ है॥ ११॥

मध्यदेशे वरारोहे सरय्वा उत्तरे तटे।
महाधनेन संयुक्तश्चौराणां कर्मकारकः॥ १२॥

भा० टी०—हे वरारोहे! मध्यदेश में सरयू नदी के उत्तर तट पर वह धन-वैभव से युक्त है और चौरों का कर्म करने वाला है॥ १२॥

पत्नी तस्य भवेद्वन्ध्या मृतवत्सा सुतायुता।
कफरोगसमायुक्ता ज्वरेणैव प्रपीडिता॥ १३॥

भा० टी०—उसकी स्त्री वंध्या है अथवा उसकी संतान नहीं जीती है, या कन्या ही जन्मती है, वह कफ रोग से युक्त है और ज्वर से पीड़ित है॥ १३॥

मित्रस्यैव वधः पूर्वं नापितेन यतः कृतः।
तेन कर्मफलेनैव महारोगसमुद्भवः॥ १४॥

भा० टी०—इसने जो पूर्वजन्म में (नाई की योनि में) मित्र का वध किया, उस कर्म-फल से यह महारोग से पीडित है॥ १४॥

पुत्रोऽपि जायते देवि तस्य मृत्युर्भवेत् किल।
शान्तिं तस्य प्रवक्ष्यामि शृणु देवि समासतः॥ १५॥

भा० टी०—हे देवि! पुत्र भी जन्मा था, किन्तु उसकी मृत्यु हो गई। अब उसकी शांति कहता हूँ हे देवि! संक्षेप से सुनो॥ १५॥

गायत्रीमूलमन्त्रेण पञ्चलक्षजपो यदा।
तदा पापं क्षयं याति पूर्वजन्मनि यत्कृतम्॥ १६॥

भा० टी०—जब गायत्री मूल मंत्र से पांच लाख तक जप कराये जायें, तब पूर्वजन्म का पाप नष्ट हो जाता है॥ १६॥

हरिवंशस्य श्रवणं चण्डीपाठं शिवार्चनम्।
विधिवद्देवि कर्तव्यं पापं सर्वं विनश्यति॥ १७॥

भा० टी०—हरिवंश को सुनें दुर्गापाठ करायें विधि से शिवजी का पूजन करायें, हे देवि! ऐसा करने से संपूर्ण पाप नष्ट होते हैं॥ १७॥

चतुरस्त्रे ततः कुण्डे होमं चैव तु कारयेत्।
तिलधान्यादिभिर्देवि दशांशजपसंख्यया॥ १८॥

भा० टी०—पश्चात् जपों की दशांश संख्या से चौकोर कुंड में तिलधान्य आदि से होम करें॥ १८॥

वैश्यस्य प्रतिमां देवि कारयेद्वै सुवर्णतः।
पञ्चविंशपलेनैव रचितां च प्रयत्नतः॥ १९॥

भा० टी०—हे देवि! प्रयत्नपूर्वक पच्चीस पल की सुवर्ण की वैश्य की मूर्ति बनायें॥ १९॥

ताम्रपात्रे शुभे स्थाप्य पूजयेत्प्रतिमां ततः।
मन्त्रेणानेन भो देवि गन्धपुष्पाक्षतादिभिः॥ २०॥

भा० टी०—तदनन्तर उत्तम तांबे के पात्र में उस मूर्त्तिको स्थापित कर पश्चात् गंध, अक्षत आदि से इस मंत्र से पूजन करें॥ २०॥

ॐ नमस्ते देवदेवेश शङ्खचक्रगदाधर!
अज्ञानाद्वा प्रमादाद्वा मया पापं कृतं पुरा॥ २१॥

भा० टी०—ॐ हे देवदेवेश! हे शंखचक्रगदाधर! अज्ञान से अथवा प्रमाद से मैनें पूर्वजन्म में पाप किये॥ २१॥

तत्सर्वं क्षम्यतां देव शरणागतवत्सल।
ॐ चक्रधराय नमः ॐ गोविन्दाय नमः।
ॐ दामोदराय नमः ॐ कृष्णाय नमः।
ॐ हंसाय नमः ॐ परमहंसाय नमः।
ॐ अच्युताय नमः ॐ हृषीकेशायनमः॥
ॐ चक्रादिनामभिश्चैतैः सर्वदिक्षु प्रपूजयेत्।
प्रतिमां पूजयित्वा तु तां विप्राय प्रदापयेत्॥ २२॥

भा० टी०—हे शरणागतवत्सल! उस संपूर्ण को क्षमा करो, मन्त्र—ॐ चक्रधराय नमः १, ॐ गोविंदायः २, ॐ दामोदराय नमः ३, ॐ कृष्णाय नमः ४, ॐ हंसाय नमः ५, ॐ परमहंसाय नमः ६, ॐ अच्युताय नमः ७, ॐ हृषीकेशाय नमः ८—ऐसे इन चक्रधर के नामों से संपूर्ण दिशाओं मे पूजें। प्रतिमा का पूजन करके ब्राह्मण को दान दें॥२२॥

ततो गां कृष्णवर्णां तु ब्राह्मणाय प्रदापयेत्।
पञ्चसंख्यमितं देवि प्रदद्याद्वै कुटुम्बिने॥ २३॥

भा० टी०—तदनन्तर कृष्ण वर्ण की पाँच गौओं का दान किसी कुटुंबी ब्राह्मण को दें॥ २३॥

ब्राह्मणान्भोजयेद्देवि यथासंख्यान्वरानने!
एवं कृते वरारोहे शीघ्रं पुत्रः प्रजायते॥ २४॥

भा० टी०—हे देवि! यथासंख्य, शक्ति के अनुसार ब्राह्मणों को भोजन करायें। हे वरारोहे! ऐसा करने से शीघ्र ही पुत्र होता है॥ २४॥

वन्ध्यत्वं नाशयत्याशु सर्वरोगो विनश्यति।

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे पुनर्वसुनक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम त्रिंशोऽध्यायः॥ ३०॥

भा० टी०—शीघ्र ही वंध्यापन दूर होता है और संपूर्ण रोग नष्ट होते हैं॥

इति श्रीकर्मविपाक० पुनर्वसुनक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम त्रिंशोऽध्यायः॥ ३०॥

॥ ३१ ॥

पुनर्वसुनक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

अवन्त्याः पश्चिमे देवि क्रोशमात्रोपरि प्रिये!
कैवर्त्तको वसत्येको नन्दने च पुरे शुभे ॥ १ ॥

भा० टी०—हे देवि! अवन्ती नगरी से पश्चिम की तरफ एक कोश पर, नंदन नामक पुर में एक धीवर रहता था ॥ १ ॥

मनोहर इति ख्यातो धनाढ्यो जायते महान्।
मत्ता तस्याऽभवत्पत्नी पतिशुश्रूषणे रता ॥ २ ॥

भा० टी०—वह मनोहर नाम से विख्यात धनाढ्य था, मत्ता नामक उसकी स्त्री पति की सेवा करती थी ॥ २ ॥

मत्स्यमांसस्य भो देवि विक्रयं चाकरोत् खलु।
संचितं बहुरत्नं च न दानं बहुधाकरोत् ॥ ३ ॥

भा० टी०—हे देवि! वह सदा मत्स्य के मांस का भक्षण करता था, उसने बहुत-सा धन संचित किया, पंरतु कभी दान नहीं किया ॥ ३ ॥

एकदा चन्द्रग्रहणे शतस्वर्णयुतं वृषम्।
अदाद्विप्राय विदुषे भार्यया सह भक्तितः ॥ ४ ॥

भा० टी०—एक समय चंद्रमा के ग्रहण के समय उसने सौ मोहरों से युक्त एक बैल को विद्वान् ब्राह्मण को स्त्री सहित जा कर भक्ति पूर्वक दान दिया ॥ ४ ॥

ततो मृत्युवशं यातो भार्या तस्य मृता पुरा।
यमदूतैर्महाघोरैर्नरके पातितं पुरा ॥ ५ ॥

भा० टी०—पश्चात् मृत्यु के वशीभूत हो गया और उसकी स्त्री पहले ही मर गई थी, उसे फिर धर्मराज के दूतों ने महाघोर नरक में पटक दिया ॥ ५ ॥

यमाज्ञया महादेवि षष्टिवर्षसहस्त्रकम्।
नरकान्निःसृतो देवि शृगालो गहने वने ॥ ६ ॥

भा० टी०—हे महादेवि! वह साठ हजार वर्षों तक नरक में रहा, फिर नरक से निकल कर वह गह्वर वन में गीदड़ हुआ॥ ६॥

पुनः काको वरारोहे ततो भवति मानुषः।
गुणज्ञो देवताभक्तो वेश्यासु रततत्परः॥ ७॥

भा० टी०—हे वरारोहे! पश्चचात् कौआ हुआ, पीछे मनुष्य हुआ, वह गुणज्ञ है और देवता का भक्त है, परंतु वेश्यागामी है॥ ७॥

रागी सूक्ष्मतनुर्वक्ता ज्ञानवान् सुतवर्जितः।
तस्य भार्या भवेत्स्थूला कुरूपा कर्कशा तथा॥ ८॥

भा० टी०— वह प्रीति करने वाला, सूक्ष्म शरीर वाला, वक्ता तथा ज्ञानवान् है, पुत्र, रहित है, उसकी भार्या स्थूल शरीर वाली है, कुरूपा और कर्कशा है॥ ८॥

पूर्वजन्मप्रसङ्गाच्च मत्स्यमांसोपभोगिनी।
मासि पुष्पं भवेद्देवि गर्भस्य पतनं तथा॥ ९॥

भा० टी०—पूर्वजन्म के प्रसंग से वह मत्स्य-मांस को खाने वाली है, प्रति महीने वह रजस्वला होती है, परंतु गर्भपात होता है॥ ९॥

अस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणु देवि सुशोभने!
यत्कृतेन वरारोहे शीघ्रं पुत्रमवाप्नुयात्॥ १०॥

भा० टी०—अब इसकी शांति को कहता हूँ हे देवि! हे सुशोभने! इसको करने से शीघ्र ही पुत्र उत्पन्न होता है॥ १०॥

हरिवंशस्य श्रवणं त्रिवारं च विधानतः।
गायत्रीमूलमन्त्रेण पञ्चलक्षजपं तथा॥ ११॥

भा० टी०—विधिपूर्वक तीन वार हरिवंश पुराण को सुनें, गायत्री मूल मंत्र के पांच लाख तक जप करायें॥ ११॥

दशांशं हवनं देवि दशांशं चैव तर्पणम्।
मार्जनञ्च विशेषेण दशांशं चैव कारयेत्॥ १२॥

भा० टी०—हे देवि! विशेष रूप से दशांश होम करायें दशांश तर्पण तथा तद्दशांश से मार्जन करायें॥ १२॥

ततो गां कपिलां दद्याद्दशवर्णां ततः प्रिये!
सूर्यस्य प्रतिमां देवि स्वर्णैर्दशपणैस्तथा॥ १३॥

भा० टी०—पश्चात् कपिला गौ का दान करें और दश वर्ण वाली गौ का दान करें दश तोले प्रमाण सुवर्ण की सूर्य की मूर्ति बनवायें॥ १३॥

भूषितां विविधैर्वस्त्रैः स्वर्णरौप्यविभूषणैः।
पूजयित्वा विधानेन मन्त्रेणानेन पार्वति!॥ १४॥

भा० टी०—पश्चात् अनेक वस्त्रों से विभूषित कर सोना-चांदी के आभूषणों से युक्त कर हे पार्वति! विधान पूर्वक इस मंत्र से पूजन कर॥ १४॥

ॐ त्वं ज्योतिः सर्वलोकानां पूज्यस्त्वं सर्वदेहिनाम्।
पूर्वजन्मकृतं पापं हर मे तिमिरापह!॥ १५॥

भा० टी०—ॐ तुम संपूर्ण लोकों की ज्योति हो, संपूर्ण देहधारियों के पूज्य हो, हे तिमिर-नाशक! मेरे पूर्वजन्म-कृत पापों को हरो॥ १५॥

ॐ श्रीसूर्याय नमः ॐ सवित्रे नमः ॐ साक्षिणे नमः।
ॐ त्रिगुणात्मने नमः ॐ द्वादशात्मने नमः ॐ केयूरधारिणे नमः।
ॐ तीक्ष्णांशुधारिणे नमः ॐ कलाकाष्ठादिरूपिणे नमः।
ॐ विष्णवे नमः ॐ ब्रह्मणे नमः ॐ रुद्राय नमः।
ॐ मार्तण्डाय नमः।

ॐ मन्त्रैर्द्वादशभिर्देवि पूजयेत्प्रतिमां ततः।
धूपदीपादिभिश्चैव ताम्बूलैश्च विधानतः॥ १६॥

भा० टी०—ॐ श्रीसूर्याय नमः १, ॐ सवित्रे नमः २, ॐ साक्षिणे नमः ३, ॐ त्रिगुणात्मने नमः ४, ॐ द्वादशात्मने नमः ५, ॐ केयूरधारिणे नमः ६, ॐ तीक्ष्णांशुधारिणे नमः ७, ॐ कलाकाष्ठादिरूपिणे नमः ८, ॐ विष्णवे नमः ९, ॐ ब्रह्मणे नमः १०, ॐ रुद्राय नमः ११, ॐ मार्त्तंडाय नमः १२, हे देवि! इन बारह मंत्रों से धूप, दीप आदि से तथा पान समर्पण करके विधि पूर्वक पूजन करें॥ १६॥

पूजितां प्रतिमां दद्याद्ब्राह्मणाय वराय च।
दासीदासं धनं धान्यं ब्राह्मणाय प्रदापयेत्॥ १७॥

भा० टी०—पूजा की हुई मूर्त्ति को उत्तम ब्राह्मण को दान दें। दास, दासी, धन, धान्य—ये भी सब वस्तु ब्राह्मण को दान कर दें॥ १७॥

अश्वदानं रथं वस्त्रं पात्राणि विविधानि च।
शय्यादिकं वरारोहे वित्तशाठ्यं न कारयेत्॥ १८॥

भा० टी०—अश्व, रथ अनेक प्रकार के वस्त्र—इन सब का भी दान करें। हे वरारोहे! वित्तशाठ्य अर्थात् कृपणता नहीं करें॥ १८॥

एवं कृते न संदेहश्चिरंजीविसुतं लभेत्।
पूर्वजन्मकृतं पापं क्षयं याति न चान्यथा॥ १९॥

भा० टी०—ऐसा करने से निश्चय ही चिरंजीवी पुत्र की प्राप्ति होती है और पूर्वजन्म में किया हुआ पाप भी नष्ट होता है॥ १९॥

सप्तम्यां रवियुक्तायां व्रतं कुर्यात्सुरेश्वरि!।
पापं व्याधिः क्षयं याति ज्वरः क्वापि न जायते॥ २०॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे पुनर्वसुनक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं नामैकत्रिंशोऽध्यायः॥ ३१॥

भा० टी०—हे सुरेश्वरि! रविवार-सप्तमी का व्रत करें। हे सुरेश्वरि! ऐसा करने से संपूर्ण पाप और व्याधि नष्ट होते हैं और ज्वर कहीं भी नहीं रहता है॥ २०॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां भाषाटीकायां० पुनर्वसु० नामैकत्रिंशोऽध्यायः॥ ३१॥

॥ ३२ ॥

पुष्यनक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

पापेन जायते व्याधिः पापेनैवाऽसुतो भवेत्।
पापेन जायते मूर्खः पापेनैव दरिद्रता॥ १॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—पाप से व्याधि होती है और पाप से ही पुत्र नहीं होते, पाप से मूर्ख होता है, पाप से ही दरिद्री होता है॥ १॥

पूर्वजन्मकृतं यत्तु पापं वा पुण्यमेव वा।
इह जन्मनि भो देवि भुज्यते सर्वदेहिभिः॥ २॥

भा० टी०—हे देवि! पूर्वजन्म में किया हुआ पुण्य अथवा पाप इस जन्म में संपूर्ण देहधारियों द्वारा भोगा जाता है॥ २॥

पुण्येन जायते विद्या पुण्येन जायते सुतः।
पुण्येन सुन्दरी नारी पुण्येन लभते श्रियम्॥ ३॥

भा० टी०—पुण्य से विद्या प्राप्त होती है, पुण्य से पुत्र उत्पन्न होता है, पुण्य से सुंदरी नारी और पुण्य से लक्ष्मी की प्राप्ति होती है॥ ३॥

अथातः संप्रवक्ष्यामि पुष्यनक्षत्रजं फलम्।
तत्सर्वं शृणु मे देवि यत्कृतं पूर्वजन्मनि॥ ४॥

भा० टी०—अब पुष्प नक्षत्र में जन्म लेने वाले के फल को कहता हूँ हे देवि! उसके पूर्वजन्म में किये हुए कर्मों को सुनों॥ ४॥

मध्यदेशे वरारोहे धनाढ्यो बल्लवोऽवसत्।
इंसकेतुरिति ख्यातो भार्या तस्य तु केकयी॥ ५॥

भा० टी०—हे वरारोहे! मध्यदेश में एक धनाढ्य (गोपजाति) अहीर रहता था, उसका नाम हंसकेतु और उसकी स्त्री का नाम केकयी था॥ ५॥

बहवो वृषभास्तस्य महिष्यो गास्तथा प्रिये!।
धर्मकर्मरतश्शूद्रो विक्रयेद्गोवृषादिकम्॥ ६॥

भा० टी०—हे प्रिये! उसके पास बहुत से बैल, भैंस, गौ, थीं। वह शूद्र धर्म-कर्म में रत था और गाय-बैलों को बेचता था॥ ६॥

घृततक्रस्य भो देवि विक्रयं कुरुते सदा।
एको वैश्यो धनाढ्यो वै तस्य मित्रं तदाभवत्॥ ७॥

भा० टी०—हे देवि! वह घृत तथा तक्र को बेचता था, तब उसकी मित्रता एक धनाढ्य वैश्य से हो गयी॥ ७॥

महाप्रीतिस्तयोर्जाता वहुवर्षप्रमाणतः।
एकदा तु निशायां वै शूद्रेण वणिकः प्रिये!॥ ८॥

भा० टी०—तदनन्तर बहुत वर्षों तक उन दोनों के मध्य अत्यंत प्रीति रही। हे प्रिये! एक समय उस शूद्र के द्वारा उस वैश्य की॥ ८॥

शुभरत्नादिलाभाय कटारेण तदा हतः।
द्रव्यं सर्वं गृहीतं तु भूमिमध्ये तथा धृतम्॥ ९॥

भा० टी०—सुंदर रत्न आदि के लालच में कटारी से हत्या कर दी फिर उसका संपूर्ण धन ले कर भूमि में गाढ़ दिया॥ ९॥

तन्मध्ये तु षडंशस्य व्ययं कुर्याद्दिने दिने।
बहुवर्षगते काले शूद्रो मृत्युवशोऽभवत्॥ १०॥

भा० टी०—फिर उसमें से छठे हिस्से धन को प्रतिदिन के व्यय में खर्चता रहा बहुत से वर्ष बीत जाने पर तब उस शूद्र की भी मृत्यु गयी॥ १०॥

पातयामास घोरे तु यमदूतो यमाज्ञया।
षष्टिवर्षसहस्राणि भुक्त्वा नरकयातनाम्॥ ११॥
ततो जातो महादेवि राक्षसो गहने वने।
पुनः शृगालयोनिं च मानुषत्वं भवेत्पुनः॥ १२॥

भा० टी०—यम की आज्ञा से यम के दूतों उस को घोर नरक में पटक दिया फिर साठ हजार वर्षों तक नरक की पीड़ा को भोग कर वह गह्वर वन में राक्षस हुआ, पश्चात् गीदड़ की योनि में पैदा हुआ, फिर मनुष्य योनि को प्राप्त हुआ है॥ ११॥ १२॥

धनधान्यसमायुक्तो भार्या जाता तु या पुरा।
वन्ध्यारोगसमायुक्ता कन्यका चैव जायते॥ १३॥

भा० टी०—वह धनधान्य से युक्त है, पूर्वजन्म में जो उसकी स्त्री थी, वह बंध्यारोग से युक्त है अथवा उसकी कन्या ही जन्मती है॥ १३॥

तस्य रोगो भवेत्पश्चाद्द्विविधश्च वयोन्तरे।
पूर्वजन्मनि भो देवि मित्रं च निहतं यतः॥ १४॥

भा० टी०—तत्पश्चात् अवस्थांतर में पूर्वजन्म में मित्र को मारने के कारण अनेक प्रकार के रोग हो गये हैं। हे देवि! इसने॥ १४॥

तत्पापेन च भो देवि पुत्रो नैवोपजायते।
बहुपुत्रप्रघाती च कम्परोगी प्रजायते॥ १५॥

भा० टी०—हे देवि! उस पाप से उसको पुत्र प्राप्त नहीं होता है, बहुत पुत्रों को मारने (उसके पत्नी के गर्भपात होते हैं) वाला उसे कंपवात रोग है॥ १५॥

तस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणु देवि सुशोभने!
षडंशं वै ततो दानं विदुषे ब्राह्मणाय च॥ १६॥

भा० टी०—हे देवि! हे सुशोभने! उसकी शांति को कहता हूँ, सुनो विद्वान् ब्राह्मण को छठे हिस्से धन का दान दें॥ १६॥

गां तथा महिषीं दद्याद्विधिवद्भोजयेद्द्विजान्।
गायत्रीजातवेदाभ्यां द्विलक्षं च जपं ततः॥ १७॥

भा० टी०—गौ तथा महिषी का दान करें, विधिपूर्वक ब्राह्मणों को भोजन करायें, गायत्री जातवेदसे सुन०—इन मंत्रों से दो लाख तक जप करायें॥ १७॥

कुण्डे कोणत्रये चैव होमं वै कारयेत्ततः।
जपस्यैव दशांशेन हवनादिकमाचरेत्॥ १८॥

भा० टी०—त्रिकोण कुंड में होम करायें, जप की दशांश संख्या से हवन आदि कर्म का आचरण करें॥ १८॥

ततो वै प्रतिमां कुर्याद्वैश्यस्यैव विधानतः।
द्वादशेन पलेनैव सुवर्णस्य विशेषतः॥ १९॥

भा० टी०—तत्पश्चात् विधिपूर्वक बारह पल प्रमाण की सुवर्ण की वैश्यमूर्ति बनवायें॥ १९॥

पूजयेत्पूर्वजैर्मन्त्रैस्ततो विप्राय दापयेत्।
एवं कृते न संदेहो पुत्रो भवति नान्यथा॥ २०॥

भा० टी०—पूर्वोक्त मंत्रों से प्रतिमा का पूजन कर पश्चात् ब्राह्मण को दानकर दें। ऐसा करने से पुत्र होता है, इसमें संदेह नहीं है॥ २०॥

सर्वरोगःक्षयं याति नात्र कार्या विचारणा॥ २१॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे पुष्यनक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम द्वात्रिंशोऽध्यायः॥ ३२॥

भा० टी०—संपूर्ण रोग नष्ट होता है, इसमें कुछ भी सन्देहास्पद नहीं है॥ २१॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्व० पुष्यनक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम द्वात्रिंशोऽध्यायः॥ ३२॥

॥ ३३ ॥

पुष्यनक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

अथातः संप्रवक्ष्यामि शृणु देवि विशेषतः।
आदौ पापफलं देवि भुज्यते देवमानुषैः ॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे देवि! अब जो कहता हूँ सब विशेष करके सुनो। पहले पाप का फल संपूर्ण देव, मनुष्य आदि के द्वारा भोगा जाता है ॥ १ ॥

पश्चात्पुण्यफलं देवि परलोके इहापि वा।
एकः शिल्पकरो देवि वसते हस्तिनापुरे ॥ २ ॥

भा० टी०—हे देवि! पश्चात् पुण्य का फल इस लोक में तथा परलोक में भोगा जाता है। हे देवि! हस्तिनापुर में एक शिल्पकार (कारीगर) रहता था ॥ २ ॥

हेमदास इति ख्यातो भार्याद्वयसमन्वितः।
प्रत्यहं शिल्पकार्यं च करोति व्ययकारणात् ॥ ३ ॥

भा० टी०—हेमदास नामक वह शिल्पकार दो स्त्रियों से युक्त था। अपने खर्च चलाने के लिए प्रतिदिन कारीगरी का काम किया करता था ॥ ३ ॥

काशीतः पश्चिमे देवि स्वकर्मनिरतः सदा।
अश्वत्थानां च वृक्षाणां छेदनानि चकार सः ॥ ४ ॥

भा० टी०—हे देवि! वह सदा अपने कर्म में तत्पर रह कर काशीजी से पश्चिम की तरफ पीपल वृक्षों को छेदन करता था ॥ ४ ॥

एवं बहुगते काले शिल्पकारो मृतः प्रिये!।
नरके तस्य पतनं षष्टिवर्षसहस्रकम् ॥ ५ ॥

भा० टी०—हे प्रिये! ऐसे बहुत-सा समय बीतने पर तब वह शिल्पकार मर गया। वह साठ हजार वर्षों तक नरक में पड़ा रहा ॥ ५ ॥

पत्न्या सह वरारोहे यातो योनिं बिडालकाम्।
बिडालयोनिं वै भुक्त्वा सरटस्तु ततोऽभवत् ॥ ६ ॥

भा० टी०—हे वरारोहे! वह तदनन्तर स्त्री सहित बिलाव की योनि को प्राप्त हुआ। बिलाव की योनि को भोग कर छिपकली बन गया॥ ६॥

पुनः स्यान्मानुषो देवि मध्यदेशे सुपूजितः।
पूर्वजन्मनि वृक्षाणां छेदनं प्रत्यहं कृतम्॥ ७॥

भा० टी०—हे देवि! पश्चात् मध्य देश में सम्माननीय मनुष्य की योनि में पैदा हुआ है, पूर्वजन्म में वह प्रतिदिन वृक्षों को काटता था, ७॥

तेन पापेन भो देवि पुत्रो नैव प्रजायते।
कन्यकाश्चैव संजाताः स्त्रिया रोगः सुदारुणः॥ ८॥

भा० टी०—हे देवि! उस पाप के कारण उसके पुत्र नहीं होता है। कन्या जन्मती है और स्त्री को दारुण रोग हो रहा है॥ ८॥

शरीरे महती पीडा रात्रौ निद्रा न लभ्यते।
कन्यकायाश्च वैधव्यं वृक्षच्छेदनतः प्रिये!॥ ९॥

भा० टी०—उसके शरीर में बहुत-सी पीड़ा होती है। रात्रि में निद्रा भी नहीं आती है। हे प्रिये! वृक्षों के छेदन करने से उसकी कन्या विधवा हो गई है॥ ९॥

तस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि ततः पापनिवर्त्तनम्।
चतुर्थांशं तु वै दानं ब्राह्मणाय प्रदापयेत्॥ १०॥

भा० टी०—अब इसकी शांति को कहता हूँ जिससे पाप-निवृत्त होगा। घर के वित्त का चतुर्थांश को ब्राह्मण को दान दान कर दें॥ १०॥

दशायुतं जपं कुर्यात् गायत्रीमूलमन्त्रतः।
पलपञ्चसुवर्णस्य वृक्षं वै कारयेत्ततः॥ ११॥

भा० टी०—गायत्री मूल मंत्र से एक लाख तक जप करायें और पांच पल सुवर्ण का वृक्ष बनवायें॥ ११॥

पूजयित्वा यथान्यायं वृक्षं विप्राय दापयेत्।
पञ्चधेनुं तथा दद्याद् वृषं चाभरणान्वितम्॥ १२॥

भा० टी०—यथार्थ-विधि से पूजित उस वृक्ष को दान कर दें पांच गौ और आभूषित किये हुए एक बैल का दान करें॥ १२॥

कूष्माण्डं नारिकेरं च पञ्चरत्नसमन्वितम्।
गङ्गामध्ये च दातव्यं ततः पापक्षयो भवेत्॥ १३॥

भा० टी०—कूष्माण्ड और नारियल को पाँच रत्न से भर कर गंगाजी के मध्य में दान करें तब पाप नष्ट होता है॥ १३॥

सर्वव्याधिः क्षयं याति कन्यका च सुखान्विता।
पुत्रश्चैव प्रजायेत नात्र कार्या विचारणा॥ १४॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे पुष्यनक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नामत्रयस्त्रिंशोऽध्यायः॥ ३३॥

भा० टी०—संपूर्ण व्याधि दूर होती है और कन्या सुख से युक्त होती है पुत्र उत्पन्न होता है इसमें कुछ भी सन्देहास्पद नहीं है॥ १४॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पुष्यनक्षत्रस्य द्वितीयचरणे प्रायश्चित्तकथनं नामत्रयस्त्रिंशोऽध्यायः॥ ३३॥

॥ ३४ ॥

पुष्यनक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

मध्यदेशे वरारोहे लोहकारश्च तस्थिवान्।
गौरेका लोहकारेण बाल्यतः पालिता शिवे!॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे वरारोहे! अर्थात् (हे उत्तम जंघों वाली), हे शिवे! मध्य देश में एक लोहकार (लुहार) रहता था, उसने बचपन से ही एक गौ पाली थी॥ १ ॥

एकस्मिन्दिवसे देवि पङ्के मग्ना च गौर्वरा।
तच्छ्रुत्वा लोहकारस्तु न गतस्तत्र वै शिवे!॥ २ ॥

भा० टी०—हे देवि! एक दिन वह गौ कीचड़ में धँस गयी, तब सुन कर भी वह लोहकार उसे लाने नहीं गया॥ २ ॥

मृता रात्रौ तदा देवि पङ्के वैतरणी च सा।
बहुघस्रात्ततो देवि मरणं तस्य वै गृहे॥ ३ ॥

भा० टी०—हे देवि! तब वह गौ उस कीचड़ में रात्रि के समय मर गई। हे देवि! तत्पश्चात् बहुत दिन बीत जाने पर घर में ही उस लोहार की भी मृत्यु हो गयी॥ ३ ॥

तस्य पत्नी सती जाता सत्यलोकं गतौ च तौ।
दशलक्षमितं वर्षं सत्यलोके च तस्थिवान्॥ ४ ॥

भा० टी०—तब उसकी स्त्री सती हो गयी, जिससे दोनों को सत्यलोक प्राप्त हुआ। दश लाख वर्षों तक स्वर्ग लोक में रहे ॥ ४ ॥

पुनः पुण्यक्षये जाते मर्त्यलोके तदाभवत्।
मानुषः शुभजन्मा च धनधान्यसमन्वितः॥ ५ ॥

भा० टी०—फिर पुण्य क्षीण होने पर तब मृत्यु लोक में मनुष्य योनि में उनका जन्म हुआ वह उत्तम कुल वाला तथा धनधान्य से युक्त है॥ ५ ॥

पत्न्या सह वरारोहे ब्राह्मणानां च सेवकः।
पूर्वजन्मनि देवेशि पङ्के मग्ना च यत्र गौः॥ ६ ॥

भा० टी०—हे वरारोहे! स्त्री सहित वह ब्राह्मणों का सेवक है। हे देवि! पूर्वजन्म में जब कीचड़ में गौ धँस गई थी॥ ६॥

न गतस्तत्र भो देवि तस्मात्पुत्रो न जायते।
कन्या जाता पुरा देवि तस्या मृत्युश्च जायते॥ ७॥

भा० टी०—तब वह वहाँ नहीं गया था, हे देवि! इसलिये उसका पुत्र नहीं होता है और पहले उनकी कन्या जन्मी थी उसकी भी मृत्यु हो गई है॥ ७॥

तदर्थं वाटिकां कूपं पथि मध्ये च कारयेत्।
कुर्याच्चैव तुलादानं पात्राणि विविधानि च॥ ८॥

भा० टी०—उस पाप की शांति के लिए मार्ग में बावड़ी अथवा कूआँ बनवायें तुलादान करें, अनेक प्रकार के पात्रों का दान करें॥ ८॥

गोयुग्मं घृतकुम्भं च ब्राह्मणाय प्रदापयेत्।
गायत्रीमन्त्रजाप्यं च लक्षमेकं तु कारयेत्॥ ९॥

भा० टी०—गोयुग्म (गौकाजोड़ा), घृतकलश—इनका दान ब्राह्मण को दें और एक लाख गायत्री का जप करायें॥ ९॥

होमं कुर्यात्ततो देवि तिलधान्यादितण्डुलैः।
ब्राह्मणान्भोजयेद्देवि शतसंख्यान्वरानने!॥ १०॥

भा० टी०—हे देवि! तत्पश्चात् तिल, जौ, चावलों से होम करें। हे वरानने! पश्चात् सौ ब्राह्मणों को भोजन करायें॥ १०॥

एवं कृत्वा वरारोहे पुत्रो भवति नान्यथा।
वन्ध्यात्वं नाशमायाति व्याधिनाशो भवेद्ध्रुवम्॥ ११॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहर०संवादे पुष्यनक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नामचतुस्त्रिंशोऽध्यायः॥ ३४॥

भा० टी०—हे वरारोहे! ऐसा करने से पुत्र होता है, इसमें अन्यथा नहीं। वंध्यापन रोग दूर होती है और निश्चय ही व्याधि का नाश होता है॥ ११॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पुष्यनक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम चतुस्त्रिंशोऽध्यायः॥ ३४॥

॥ ३५ ॥

पुष्यनक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

अयोध्यानगराद्देवि पूर्वे क्रोशचतुर्दशे।
तत्राप्येको ऽवसच्छाककारो वैडुम्बराभिधः ॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे देवि! अयोध्यानगर से पूर्वदिशा में चौदह कोश एक वैडुंबर नामक शाकाकार रहता था ॥ १ ॥

चिन्ता तस्याऽभवत्पत्नी पतिसेवापरायणा।
शाककारो महासाधुर्विष्णुभक्तिरतः सदा ॥ २ ॥

भा० टी०—और चिंता नामक उसकी स्त्री पति की सेवा में तत्पर थी, ऐसा शाककार महा साधु संपूर्ण समय में विष्णु की भक्ति में रत रहता था ॥ २ ॥

गुरुसेवारतो नित्यं प्रत्यहं शाकविक्रयी।
एका मार्जारिका श्वेता पालिता तेन वै हता ॥ ३ ॥

भा० टी०—और गुरु-सेवा में नित्य रत प्रतिदिन शाकको बेचने का कार्य करता था उसने एक पाली हुई सफेद बिल्ली मार दी ॥ ३ ॥

प्राप्तौ वै तमसातीरे तीर्थे मृत्युर्मम प्रिये!
विष्णुभक्तिरतो यस्मात्तीर्थे मृत्युफलादपि ॥ ४ ॥

भा० टी०—हे प्रिये! नित्य विष्णु की भक्ति करने से तमसा नामक नदी के तट पर मेरे तीर्थ में उसकी मृत्यु हुई ॥ ४ ॥

न गतो यमलोकं तु भुक्त्वा स्वर्गं तु चाऽभवत्।
षष्टिवर्षसहस्राणि पुनः पुण्यक्षयो यदा ॥ ५ ॥

भा० टी०—तब वह यम-लोक में भी नहीं गया। साठ हजार वर्षों तक स्वर्गवास होने पर पुण्य नष्ट होने के कारण ॥ ५ ॥

तदा वृषभयोनिश्च मर्त्यलोकेऽभवत्पुनः।
मानुषत्वं ततो यातो धनधान्यसमन्वितः ॥ ६ ॥

भा० टी०—तब वह मृत्यु लोक में बैल की योनि को प्राप्त हुआ फिर धनधान्य से युक्त मनुष्य योनि को प्राप्त हुआ है॥ ६॥

सुन्दरो विष्णुभक्तित्वात्पुत्रेण रहितः शिवे!
गर्भाणां पतनं यातं यतो मार्जारिका हता॥ ७॥

भा० टी०—वह शाककार विष्णुभक्त होने के कारण पुत्र-रहित हुआ और उसकी स्त्री के कई गर्भ नष्ट हो गये। क्योंकि बिल्ली की हत्या की थी॥ ७॥

सगर्भा च तदा देवि ततो गर्भो विनश्यति।
तस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणु त्वं गिरिजे वरे!॥ ८॥

भा० टी०—हे पार्वति! वह बिल्ली सगर्भा थी, इस कारण से उसके गर्भ नष्ट होते गये और हे वरारोहे! गिरिजे! उसकी शांति को मैं तुम्हारे समक्ष कहता हूँ॥ ८॥

गृहवित्तार्द्धभागं वै ब्राह्मणाय प्रदापयेत्।
तदा पापं क्षयं याति नात्र कार्य्या विचारणा॥ ९॥

भा० टी०—अपने घर में जितना द्रव्य है, उसका आठवाँ भाग ब्राह्मण को दान कर दें तब वह पाप दूर होता है इसमें कुछ भी सन्देहास्पद नहीं है॥ ९॥

शिवार्चनं कारयित्वा रौप्यमार्जारिकां तथा।
पलानां सप्तकैः कुर्यात् सगर्भां विमलां शुभाम्॥ १०॥

भा० टी०—शिवजी का पूजन करके १०० पल प्रमाण वाली चांदी से, गर्भ युक्त बहुत सुंदर एक बिल्ली बनवायें॥ १०॥

पूजयित्वा ततो देवि ततो दद्याद्द्विजात्मने।
लक्षं जाप्यं ततो देवि त्र्यम्बकेण विशेषतः॥ ११॥

भा० टी०—हे देवि! पूजन करके ब्राह्मण को दान दें फिर त्र्यंबक मंत्र का एक लाख तक जप करायें॥ ११॥

ततो भवति वै शुद्धः पूर्वपापान्न संशयः।
पुत्रो भवति वै देवि रोगाणां संक्षयस्तथा॥ १२॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे पुष्यनक्षत्रस्य चतुर्थचरण-प्रायश्चित्तकथनं नाम पञ्चत्रिंशोऽध्यायः॥ ३५॥

भा० टी०—तब संपूर्ण पाप से शुद्धि होती है। इसमें संशय नहीं है। ऐसा करने से हे देवि! पुत्र की प्राप्ति और रोगों का क्षय होता है॥ १२॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे पुष्यनक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तक० नाम पञ्चत्रिंशोऽध्यायः॥ ३५॥

॥ ३६ ॥

श्लेषानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

अथातः संप्रवक्ष्यामि शृणु देवि सुशोभने!।
जातस्य सर्पनक्षत्रे प्रथमे चरणे शुभे!॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे देवि! हे शोभने! अब आश्लेषानक्षत्र के पहले चरण में जन्म लेने वालों के कर्मफल को कहता हूँ, वह सुनो॥ १॥

पुरी काशी समाख्याता त्रैलोक्ये देवि पूजिता।
तस्यास्तु पश्चिमे भागे क्रोशपञ्चदशे मिते॥ २॥

भा० टी०—हे देवि! त्रिलोक में पूजित काशी नामक प्रसिद्ध नगरी है उसके पश्चिम भाग में १५ कोश के परिमाण से॥ २॥

माण्डव्यस्य पुरे शुभ्रे वसन्ति बहवो जनाः।
तन्मध्ये शुद्र एको हि प्राकरोल्लवणं सदा॥ ३॥

भा० टी०—मांडव्य नामक पुर है, जिसमें बहुत से लोग वास करते हैं और उन्हीं में एक शूद्र लवणकार भीर रहता था॥ ३॥

डिण्डिभेति समाख्यातो गौरी तस्य वरानना।
बह्वर्थं सञ्चितं तेन न दानमकरोत् क्वचित्॥ ४॥

भा० टी०—वह डिंडिभ नाम से विख्यात था और उसकी स्त्री का नाम गौरी था उन्होंने बहुत सा धन इकठ्ठा किया तथा दान नहीं किया॥ ४॥

एकदा दैवयोगेन ब्राह्मणानां निमन्त्रणम्।
भोजनं प्रददौ कृत्वा दक्षिणां वै समर्पयेत्॥ ५॥

भा० टी०—एक समय दैव योग से ब्राह्मणों को निमंत्रण देकर भोजन करवा कर उन्होंने दक्षिणा दी॥ ५॥

गामेकां कपिलां दत्त्वा भूषितां स्वपुरोधसे।
ब्राह्मणोऽकथयत् कश्चित् शूद्रं प्रति तदा प्रिये!॥ ६॥

भा० टी०—हे प्रिये! एक कपिला गौ को आभूषण युक्त कर अपने पुरोहित को दिया तब उस शूद्र से एक ब्राह्मण ने कहा॥ ६॥

अहं ग्रामस्य वै पूज्यो मदीया गौः कथं प्रभो!
पुरोहिताय दत्तासि प्राणं ते च ददाम्यहम्॥ ७॥

भा० टी०—कि, मैं ग्राम का पूज्य हूँ मेरी गौ पुरोहित कों क्यों दी, ! मैं तुझे अपने प्राण दे दूँगा (आत्माहत्या कर दूँगी)॥ ७॥

इति श्रुत्वा वचस्तस्य सोऽवदद्ब्राह्मणं प्रति।
क्रोधेन महता देवि ब्राह्मणाय तदाधमः॥ ८॥

भा० टी०—फिर वह शूद्र ब्राह्मण के वचन को सुन कर बड़े क्रोध से युक्त हुआ, उसने ब्राह्मण को कहा॥ ८॥

तदा क्रोधेन महता स शूद्रोऽताडयद्द्विजम्।
मरणं तस्य वै जातं तद्धस्ताद्वै वरानने!॥ ९॥

भा० टी०—और बड़े क्रोध से उस शूद्र ने उस ब्राह्मण को पीटा, तब हे वरानने! उसके हाथ से उस ब्राह्मण की मृत्यु हो गयी॥ ९॥

ततो बहुतिथे काले सस्त्रीकः प्रमृतः खलः।
पातनं तस्य वै जातं कर्म्मपाके तदा खलु॥ १०॥

भा० टी०—फिर कर्मों के पूरे होने पर बहुत-सा काल हो गया, तब स्त्री सहित पाप-युक्त उस शूद्र की भी मृत्यु हुई॥ १०॥

निक्षिप्य यमदूतेन तत्रैव च यमाज्ञया।
पञ्चलक्षं ततो वर्षं कष्टं दत्तं मुहुर्मुहुः॥ ११॥

भा० टी०—उस शूद्र को यमराज की आज्ञा से दूतों ने उसे नरक में डाला जहाँ पाँच लाख वर्षों तक बार-बार कष्टों को भोगता रहा॥ ११॥

तत्र जाता महापीडा नरकान्निसृतस्ततः।
सर्पयोनिं स वै यातो गृध्रयोनिस्ततोऽभवत्॥ १२॥

भा० टी०—और वहाँ बहुत पीडा को भोग कर नरक से निकल कर सर्प की योनि को प्राप्त हुआ, फिर गीध की योनि को प्राप्त हुआ॥ १२॥

मानुषत्वं ततो लब्धं मध्यदेशे वरानने!
पूर्वपापाच्च भो देवि पुत्रो नैव प्रजायते॥ १३॥

भा० टी०—फिर हे वरानने! वह मध्य देश में मनुष्य योनि को प्राप्त हुआ है जहाँ हे देवि! पहले के पाप से उसको पुत्र प्राप्त नहीं हुआ॥ १३॥

शरीरे रोग उत्पन्नो विग्रहस्तु वरानने!
प्रायश्चित्तं प्रवक्ष्यामि पूर्वकिल्विषशान्तये॥ १४॥

भा० टी०—हे वरानने! उसके शरीर में रोग उत्पन्न हो कर कष्ट को प्राप्त हो रहा है। अब मैं उसके पूर्वजन्म के पापों के प्रायश्चित को कहता हूँ॥ १४॥

गायत्रीसूर्यमन्त्राभ्यां पञ्चलक्षजपं शिवे!
करोतु विधिवद्भक्त्या तदा वै वरवर्णिनि!॥ १५॥

भा० टी०—हे शिवे! हे वरवर्णिनि! गायत्री और सूर्य के मंत्रों का पाँच लाख तक विधि और भक्ति पूर्वक जप करवायें॥ १५॥

होमं कारयितुं प्राज्यं कुण्डे चाष्टदले तथा।
दशांशतर्पणं तस्य मार्जनं तद्दशांशतः॥ १६॥

भा० टी०—अष्टदल वाला कुंड बनवा कर घृत की आहुति दें और उसका दशांश तर्पण तथा दशांश मार्जन करवायें॥ १६॥

प्रतिमां रुचिरां कृत्वा सुवर्णस्य महेश्वरि!
पलषष्ठ्याः प्रयत्नेन पूजयित्वा यथाविधि॥ १७॥

भा० टी०—और हे महेश्वरि! साठ पल सुवर्ण की मूर्ति बनवायें यथाविधि पूजन करावायें॥ १७॥

मन्त्रेणानेन विधिना गन्धधूपादिभिस्तथा।
दुर्गे देवि नमस्तुभ्यं सर्वसिद्धिप्रदेश्वरि!॥ १८॥

भा० टी०—हे दुर्गे! हे देवि! हे सर्वसिद्धि प्रदेश्वरि! तुम्हें नमस्कार है, इस विधि से इस मंत्र से गंधधूपादि प्रदान करें॥ १८॥

इमां पूजां गृहीत्वा तु मम कार्यं प्रसाधय।

ॐ ह्रीम् महेश्वर्य्यै नमः ॐ दुर्गायै नमः।
ॐ सर्वकामप्रदे तुभ्यं नमः ॐ ईश्वर्य्यै नमः।
ॐ त्र्यम्बकाय नमः ॐ ब्रह्मणे नमः।
ॐ विष्णवे नमः ॐ सर्वेश्वराय नमः।
ॐ भैरवाय नमः ॐ मार्त्तण्डाय नम॥

एतैश्च दशभिर्मन्त्रैः प्रतिमां पूजयेत्प्रिये!
ब्राह्मणाय ततो दद्याद्भक्तियुक्तेन चेतसा॥ १९॥

भा० टी०—और यह कहें कि—इस मेरी पूजा को ग्रहण करके मेरे कार्य को सिद्ध करो ॐ मंत्र-ॐ ह्रीम् महेश्वर्य्यै नमः १, ॐ दुर्गायै नमः २, ॐ सर्वकामप्रदे तुभ्यं नमः ३, ॐ ईश्वर्य्यै नमः ४, ॐ त्र्यम्बकाय नमः ५, ॐ ब्रह्मणे नमः ६, ॐ विष्णवे नमः ७, ॐ सर्वेश्वराय नमः ८, ॐ भैरवाय नमः ९, ॐ मार्तण्डाय नमः१०—ऐसे हे प्रिये! इन १० मंत्रों से प्रतिमा का पूजन करें, फिर भक्ति-युक्त चित्त वाला हो कर संकल्प लेकर ब्राह्मण को दें॥ १९॥

पञ्चपात्रं ततो दद्यात्तदुद्देशेन पार्वति!
तिलदानं ततो दद्याद्वस्त्रदानं यथाविधि॥ २०॥

भा० टी०—फिर उसी का उद्देश्य लेकर पाँच पात्रों का और तिल का तथा वस्त्रों का यथाविधि दान दे दें॥ २०॥

कूष्माण्डं नारिकेरं च पञ्चरत्नसमन्वितम्।
गङ्गामध्ये प्रदातव्यं पूर्वपापप्रणाशनम्॥ २१॥

भा० टी०—तदनन्तर एक पेठा तथा नारियल को पंचरत्न से युक्त कर पूर्व जन्म के पाप को दूर करने के लिए गंगाजी के मध्य में दान अर्थात् विसर्जित करें॥ २१॥

रोगात्प्रमुच्यते देवि वन्ध्यापि पुत्रमाप्नुयात्।

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे श्लेषानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम षट्त्रिंशोऽध्यायः॥ ३६॥

भा० टी०—इसप्रकार हे देवि! साधक रोगों से दूर होता है। वंध्या भी पुत्र को प्राप्त करती है॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां श्लेषानक्षत्रस्य प्रथमचरणे प्रायश्चित्तकथनं नाम षट्त्रिंशोऽध्यायः॥ ३६॥

॥ ३७ ॥

सर्प(श्लेष)नक्षत्रद्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

अलर्कस्य पुरे देवि शूद्र एकोऽवसत्पुरा।
शूद्राचाररतो नित्यं विक्रयं कुरुते सदा॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे देवि! अलर्का नाम वाली पुरी में पहले एक शूद्र रहा करता था और वह शूद्र-कर्म में नित्य रत रहता था और विक्रय का व्यवहार करता था॥ १ ॥

गोमहिष्यादिव्यापारैर्व्ययं कुर्य्याद्दिने दिने।
गोधनानि बहून्येव तेषां रक्षा न जायते॥ २ ॥

भा० टी०—और प्रतिदिन गौ, महिषी आदि के बेचने का व्यवहार करता था और उसके पास गौ, महिषी आदि बहुत संख्या में थीं जिन की रक्षा वह नहीं कर सका॥ २ ॥

दुर्लभ इति विख्यातो तत्राऽज्ञानी सदावसत्।
एकदा तस्य गोवृन्दे वने तिष्ठति भोऽनघे!॥ ३ ॥

भा० टी०—वह दुर्लभ नाम से विख्यात अज्ञानी सदा वहीं रहा करता था, एक समय हे अनघे! वन में गौओं का समूह पास चर रहा था॥ ३ ॥

वृष्टिस्तत्र महाजाता गावश्च पीडिता भृशम्।
तासां मध्ये भूरि गावो वर्षणेन मृताः पुरा॥ ४ ॥

भा० टी०—जहाँ वन में महावर्षा होने के कारण गौओं को बड़ी पीड़ा हुई और उनमें से-बहुत सी गाएँ वर्षा से मर गयीं॥ ४ ॥

रक्षां शूद्रो नाऽकरोत्स तृणैराछादनादिभिः।
एवं बहुगते काले शूद्रः पापी मृतो यदा॥ ५ ॥

भा० टी०—वह शूद्र तृण से तथा छाया से गौओं की रक्षा नहीं कर सका, इसप्रकार बहुत काल व्यतीत होने पर वह पापी शूद्र मर गया॥ ५ ॥

नरके पातयामास यमदूतो यमाज्ञया।
बहुवर्षसहस्राणि भुक्त्वा नरकजं फलम्॥ ६॥

भा० टी०—यमराज के दूत यम की आज्ञा से उसे नरक में ले गये, वहाँ अनेक हजारों वर्षों तक नरक के फल को भोग कर॥ ६॥

नरकान्निर्गतो देवि गजयोनिमवाप्तवान्।
गजयोनिं ततो भुक्त्वा मानुषत्वं ततोऽगमत्॥ ७॥

भा० टी०—हे देवि! नरक से निकल कर हाथी की योनि को प्राप्त हुआ, हाथी की योनि को भोग कर फिर मनुष्य के शरीर को प्राप्त हुआ॥ ७॥

स्वकर्मणा परित्यागं यतोऽकार्षीद्गवां पुरा।
ततः कर्मफलाद्देवि नैव पुत्रः प्रजायते॥ ८॥

भा० टी०—पहले जहाँ अपने कर्मों को त्याग कर उसने गौओं की रक्षा नहीं की थी, उस कर्म के फल के कारण ही उसे पुत्र की प्राप्ति नहीं हुई है॥ ८॥

कृतं दानं पुरा देवि सर्वपर्वणि चाञ्जसा।
तेन पुण्येन भो देवि धनधान्यगजादिकम्॥ ९॥

भा० टी०—हे देवि! पहले इसने तिथि-पर्व पर विधि से दान किया था, जिस पुण्य के प्रभाव से यह धन-धान्य, हस्ती आदि से युक्त हुआ है॥ ९॥

गोसंग्रहः कृतः पूर्वं मृतो तृणकणं विना।
तेन पापेन भो देवि महाव्याधिः प्रजायते॥ १०॥

भा० टी०—हे देवि! पहले जिसके कारण गौओं का समूह तृण खाये बिना मृत्यु को प्राप्त हुआ, इस पाप से उसके शरीर में महाव्याधि होती है॥ १०॥

तस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणु देवि सुशोभने!
ब्राह्मणाय दशांशं च दानं दद्यात्सुरप्रिये!॥ ११॥

भा० टी०—अब हे देवि! हे सुशोभने! उस पाप की शांति के उपाय को कहता हूँ! हे सुरप्रिये! ब्राह्मण को घर के धन में से दशांश का दान दें॥ ११॥

गायत्रीलक्षजाप्येन जपं कुर्यात्प्रसन्नधीः।
दशांशं हवनं देवि मार्जनं तर्पणं तथा॥ १२॥

भा० टी०—वह प्रसन्न मन वाला होके एक लाख तक गायत्री का जप करवाये और हे देवि! दशांश हवन तथा मार्जन तर्पणादि करवाये॥ १२॥

दशवर्णास्ततो दद्याद्ब्राह्मणाय वरानने!
एवं कृते न संदेहो वरः पुत्रः प्रजायते॥ १३॥

भा० टी०—हे वरानने! ब्राह्मण को दश वर्ण वाली गौओं का दान दो, ऐसा करने से श्रेष्ठ पुत्र की प्राप्ति होती है, इसमें संशय नहीं है॥ १३॥

रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति नात्र कार्या विचारणा।

इति कर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे सर्पनक्षत्रद्वितीयचरणे प्रायश्चित्तकथनं नाम सप्तत्रिंशोऽध्यायः॥ ३७॥

भा० टी०—और संपूर्ण रोग नाश को प्राप्त होते हैं, इसमें सन्देह नहीं है॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां सर्पनक्षत्रस्य द्वितीयचरणे प्रायश्चित्तकथनं नाम सप्तत्रिंशोऽध्यायः॥ ३७॥

॥ ३८ ॥

श्लेषानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

गङ्गाया उत्तरे कूले मालाकारोऽवसत्पुरा।
डेलचन्द्रेति विख्यातो महाज्ञानी गुणाकरः॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे प्रिये! गंगाजी के उत्तर किनारे पर डेलचंद्र नामक महाज्ञानी, गुणों से युक्त अपने कर्म में नित्य रत ब्राह्मणों की सेवा में तत्पर मालाकार रहता था॥ १ ॥

स्वकर्मनिरतो नित्यं द्विजसेवासु तत्परः।
तस्य पत्नी विशालाक्षि नाम्ना चन्द्रावती शुभा॥ २ ॥

भा० टी०—हे विशालाक्षि! उसकी पत्नी अर्थात् स्त्री चंद्रावती नाम से ख्यात और शुभ लक्षणों से युक्त थी॥ २ ॥

गुरुदास इति ख्यातो वैश्यवर्णेषु पूजितः।
आसीत्तस्मै तदा तेन स्वर्णं दत्तं प्रियाय वै॥ ३ ॥

भा० टी०—वहीं! गुरुदास नाम के विख्यात सब वैश्यों में पूजित एक वैश्य रहता था, उस वैश्य ने अपने प्रिय उस मालाकार को बहुत-सा सुवर्ण दिया॥ ३ ॥

लक्षत्रयं स्थितं स्वर्णं तस्य वैश्यपतेः प्रिये!
मालाकारेण तत्सर्वं भूमौ स्थाप्य तदा प्रिये!॥ ४ ॥

भा० टी०—हे प्रिये! तीन लाख रुपयों का स्वर्ण उस वैश्य का हुआ तो वह स्वर्ण उस मालाकार ने भूमि के अन्दर स्थापित किया॥ ४ ॥

स्वयं गतः स वैश्येन सार्द्धं वेण्यां तदा प्रिये!
माघे नियमतः स्नानं कृते ताभ्यां यथाविधि॥ ५ ॥

भा० टी०—वह मालाकार माघ के महीने में उस वैश्य के साथ त्रिवेणी अर्थात् प्रयाग में यथाविधि स्नान करने को गया फिर उन दोनों ने नियम से स्नान किया॥ ५ ॥

शूद्रस्तु स्वगृहं प्राप्तः वैश्यः काश्यां समागतः।
तत्र काश्यां विशालाक्षि मरणं तस्य चाभवत्॥ ६ ॥

भा० टी०—हे विशालाक्षि! फिर स्नान के अनंतर शूद्र मालाकार तो अपने घर आया और वह वैश्य काशी को गया जहाँ काशी में उस वैश्य की मृत्यु हो गयी॥ ६॥

अविमुक्ते महातीर्थे देवदानवपूजिते।
मम पार्श्वे समायातो धर्मक्षेत्रप्रभावतः॥ ७॥

भा० टी०—मुक्ति को देने वाला यह महातीर्थ देवता और दानवों से पूजित है, ऐसे धर्मक्षेत्र के प्रभाव से वह वैश्य मेरे समीप आया॥ ७॥

मालाकारस्तु तत्स्वर्णं भुक्त्वा पुत्रस्त्रिया युतः।
बहुवर्षगते काले मरणं तस्य चाऽभवत्॥ ८॥

भा० टी०—मालाकार ने पुत्र-स्त्री से युक्त हो कर उस वैश्य के स्वर्ण को भोगते हुए बहुत से वर्षों को व्यतीत किया, उस शूद्र की बाद में मृत्यु हुई॥ ८॥

तदा गन्धर्वनगरे बहुवर्षसहस्रकम्।
पत्न्या सह वरारोहे भुक्तं वै स्वर्गजं फलम्॥ ९॥

भा० टी०—तब उसे बहुत वर्षों तक गन्धर्व लोक की प्राप्ति हुई, वहाँ पत्नी सहित गंधर्वलोक में उसने स्वर्ग के फल को भोगा॥ ९॥

ततो बहुगते काले मानुषत्वमवाप्तवान्।
धनाढ्यो गुणवान् भोक्ता देवब्राह्मणतत्परः॥ १०॥

भा० टी०—फिर बहुत से समय के पश्चात् वह मनुष्य शरीर को प्राप्त हो कर धन से युक्त गुणवान्, भोग से युक्त, देव ब्राह्मण के पूजन में तत्पर रहता है॥ १०॥

तस्य पत्नी विशालाक्षि पूर्वजन्मप्रसङ्गतः।
पुनर्विवाहिता देवि पतिसेवासु तत्परा॥ ११॥

भा० टी०—और हे विशालाक्षि! उसकी स्त्री पहले जन्म के प्रसंग से उसके साथ विवाहित हुई और पति की सेवा में तत्पर है॥ ११॥

पुष्पं च जायते देवि मासि मासि निरन्तरम्।
पुत्रो न जायते देवि कन्यका खलु जायते।
यतो वैश्यस्य वै स्वर्णं न दत्तं पूर्वजन्मनि॥ १२॥

भा० टी०—उसकी पत्नी को माहवारी तो प्रत्येक महीने में निरंतर होती है, किन्तु हे देवि! पुत्र नहीं होता है और उसके कन्या होती है, क्योंकि उसने पूर्व जन्म में वैश्य का स्वर्ण वापस नहीं दिया था॥१२॥

तत्कर्मणः फलाद्देवि पुत्रो नैव प्रजायते।
तस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणु देवि यथार्थतः॥ १३॥

भा० टी०—हे देवि! उस कर्म के फल से उसका पुत्र नहीं हुआ, अब हे देवि! उस कर्म की शांति को यथावत् कहता हूँ, सुनो॥ १३॥

गृहद्रव्यषडंशेन पुण्यं कार्यं च कारयेत्।
हेम्नो दशपलस्यापि वैश्यं कृत्वा प्रयत्नतः॥ १४॥

भा० टी०—अपने घर में जितना द्रव्य हो, उसका छठा भाग पुण्य कार्य में दान करें और दशपल सुवर्ण प्रयत्नपूर्वक मूर्ति बनवायें॥ १४॥

पूजयित्वा विधानेन ब्राह्मणाय प्रदापयेत्।
षडङ्गजातवेदानां जपं वै कारयेत्ततः॥ १५॥

भा० टी०—विधि-विधान से पूजा करके ब्राह्मण को संकल्प कर के दें और वेद के षडंग के मन्त्रों का जप करवायें॥ १५॥

जीर्णोद्धारं ततो देवि वापिकां कूपमेव च।
एवं कृते न संदेहः पुत्रो भवति नान्यथा॥ १६॥

भा० टी०—हे देवि! पुराने फूटे-टूटे कूप, बावड़ी तथा बगीचा आदि का जीर्णोद्धार करें ऐसा करने से पुत्र की प्राप्ति निश्चय होती है, यह मेरा वचन अन्यथा नहीं है॥१६॥

रोगस्तस्य निवर्तेत धनं च बहु जायते॥ १७॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे श्लेषानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नामाऽष्टात्रिंशोऽध्यायः॥ ३८॥

भा० टी०—इसप्रकार करने वाले उस जन का रोग निवृत्त होता है और बहुत सा धन उसे प्राप्त होता है॥ १७॥

इति श्रीकर्मविपाकभाषाटीकायां०
नामाष्टात्रिंशोऽध्यायः॥ ३५॥

॥ ३९ ॥

श्लेषानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

अयोध्या नगरी श्रेष्ठा सर्वदेवसुपूजिता।
यस्याः प्रवेशमात्रेण सर्वपापैः प्रमुच्यते॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—अयोध्या नगरी श्रेष्ठ है, सब देवतों द्वारा पूजी जाती है जिसमें वास करने मात्र से ही सब पापों से मनुष्य छूट जाता है॥ १ ॥

तस्यास्तु पश्चिमं देवि योजनानां दशोपरि।
लक्ष्मणाख्यं पुरं यत्र वसन्ति बहवो जनाः॥ २ ॥

भा० टी०—हे देवि! उसके पश्चिम भाग में दश योजन दूर लक्ष्मण नामक पुर है, वहाँ बहुत से जन रहा करते हैं॥ २ ॥

तन्मध्ये शूद्र एको हि कैवर्तो धनधान्यवान्।
डालेतिनामविख्यातस्तस्य पत्नी च केशवी॥ ३ ॥

भा० टी०—उनके मध्य में धनधान्य से युक्त एक शूद्र जाति का झीमर डाल नामक विख्यात व्यक्ति रहता था और उसकी स्त्री का नाम केशवी था॥ ३ ॥

तेन व्यापारतो देवि धनं च बहु संस्थितम्।
मांसं प्रभुज्यते नित्यं मांसं हि बहुधा प्रियम्॥ ४॥

भ० टी०—उसने व्यापार से बहुत धन इकट्ठा किया, वह नित्य मांस का भक्षण करता था, मांस खाना उसे बड़ा प्रिय था॥ ४॥

निर्दयः सर्वजन्तूनां कच्छपानां विशेषतः।
एवं बहुगते काले तस्य मृत्युरभूत् किल॥ ५ ॥

भा० टी०—वह निर्दयी सभी प्राणियों विशेषकर कछुओं का मांस खाता था, ऐसे बहुत-सा काल व्यतीत होने पर उसकी मृत्यु हो गयी॥ ५ ॥

यमदूतैर्महाघोरे निक्षिप्तश्च यमाज्ञया।
षष्टिवर्षसहस्राणि भुक्त्वा नरकयातनाम्॥ ६ ॥

भा० टी०—फिर यमराज की आज्ञा पा कर दूतों ने उसे नरक में डाला, वह हजार वर्षों तक नरक के दुःखों को भोगता रहा॥ ६॥

नरकान्निःसृतो देवि दर्दुरत्वं तथा गतः।
ऋक्षत्वं च ततो देवि मानुषत्वं ततोऽलभत्॥ ७॥

भा० टी०—फिर हे देवि! नरक से निकल कर मेंढक की योनि को प्राप्त हुआ, फिर रीछ की योनि को भोग कर मनुष्य शरीर को प्राप्त हुआ॥ ७॥

पाण्डुरोगेण संयुक्तो वंशो नैव तु जीवति।
कन्याश्च बहवो जाता विधवा व्यभिचारिणी॥ ८॥

भा० टी०—वह पाण्डुरोग से युक्त हुआ, उसके पुत्र जीवित नहीं रहते और उसकी बहुत-सी कन्याएँ उसके हुईं, वे सभी पाप के प्रभाव से विधवा और व्यभिचारिणी हुईं॥ ८॥

अपत्यानां निरोधश्च युवत्वसमये सति।
अस्य पुण्यं प्रवक्ष्यामि यथा पापात्प्रमुच्यते॥ ९॥

भा० टी०—उसको युवावस्था में ही संतान का निरोध हो गया, अब उस पाप से मुक्त होने का पुण्यकर्म कहता हूँ॥ ९॥

षडंशं ब्राह्मणे दानं श्रीविष्णोः पूजनं तथा।
विष्णोरराटमन्त्रेण लक्षजाप्यं च कारयेत्॥ १०॥

भा० टी०—अब घर के द्रव्य में से छठे भाग का दान ब्राह्मण कर दें, विष्णु का पूजन करें, विष्णोरराट० इस मंत्र का एक लाख तक जप करायें॥ १०॥

एवं कृते त संदेहो वंशो भवति नान्यथा।
रोगाश्च विलयं यान्ति नात्र कार्या विचारणा॥ ११॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे श्लेषानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं नामैकोनचत्वारिंशोऽध्यायः॥ ३९॥

भा० टी०—ऐसे करने से निश्चय ही पुत्र होगा, अन्यथा नहीं होगा और रोग नष्ट हो जायेगा इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है॥ ११॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहर० श्लेषा० चतुर्थचरण० नामैकोनचत्वारिंशोऽध्यायः॥ ३९॥

॥ ४० ॥

अथ मघानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

पुरा देवि शुभं ख्यातं पुरं मङ्गलनामकम्।
तत्र वैश्यो वसत्येको धनधान्यसमन्वितः ॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे देवि! बहुत पहले एक मंगल नामक शुभनगर था ,जिसमें एक वैश्य रहता था और धनधान्य से युक्त था ॥ १ ॥

तस्य नाम समाख्यातं मङ्गलं देवि वै शुभम्।
तस्य पत्नी विशालाक्षी सुन्दरी सुखदायिनी ॥ २ ॥

भा० टी०—हे देवि! शुभ लक्षणों वाले उस वैश्य का नाम की उसकी स्त्री विशाल नेत्रों वाली तथा सुंदर रूप वाली तथा उसे सुख देने वाली थी ॥ २ ॥

विष्णुभक्तिरतो नित्यं गुरुब्राह्मणसेवकः।
आचारे नियतश्चैव क्रयविक्रयतत्परः ॥ ३ ॥

भा० टी०—वह वैश्य नित्य विष्णुभक्ति में तत्पर, गुरु और ब्राह्मण की सेवा करने वाला आचार-नियम से युक्त और क्रय-विक्रय में तत्पर रहता था।॥ ३ ॥

एकदा तु गृहे देवि मित्रं तस्य समागतम्।
आदरं बहुधा कृत्वा भोजयामास शास्त्रतः ॥ ४ ॥

भा० टी०—हे देवि! एक समय उसके घर में उसका मित्र आ गया, तब उसने उसे अत्यन्त आदर दे कर उसे भोजन कराया ॥ ४ ॥

स्वर्णदानं ततो लक्षमुद्रादानं तु तत्प्रिये!
दत्तं वैश्येन भो देवि ब्राह्मणाय स्वशान्तये ॥ ५ ॥

भा० टी०—फिर हे प्रिये! उसको सुवर्ण और एक लाख रुपयों का दान उस वैश्य ने ब्राह्मण को अपनी शांति के लिए दिया ॥ ५ ॥

ब्राह्मणेनापि तत्सर्वं स्थापितं तस्य वै गृहे।
ततोऽगात्तीर्थयात्रार्थं वाराणस्यां वरानने ॥ ६ ॥

भा० टी०—और उस ब्राह्मण ने भी सब धन उसके घर में ही रख कर फिर हे वरानने! वह ब्राह्मण तीर्थ-यात्रा के निमित्त काशी चला गया॥ ६॥

तस्य मृत्युरभूद्देवि काश्यां चैव स्वकर्मतः।
बहुकाले गते देवि वैश्यो दारिद्र्यपीडितः॥ ७॥

भा० टी०—हे देवि! अपने कर्मफल से वहाँ काशीपुरी में उस ब्राह्मण की मृत्यु हो गयी तब बहुत काल पश्चात् हे देवि! वह वैश्य दारिद्र्य से पीड़ित हो गया॥ ७॥

पुत्रदारैश्च संयुक्तः तस्य द्रव्यं तदा प्रिये!
भुक्तं सर्वं तदा देवि स्वदत्तं चैव पुण्यदम्॥ ८॥

भा० टी०—अपनी स्त्री-पुत्र से संयुक्त वह वैश्य उस ब्राह्मण के सब धन को भोगता गया जो उसने पुण्य के लिए ब्राह्मण को दिया था॥ ८॥

वृद्धत्वे च पुनर्जाते तस्य मृत्युरभूत्किल।
अयोध्यामरणात्तस्य स्वर्गवासस्ततोऽभवत्॥ ९॥

भा० टी०—फिर वृद्ध होने पर उसकी मृत्यु हुई और अयोध्याजी में मरण होने के कारण उसका स्वर्गवास हो गया॥ ९॥

बहुवर्षसहस्राणि विष्णुलोके वरानने!
भुक्त्वा बहुविधं भोगं ततः पुण्यक्षयेऽनघे!॥ १०॥

भा० टी०—हे वरानने! वहाँ स्वर्गवास करते हुए विष्णुलोक में बहुत हजार वर्षों तक उसने अनेक प्रकार के भोगों को भोगा, पुण्य क्षीण होने पर॥ १०॥

मृत्युलोके भवेज्जन्म धनधान्यसमन्वितः।
विष्णुपूजारतो नित्यं ब्राह्मणे भक्तिरुत्तमा॥ ११॥

भा० टी०—हे अनघे! मृत्युलोक में उसका जन्म हुआ। धनधान्य से युक्त वह विष्णुपूजा में नित्य रत रहता है और ब्राह्मणों में उत्तम भक्तियुक्त है॥ ११॥

मित्रद्रव्यं स्वयं दत्तं भुक्तं तेन ततः प्रिये!
पुत्रोत्पत्तिः प्रथमतस्तस्य वै मरणं भवेत्॥ १२॥

भा० टी०—मित्र को दान करके दिया हुआ द्रव्य अपने आप ही भोगने के कारण पहले पुत्र का जन्म होने पर उसकी मृत्यु हो गयी॥ १२॥

पुनः पुत्रो न जायेत काकवन्ध्या ततः प्रिया।
शरीरे कफवातादिरोगाश्च विविधास्तथा॥ १३॥

भा० टी०—फिर पुत्र नहीं होने से उसकी स्त्री काकवन्ध्या है और उसका शरीर कफवातादि के द्वारा अनेक प्रकार से पीड़ित होता रहता है॥ १३॥

वृद्धत्वं च तथा तस्य जायते नात्र संशयः।
तत्पापशमनार्थं च पुण्यं शृणु वरानने!॥ १४॥

भा० टी०—वही जल्दी ही बूढ़ा हो गया है इसमें संशय नहीं, इस पाप को दूर करने के लिए उपाय हेतु पुण्य कहता हूँ तुम सूनो॥ १४॥

षडंशं च ततो दानं ब्राह्मणाय वरानने!
गायत्रीमन्त्रजाप्यं च लक्षमेकं प्रयत्नतः॥ १५॥

भा० टी०—हे वरानने! घर के वित्त में से छठाभाग दान करके ब्राह्मण को दें और यत्न से एक लाख तक गायत्री जप करवायें॥ १५॥

हवनं विधिवत्कुर्यात् तर्पणं मार्जनं तथा।
गामेकां कपिलां दद्यात्स्वर्णशृङ्गीं सहाम्बराम्॥ १६॥

भा० टी०—विधिपूर्वक हवन, उसका दशांश तर्पण, उसका दशांश मार्जन और सुवर्ण के शृंग-वस्त्र से सहित एक कपिला गौ का दान करें॥ १६॥

दद्यात्प्रयत्नतो देवि ब्राह्मणाय महात्मने!
तिलधेनुं ततो दद्यात्पात्रं वस्त्रं तथा प्रिये!॥ १७॥

भा० टी०—हे देवि! यत्न से महात्मा ब्राह्मण को दे कर तिल धेनु का दान भी वैसे ही वस्त्रादि युक्त करके दें॥ १७॥

हरिवंशश्रुतिर्ब्रह्मदम्पत्योः पूजनं चरेत्।
एवं कृते ततो देवि पुनः पुत्रः प्रजायते॥ १८॥

भा० टी०—हे देवि! ब्राह्मण-ब्राह्मणी का पूजन, हरिवंश पुराण का श्रवण करें, ऐसा करने से फिर पुत्र की प्राप्ति होगी॥ १८॥

रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति नात्र कार्या विचारणा।

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे मघानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम चत्वारिंशोऽध्यायः॥ ४०॥

भा० टी०—इसप्रकार सब रोग दूर होते हैं इसमें कुछ भी सन्देह करने योग्य नहीं है॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहर० मघानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम चत्वारिंशोऽध्यायः॥ ४०॥

॥ ४१ ॥

मघानक्षत्रद्वितीयचरण-प्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

अयोध्यानगराद्देवि योजनोपरि वल्लभे!।
दक्षिणे नन्दिनिग्रामे वसन्ति बहवो जनाः ॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—दे देवि! अयोध्यापुरी से एक योजन दूर दक्षिण दिशा में नंदिनिग्राम में बहुत से जन निवास करते हैं ॥ १ ॥

द्विजस्तत्र वसत्येको मद्यवेश्यारतस्सदा।
परस्त्रीलम्पटो नित्यं मद्यमांसरतस्तदा ॥ २ ॥

भा० टी०—वहाँ मदिरापान, वेश्या-संग, मांस आदि में प्रीति करने वाला एक ब्राह्मण रहा करता था ॥ २ ॥

नामतो मित्रशर्मेति तस्य पत्नी तु कर्कशा।
प्रत्यहं द्यूतकरणे व्ययं कुर्याद्दिने दिने ॥ ३ ॥

भा० टी०—उसका नाम मित्रशर्मा था, कर्कशा नाम वाली उसकी स्त्री थी, वह प्रतिदिन जुए के व्यवहार में खर्चा करता था ॥ ३ ॥

एवं बहुगते काले तस्य मृत्युरभूत्पुरा।
पश्चान्मृता तु तत्पत्नी कर्कशा दुःखदायिनी ॥ ४ ॥

भा० टी०—इस प्रकार बहुत-सा काल बीत जाने पर पहले उसकी मृत्यु हुई और पश्चात् कर्कशा नाम वाली उसकी स्त्री भी मर गयी ॥ ४ ॥

यमस्य किंकरैरेव निक्षिप्तो नरकार्णवे।
सप्ततिर्वै सहस्राणि वर्षाणि सुरवल्लभे! ॥ ५ ॥

भा० टी०—यम की आज्ञा से दूतों ने नरक रूपी समुद्र में उसे गिरा दिया, जहाँ हे सुरवल्लभे! सत्तर हजार वर्षों नरक में वास करते हुए ॥ ५ ॥

भुक्तं दुःखं नरकजं दम्पतिभ्यां तदा शिवे!
ततः पापक्षये देवि शुनो योनिरभूत् पुरा ॥ ६ ॥

भा० टी०—हे शिवे! दोनों स्त्री-पुरुष नरक का दु:ख भोग कर पाप क्षय होने पर श्वान अर्थात् कुत्ते की योनि को प्राप्त हुए॥ ६॥

शुनो योनिं ततो भुक्त्वा शूकरो निर्जने वने।
मानुषस्य पुनर्योनिं मध्यदेशे ततोऽलभत्॥ ७॥

भा० टी०—फिर श्वानयोनि को भोग कर मनुष्य-रहित वन में शूकर की योनि को प्राप्त हुए और फिर मध्य देश में मनुष्य योनि को प्राप्त हुए॥ ७॥

नन्दिग्रामफलाद्देवि धनधान्यसमन्वितः।
परस्त्रीलम्पटाद्देवि पादपीडा प्रजायते॥ ८॥

भा० टी०—नंदिग्राम में मृत्यु के कारण वह, धनधान्य से युक्त है—पर स्त्री-गमन करने से उसके पैरों में पीड़ा होती है॥ ८॥

मद्यपानफलाद्देवि गर्भपातः पुनः पुनः।
बह्व्यः कन्याः प्रजाताश्च बहुस्त्रीगमनात्प्रिये!॥ ९॥

भा० टी०—हे देवि! मद्य पीने के के कारण से बार-बार गर्भ नष्ट हुए और बहुत-सी स्त्रियों से गमन करने के कारण बहुत-सी कन्या हुई॥ ९॥

पुत्रस्य मरणं देवि जातं वेश्याऽतिसंगमात्।
पूर्वजन्मकृतं पापं पुण्यं च गिरिजे वरे!॥ १०॥

भा० टी०—हे देवि! अत्यधिक वेश्या-संग करने से उसके पुत्र का मरण हुआ हे गिरिजे! हे वरे! पूर्वजन्म में किया हुए पाप और पुण्य॥ १०॥

मानुषैर्भुज्यते सर्वं मृत्युलोके सुरेश्वरि!
अस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि यथार्थं शृणु भामिनि॥ ११॥

भा० टी०— मनुष्यों द्वारा मृत्युलोक में भोगे जाते हैं हे सुरेश्वरि! इस पाप की शांति के लिए यथार्थ उपाय कहता हूँ। हे भामिनी! तुम सुनो॥ ११॥

गृहवित्ताष्टमं भागं ब्राह्मणाय समर्पयेत्॥ १२॥

भा० टी०—अपने घर के धन में से आठवें भाग का दान किसी ब्राह्मण को दें॥१२॥

वापीकूपतडागेषु जीर्णोद्धारः प्रयत्नतः।
माघकार्तिकवैशाखे श्रावणे च विशेषतः॥ १३॥

भा० टी०—बावड़ी-कूप तथा तलाब इनका प्रयत्नपूर्वक जीर्णोद्धार करें माघ, कार्तिक, वैशाख, श्रावण, इन महीनों में॥ १३॥

प्रत्यब्दं भोजयेद्विप्रान् श्रोत्रियान्वेदपारगान्।
गायत्रीजातवेदाभ्यां द्विलक्षं जपमाचरेत्॥ १४॥

भा० टी०—प्रतिवर्ष वेदों में पारंगत पवित्र ब्राह्मणों को भोजन करवायें और गायत्री तथा जातवेदसे० इन मत्रों का जप दो लाख की संख्या में करवायें॥ १४॥

जपतो हवनं तद्वत्तर्पणं मार्जनं तथा।
महाभारतमाख्यानं श्रुत्वा पापं व्यपोहति॥ १५॥

भा० टी०—दशांश हवन तथा दशांश तर्पण तथा दशांश मार्जन करायें और महाभारत का श्रवण करने से सब पाप दूर हो जाते हैं॥ १५॥

दशवर्णाः प्रदातव्याः पूर्वपापविशुद्धये।
एवंकृते वरारोहे सर्वरोगः प्रणश्यति॥ १६॥

भा० टी०—फिर पहले दश वर्णों वाली गौओं का दान पूर्व पाप की शुद्धि के लिये देना चाहिए और हे वरारोहे! ऐसा करने से सब रोग दूर होते हैं॥ १६॥

पुत्रो भवति भो देवि वन्ध्यात्वं च प्रणश्यति।
काकवन्ध्या च या नारी पुनः पुत्रमवाप्नुयात्॥ १७॥

भा० टी०—इसप्रकार पुत्र की उत्पत्ति होती है और वन्ध्यापन दूर होता है, ऐसी काकवन्ध्या नारी फिर पुत्र को प्राप्त करती है॥ १७॥

कन्यका नैव जायन्ते धनवृद्धिर्भवेत्किल।
पूर्वजन्मकृतं पापं क्षयं याति न चान्यथा॥ १८॥

भा० टी०—उसकी कन्या नहीं होती है, धन की वृद्धि निश्चय हो जाती है और पूर्वजन्म-कृत पाप नष्ट होते हैं इसमें अन्यथा नहीं है॥ १८॥

इह जन्मनि शं भुङ्क्ते पुनः पापं न बाधते।

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां भाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे मघानक्षत्रद्वितीयचरण-प्रायश्चित्तकथनं नामैकचत्वारिंशोऽध्यायः॥ ४१॥

भा० टी०—इस जन्म में वह सुख भोगता है, फिर उसको पाप बाधा नहीं देते हैं॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां भाषाटीकायां पार्वतीहर० मघानक्षत्रस्य द्वितीचरण-प्रायश्चित्तकथनं नामैकचत्वारिंशोऽध्यायः॥ ४१॥

॥ ४२ ॥

मघानक्षत्रस्य तृतीचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

अयोध्यायां विशालाक्षि कुलालो वसति प्रिये!।
मथुराग्राममध्ये वै स्वकर्मनिरतः सदा॥ १ ॥

भा० टी०—महादेवजी कहते हैं—हे विशालाक्षि! अयोध्यापुरी में मथुरा नाम के मध्य एक ग्राम में कुलाल अर्थात् कुम्हार जाति का एक व्यक्ति अपने में कर्म में सदा रत रहता था॥ १ ॥

पात्रं वै मृन्मयं देवि प्रकरोति तदा प्रिये!।
तस्य मित्रं समायातो ब्राह्मणो वेदपारगः॥ २ ॥

भा० टी०—हे प्रिये! वह मृत्तिका के पात्र बनाया करता था, उसका मित्र एक वेद पाठ करने वाला ब्राह्मण उसके पास आया॥ २ ॥

तस्य स्त्री च महादुष्टा ब्राह्मणी व्यभिचारिणी।
कुलालेनाभवत्प्रीतिर्मैथुनं प्रकरोति सा॥ ३ ॥

भा० टी०—वहाँ उस ब्राह्मण की स्त्री महादुष्टा और व्यभिचारिणी थी, वह कुलाल के साथ प्रीति और मैथुन करती थी॥ ३ ॥

ब्राह्मण्यां गमनं नित्यं बहुवर्षे निरन्तरम्।
एवं बहुगते काले समतीते सुरेश्वरि!॥ ४॥

भा० टी०—हे सुरेश्वरि! ब्राह्मणी से गमन करते हुए बहुत से वर्ष उस कुलाल के व्यतीत होते गये॥ ४॥

कुलालस्य ततो मृत्युर्वृद्धे जाते सुरेश्वरि!
पश्चात्तस्य मृता पत्नी या पुरा व्यभिचारिणी॥ ५ ॥

भा० टी०—फिर हे सुरेश्वरि! बुढापा होने के कारण उस कुलाल की मृत्यु हुई, पश्चात् वह व्यभिचारिणी ब्राह्मणी स्त्री भी मर गयी॥ ५ ॥

यमदूतैर्महाघोरैः कर्दमे नरके प्रिये!।
यमाज्ञया च निक्षिप्तो वर्षं लक्षत्रयं शुभे!॥ ६॥

भा० टी०—फिर हे प्रिये! हे शुभे! यमराज के दूतों ने यम की आज्ञा से उस कुलाल को महाघोर कर्दम नरक में डाल दिया। वहाँ उसके तीन लाख वर्ष व्यतीत हुए॥ ६॥

पतिव्रता समायाता लक्षत्रयगते सति।
नरकाब्धेः समुद्धृत्य स्वपतिं च ततः प्रिये!॥ ७॥
सत्यलोके समायाता स्वपत्या सह भामिनी।
भुक्त्वा लक्षत्रयं देवि भोगांश्च विविधानपि॥ ८॥

भा० टी०—फिर तीन लाख वर्ष व्यतीत होने पर उसकी वह पतिव्रता स्त्री भी वहाँ नरक में आ गयी फिर हे प्रिये! हे भामिनि! नरकाब्धि से दोनों का उद्धार हो कर सत्यलोक को प्राप्त हुए जहाँ तीन लाख वर्षों तक वे भोगों को अनेक प्रकार से भोगते गये॥ ७॥ ८॥

ततः पुण्यक्षये जाते धवेन सह शोभने।
मर्त्यलोके ततो जातो धनधान्ययुतो तदा॥ ९॥

भा० टी०—फिर पुण्यक्षय होने पर हे सुशोभने! मर्त्यलोक में दोनों का जन्म हुआ और वे धनधान्य से युक्त होते गये॥ ९॥

पुत्रकन्याविहीनश्च मृतवत्सत्वमाप्तवान्।
ब्राह्मण्यां गमनाद्देवि बहुरोगश्च जायते॥ १०॥

भा० टी०—मृत्युलोक में पुत्र और कन्या से रहित मृत हैं, उसके बच्चे जीते नहीं हैं और ब्राह्मणी के संग गमन करने के कारण उसके शरीर में बहुत रोग हो गये हैं॥१०॥

अथ शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणु त्वं गिरिजे शुभे!
सर्वस्वदानं कर्तव्यं रुद्रमन्त्रजपं तथा॥ ११॥

भा० टी०—अब हे गिरिजे! हे शुभे! मैं शांति को कहता हूँ तुम श्रवण करो। घर के संपूर्ण धन का दान, तथा रुद्र-मंत्र का जप करें॥ ११॥

पूजा कार्या पार्थिवानां वाटिकारोपणं तथा।
हरिवंशश्रुतिः कार्या भूमिदानं तथैव च॥ १२॥

भा० टी०—पार्थिवपूजन, धर्मशाला आदि की स्थापना, हरिवंश पुराण का श्रवण, भूमिदान करें॥ १२॥

गायत्रीमूलमन्त्रेण लक्षं जाप्यं तथा प्रिये!
होमं च कारयेद्देवि तिलधान्यादितण्डुलैः॥ १३॥

भा० टी०—गायत्री के मूल मंत्र का एक लाख तक जप करायें और हे देवि! तिल, जौ, चावल, घृत—इन्हें इकट्ठा कर कुण्ड में हवन करायें॥ १३॥

कुण्डे कुर्याद्द्विजद्वारा चतुष्कोणे सुरेश्वरि!।
दशांशं हवनं देवि विधिवत्पापशुद्धये॥ १४॥

भा० टी०—हे सुरेश्वरि! चौकोर कुंड में दशांश हवन, दशांश तर्पण, दशांश मार्जन विधिवत् करायें॥ १४॥

दशवर्णास्ततो दद्यात् स्वर्णनिष्कचतुष्टयम्।
ब्राह्मणान्भोजयेत् शुद्धान् षष्टिःपायसलड्डुकैः॥ १५॥

भा० टी०—दश वर्ण वाली गौओं का दान, स्वर्ण की चार मोहरों का दान दें ब्राह्मणों को खीर और लड्डुओं का भोज दें॥ १५॥

भूमिदानं ततः कुर्यात्तिलं दद्यात्प्रयत्नतः।
एवं कृते न संदेहो वंशो भवति नान्यथा॥ १६॥

भा० टी०—तथा यत्न से भूमि और तिल का दान दें, इसप्रकार वंश-वृद्धि अर्थात् पुत्र-प्राप्ति होती है, इसमें संदेह नहीं है॥ १६॥

सर्वे रोगाः क्षयं यान्ति न च कन्यां प्रसूयते।
काकवन्ध्या लभेत्पुत्रं मृतवत्सा च पुत्रिणी॥ १७॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे मघानक्षत्रस्य तृतीचरणे प्रायश्चित्तकथनं नामद्विचत्वारिंशोऽध्यायः॥ ४२॥

भा० टी०—और सब रोग दूर होते हैं, कन्या संतान नहीं होती है, काकवंध्या स्त्री पुत्र को प्राप्त करती है और मृतवत्सा स्त्री भी पुत्र को प्राप्त करती है॥ १७॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां भाषाटीकायां मघा० नाम द्विचत्वारिंशोऽध्यायः॥ ४२॥

॥ ४३ ॥

मघानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

काञ्चीपुर्यां महादेवि वैश्य एकोऽवसत्पुरा।
मेदसिन्द इति ख्यातस्तस्य स्त्री पालिका शुभा॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे देवि! पहले कांचीपुर नामक नगर में मेदसिंद नामक एक वैश्य और पालिका नाम वाली उसकी स्त्री रहती थी॥ १ ॥

अश्वादिविक्रयं देवि छागपक्ष्यादिकं तथा।
प्रत्यहं क्रियते देवि बहुद्रव्यस्य संचयम्॥ २ ॥

भा० टी०—हे देवि! वह घोड़ा, बकरी, पक्षी आदि को बेचने से द्रव्य-संग्रह करता था॥ २ ॥

न देवान् मन्यते देवि पितॄन्नैव च मन्यते।
बहुष्वहस्सु गच्छत्सु प्रमृतौ पितरौ ततः॥ ३ ॥

भा० टी०—हे देवि! वह देवताओं को तथा पितरों को नहीं मानते थे और बहुत से दिन व्यतीत होते गये तब उसके माता-पिता मर गये॥ ३ ॥

स तयोर्नाकरोच्छ्राद्धं यत्कर्तव्यं सुतैः प्रिये!
ततो बहुदिने याते वृद्धे सति वरानने!॥ ४॥

भा० टी०—हे प्रिये! जो पुत्रों द्वारा पिता का श्राद्धकर्तव्य है, वह भी उसने नहीं किया। इसप्रकार हे वरानने! बहुत से दिन व्यतीत होने पर वृद्धत्व को प्राप्त हो गया॥४ ॥

मरणं तस्य वै जातं वैश्यस्य कृपणस्यच।
यमाज्ञयातु दूतेन कुम्भीपाके सुदारुणे॥ ५॥

भा० टी०—फिर उस कृपण वैश्य की मृत्यु हुई और यमराज के दूतों ने आज्ञा पाकर उसे दारुण अर्थात् कठोर नरक में गिरा दिया॥ ५ ॥

निक्षिप्तं शृङ्खलैर्बध्वा युगपञ्चदशं समाः।
भुक्त्वा नरकजं दुःखं महाकृमिसमाकुलम्॥ ६॥

भा० टी०—शृंखला अर्थात् शांकलों से बाँधकर उसे बड़े कृमियों से युक्त नरक में उसे डाला, जहाँ उसने पन्द्रह युगों तक दुःखों को भोगा॥ ६॥

नरकान्निःसृतो देवि महिषत्वं ततोऽलभत्।
पुनर्वै व्याघ्रयोनिश्च मूषयोनिस्ततोऽभवत्॥ ७॥

भा० टी०—हे देवि! नरक से निकलकर महिषी अर्थात् भैंसे की योनि को प्राप्त हुआ, फिर बाघ की तथा बाद में चूहे की योनिको प्राप्त हुआ॥ ७॥

काकयोनिं ततो भुक्त्वा गजयोनिस्ततोऽभवत्।
शुभे देशे विशालाक्षि धनधान्यसमन्वितः॥ ८॥

भा० टी०—फिर काक योनि को भोग कर हाथी की योनि को प्राप्त हुआ। फिर हे देवि! शुभ देश में धनधान्य से युक्त हो कर मनुष्य की योनि में पैदा हुआ ॥ ८॥

व्याधिग्रस्तोऽभवद्देवि पुत्रकन्याविवर्जितः।
काकवन्ध्या भवेन्नारी मृतवत्सा ह्यपुत्रिणी॥ ९॥

भा० टी०—और हे देवि! व्याधि से पीड़ित पुत्र और कन्या से ही रहित है, इसकी स्त्री काकवन्ध्या अथवा मरने वाले पुत्रों की उत्पत्ति करने वाली पुत्रहीन है॥९॥

पूर्वजन्मकृतं पापं यतः शान्तिमवाप्नुयात्।
तत्सर्वं शृणु मे देवि विस्तरेण समन्वितम्॥ १०॥

भा० टी०—हे देवि पूर्वजन्म के पाप से कैसे शांति को प्राप्ति हो, इसको विस्तार से युक्त कहता हूँ तू श्रवण कर॥ १०॥

प्रयागे नियतः स्नायी प्रतिमाघं भवेद्यदा।
गायत्रीजातवेदाभ्यां दशायुतजपं तथा॥ ११॥

भा० टी०—नियम से प्रयाग में स्नान तथा माघ में प्रयाग-स्नान, गायत्री-मंत्र तथा जातवेदसे० इस मंत्र का एक लाख तक जप करायें॥ ११॥

भूमिदानं च वै कृत्वा ततः पुत्रः प्रजायते।
वन्ध्यत्वं शमनं याति काकवन्ध्यात्वमप्यथ॥ १२॥

भा० टी०—और भूमि का दान कराने से पुत्र की प्राप्ति होती है तथा वंध्यापन, काक-वन्ध्यापन—ये भी दूर होते हैं॥ १२॥

मृतवत्सा लभेत्पुत्रं चिरंजीविनमुत्तमम्।
सर्वे रोगाः क्षयं यान्ति नात्र कार्या विचारणा॥ १३॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे मघानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं नामत्रयश्चत्वारिंशोऽध्यायः॥ ४३॥

भा० टी०—और मृतवत्सा चिरकाल तक जीने वाले उत्तम पुत्र को प्राप्त करती है और सब रोग नष्ट होते हैं, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है॥ १३॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्व० मघा० चतुर्थ० नामत्रयश्चत्वारिंशोऽध्यायः॥ ४३॥

॥ ४४ ॥

पूर्वाफाल्गुनीनक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

सौराष्ट्रविषये देवि शोभनं नाम वै पुरम्।
तत्र क्षत्री वसत्येको धनधान्यसमन्वितः॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे देवि! सौराष्ट्र देश में शोभन नाम वाला पुर होता था, वहाँ एक क्षत्रिय धनधान्य से युक्त होकर निवास करता था॥ १ ॥

मोहनेति च विख्यातस्तस्य पत्नी सती शुभा।
वैश्यवृत्तिरतो नित्यं व्यापारं कुरुते सदा॥ २ ॥

भा० टी०—वह मोहन नाम से विख्यात और शुभ लक्षणों वाली सती उसकी पत्नी ऐसे वह क्षत्रिय वैश्यवृत्ति में रत होकर व्यापार करता था॥ २ ॥

व्यापारार्थं ततो देवि वृषभा बहुपालिताः।
द्वौ वृषौ योजितौ देवि कूपे वै पतितौ प्रिये!॥ ३ ॥

भा० टी०—हे देवि! व्यापार के लिए उसने दो बैल पाले। हे प्रिये! वे बैल उसने कूपके जल निकालने के लिए युक्त किये वे बैल कुएँ में पड़ गये॥ ३ ॥

मृतौ तौ रात्रिकालेपि जगाम स तदा नच।
पापं च स न जानाति गर्वद्वारा वरानने॥ ४ ॥

भा० टी०—फिर हे देवि! कुएँ में पड़ कर रात्रि में उन बैलों की मृत्यु हो गयी तब वहाँ वह गया भी नहीं और वह गर्व में प्राप्त होकर उनके मरने के पाप को नहीं मानता था॥ ४ ॥

यत्किंचित्क्रियते कर्म शुभं तु कलुषं बहु।
गुणाः स्वल्पा बह्वगुणा मोहनं नाम क्षत्रिणः॥ ५ ॥

भा० टी०—वह मोहन नामक क्षत्रिय जिसने शुभ कर्म तो थोड़े और पाप बहुत। गुण थोड़े, अगुण बहुत किये॥ ५ ॥

ततो बहुगते काले मरणं तस्य चाऽभवत्।
पश्चान्मृता तस्य पत्नी महालुब्धा वरानने!॥ ६॥

भा० टी०—ऐसे बहुत काल बीतने पर उसकी मृत्यु हुई हे वरानने! पीछे महालोभ से युक्त उसकी स्त्री की भी मृत्यु हो गई॥ ६॥

निक्षिप्तो नरके घोरे यमदूतैर्यमाज्ञया।
षष्टिवर्षसहस्राणि भुक्त्वा नरकयातनाम्॥ ७॥

भा० टी०—फिर वह क्षत्रिय यम के दूतों द्वारा यम की आज्ञा से साठ हजार वर्षों तक घोर नरक में डाला गया॥ ७॥

पुनः सरटयोनिश्च वृषयोनिस्ततोभवत्।
मानुषत्वं ततो देवि मध्यदेशे वरानने॥ ८॥

भा० टी०—वह वहाँ से निकल सरट अर्थात् छिपकली की योनि को प्राप्त हुआ फिर बैल की योनि को प्राप्त होकर हे देवि हे! वरानने! मध्यदेश में मनुष्य योनि को प्राप्त हुआ॥ ८॥

वृषयोश्च पुरा मृत्युर्न कृतं पापमोचनम्।
तस्माद्व्याधिः समुत्पन्नः पूर्वकर्मप्रयत्नतः॥ ९॥

भा० टी०—ऐसे पहले कर्म के प्रसंग से बैलों की मृत्यु होने पर भी पाप-मोचन नहीं किया, जिससे शरीर में व्याधि हुई॥ ९॥

मुखरा याऽभवत्पत्नी पुरा च प्रबला प्रिये!।
पुनर्विवाहिता देवि तद्रूपा मुखरा तथा॥ १०॥

भा० टी०—और हे देवि! उसकी पत्नी मुखरा अर्थात् वाचाल और प्रबला थी, सो अब उससे पुनर्विवाहिता हो कर वैसी ही हो गयी है॥ १०॥

तत्पापशमनार्थाय षडंशं दानमाचरेत्।
गायत्रीमूलमन्त्रेण पञ्चलक्षजपं यदा॥ ११॥

भा० टी०—उस पाप की शांति के लिए अपने घर के द्रव्य का छठा भाग दान करें और ५ लाख गायत्री के मूल मंत्र का जप करवायें॥ ११॥

ततः पापं क्षयं याति शीघ्रं पुत्रो भवेत् प्रिये!
अपुत्रा मृतवत्सा च काकवन्ध्या च या शिवे!॥ १२॥

भा० टी०—तब हे प्रिये! पाप दूर होकर पुत्र की प्राप्ति शीघ्र होती है और हे शिवे! बिना पुत्र वाली, मरने वाले पुत्रों वाली, काकवन्ध्या॥ १२॥

पुत्रिण्यश्चैव ताः सर्वा नात्र कार्या विचारणा।
रोगाः सर्वे विनश्यन्ति शीघ्रमेव न संशयः॥ १३॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे पूर्वानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम चतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः॥ ४४॥

भा० टी०—उपर्युक्त ये सब पुत्रों वाली होती हैं इसमें कुछ विचार नहीं करना और सब रोग शीघ्र नाश को प्राप्त होते हैं, इसमें संशय नहीं॥ १३॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे पूर्वान० प्रथम० नामचतुश्चत्वारिंशत्तमोऽध्यायः॥ ४४॥

॥ ४५ ॥

पूर्वानक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

कर्णाटविषये देवि काष्ठकारोवसत्पुरा।
छिनत्ति सर्वकाष्ठानि व्ययं कृत्वा दिने दिने॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे देवि! कर्णाटदेश में पहले एक लकड़हारा रहता था, वह लकड़ी काटकर प्रतिदिन बेचा करता था॥ १ ॥

एका वै गोत्रजा कन्या तस्यां च मैथुनं कृतम्।
ततो बहुगते काले तस्य मृत्युरभूत्पुरा॥ २ ॥

भा० टी०—उसने अपने गोत्र की कन्या से मैथुन किया, तब बहुत समय बीतने पर उसकी मृत्यु हो गयी॥ २ ॥

पश्चात्तस्य मृता नारी कुलटा व्यभिचारिणी।
यमदूतैर्महाघोरैर्निक्षिप्तो नरकार्णवे॥ ३ ॥

भा० टी०—पश्चात् व्यभिचारिणी कुलटा उसकी स्त्री की भी मृत्यु हो गयी फिर यमराज के दूतों ने आज्ञा पाकर उन्हें घोर नरक रूपी समुद्र में डाला॥ ३ ॥

यमाज्ञया महादेवि भुक्त्वा नरकयातनाम्।
षष्टिवर्षसहस्राणि नरके पच्यते च सः॥ ४॥

भा० टी०—हे देवि! यम की आज्ञा से नरक के दु:खों को भोग कर साठ हजार वर्षों तक वह नरक में कर्मफल भोगता रहा॥ ४॥

कुक्कुटत्वं ततो जातं चक्रवाकस्ततोऽभवत्।
मानुषत्वं ततो जातं देशे पूज्यतमे तथा॥ ५ ॥

भा० टी०—कुक्कुट अर्थात् मुरगा की योनि को प्राप्त हुआ फिर चक्रवाक अर्थात् चकुवा की योनि को प्राप्त हुआ फिर पुण्य युक्त देश में मनुष्य योनि को प्राप्त हुआ है ॥५ ॥

शूद्रसेवारतो नित्यं शूद्रस्नेहेन यन्त्रितः।
पितुर्मातुर्भवेद्वैरं महिष्याः क्रयविक्रये॥ ६॥

भा० टी०—शूद्र-सेवा में रत और शूद्र-स्नेह में सदा प्रीति युक्त होकर माता-पिता से वैर और महिष्यादि के क्रयविक्रय अर्थात् बेचने का व्यवहार करता है॥ ६॥

पूर्वजन्मनि भो देवि कृतं वृक्षस्य च्छेदनम्।
तस्माद्रोगः समुत्पन्नः कटिशूलं निरन्तरम्॥ ७॥

भा० टी०—हे देवि! पूर्वजन्म में उसने वृक्ष का छेदन किया उस पाप से रोग युक्त शरीर पैदा हुआ और निरंतर कटि में शूल रोग रहता॥ ७॥

गोत्रकन्याभिगमनं यत्कृतं पूर्वजन्मनि।
तेन पापेन भो देवि पुत्रस्य मरणं भवेत्॥ ८॥

भा० टी०—और हे देवि! पहले जन्म में अपने गोत्र की कन्या से गमन करने से उसका पुत्र होकर मर गया॥ ८॥

गर्भस्त्रावी ततो भार्या काकवन्ध्यात्वमाप्नुयात्।
बह्व्यः कन्यास्ततो जाताः कष्टं प्राप्नोत्यहर्निशम्॥ ९॥

भा० टी०—फिर उसकी भार्या का गर्भ खंडित होकर वह काकवन्ध्यापन को प्राप्त हुई फिर बहुत सी कन्याएँ हुईं ऐसे रात दिन कष्ट को प्राप्त हुए॥ ९॥

अतः शान्तिं प्रवक्ष्यामि पूर्वपापविशुद्धये।
गृहवित्ताष्टमं भागं ब्राह्मणाय समर्पयेत्॥ १०॥

भा० टी०—अब उस पाप की शुद्धि करने के लिए शांति को कहता हूँ, घर के द्रव्य का आठवाँ भाग ब्राह्मण को दान करें॥ १०॥

गायत्रीलक्षजाप्येन गोदानेन विशेषतः।
वाटिकारोपणेनापि गृहदानेन वै शिवे!॥ ११॥

भा० टी०—हे शिवे! गायत्री के लक्ष जप से तथा विशेष करके गोदान और धर्मशाला तथा घर का दान करने से॥ ११॥

रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति नात्र कार्या विचारणा।
पूर्वजन्मकृतं पापं क्षयं याति न संशयः॥ १२॥

भा० टी०—सब रोग नाश को प्राप्त होते हैं, इसमें कुछ विचार नहीं करना, ऐसे पिछले जन्म के पाप नष्ट होते हैं, इसमें संशय नहीं॥ १२॥

जायन्ते बहवः पुत्राः शूराः कीर्तिविवर्द्धनाः।
कन्यका नैव जायन्ते काकवन्ध्या तु शाम्यति॥ १३॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे पूर्वानक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम पञ्चचत्वारिंशत्तमोऽध्यायः॥ ४५॥

भा० टी०—और बड़े शूर-वीर कीर्ति के बढ़ाने वाले पुत्रों का जन्म होते है तथा कन्या का जन्म होता ही नहीं, काकवन्ध्यापन की शांति होती है॥ १३॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पूर्वा० नाम प्रायश्चित्तकथनं नाम पञ्चचत्वारिंशत्तमोऽध्यायः॥ ४५॥

॥ ४६ ॥

पूर्वानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

सिंहले वै महाद्वीपे तत्र सिंहपुरं शिवे!
कायस्थो वैष्णवोऽप्येकष्टीकारामेति नामतः ॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे शिवे! सिंहलद्वीप के मध्य सिंह नाम से विख्यात एक पुर है, जिसमें एक कायस्थ विष्णुभक्त टीकाराम नाम वाला व्यक्ति रहता था ॥ १ ॥

तस्य भार्या विशालाक्षी सूर्यानाम्नी शुभा सती।
आतिथ्यकरणे शक्ता देवतात्यन्तपूजिका ॥ २ ॥

भा० टी०—उसकी स्त्री सुंदर नेत्रों वाली शुभलक्षणा बड़ी श्रेष्ठ सूर्य्या नाम से विख्यात थी और अभ्यागत के पूजन करने में प्रवृत्त देवताओं का अति पूजन करने वाली हुई ॥ २ ॥

कार्तिके माघवैशाखे दीपदानं करोति सा।
कदाचिद्दैवयोगेन तीर्थयात्रार्थमागता ॥ ३ ॥

भा० टी०—वह कार्तिक, माघ, वैशाख—इन महीनों मे दीपदान किया करती थी, कभी देव योग से वह तीर्थ यात्रा के लिए तीर्थ को गई ॥ ३ ॥

स्वर्णकारो महादेवि बहुस्वर्णेन संयुतः।
आगतः सिंहनगरे तत्र वासमकारयत् ॥ ४ ॥

भा० टी०—हे देवि! एक स्वर्णकार बहुत से स्वर्ण से युक्त होकर सिंहल नामक उस पुर में आकर रहने लगा ॥ ४ ॥

प्रीतिः परस्परं चैव कायस्थस्वर्णकारयोः।
स्वर्णकारस्य कन्यैका सुन्दरी कमलानना ॥ ५ ॥

भा० टी०—वहाँ स्वर्णकार और कायस्थ की आपस में महा प्रीति हो गयी और स्वर्णकार की एक सुंदरी कमल के समान नेत्रों वाली पुत्री थी ॥ ५ ॥

कायस्थस्याभवद्भार्या दैवयोगात्तदा शिवे!
स्वर्णकारस्य यत्सर्वं स्थितं तेन हृतं धनम्॥ ६॥

भा० टी०—हे शिवे! वह दैवयोग से कायस्थ की भार्या हो गयी, और स्वर्णकार के घर में जितना द्रव्य था वह सब कायस्थ के ही घर को चला आया॥ ६॥

द्रव्यक्षयमथो ज्ञात्वा स्वर्णकारो मृतः पुरा।
पुत्रदारादिकं त्यक्त्वा कायस्थश्च तदा शिवे!॥ ७॥

भा० टी०—वह स्वर्णकार द्रव्य के नाश को जान कर दुःखी हो कर मृत्यु को प्राप्त हो गया, तब वह कायस्थ पुत्र और स्त्री इत्यादि को त्याग कर॥ ७॥

तया सार्द्धं रमत्येको पापात्मा कमलानने!
एवं बहुगते काले कायस्थोऽपि मृतः प्रिये!॥ ८॥

भा० टी०—उस स्वर्णकार की कन्या से ही रमण करता रहा ऐसे बहुत से दिन व्यतीत होने पर हे कमलानने! कायस्थ भी मृत्यु को प्राप्त हो गया॥ ८॥

कुम्भीपाकेऽभवद्वासो वर्षलक्षत्रयं तथा।
पुनः कर्मवशाद्देवि मृगयोनिस्ततोऽभवत्॥ ९॥

भा० टी०—हे देवि! उसका कुंभीपाक नामक नरक में वास हो गया और तीन लाख वर्ष पर्य्यंत नरक को भोग कर फिर मृग की योनि को प्राप्त हुआ॥ ९॥

मानुषत्वं वरारोहे पुनः प्राप्तो महीतले।
धनधान्यसमायुक्तो वंशो नैव प्रजायते॥ १०॥

भा० टी०—फिर हे वरारोहे! भूमि पर मनुष्य शरीर को प्राप्त होकर धनधान्य से युक्त किन्तु वंश से हीन हो गया॥ १०॥

बहुरोगसमायुक्तो ज्वरोऽतीव मृतेः समः।
पुत्राणां मरणं देवि शीतलाद्यैरुपद्रवैः॥ ११॥

भा० टी०—वह बहुत रोगों से युक्त, मृत्यु के तुल्य ज्वर से पीड़ित है और उसके पुत्रों का मरण शीतला आदि महामारियों से हो गया है॥ ११॥

पूर्वजन्मनि भो देवि परस्त्रीगमनं कृतम्।
त्यक्ता विवाहिता नारी पुत्रकन्यासमन्विता॥ १२॥

भा० टी०—हे देवि! पिछले जन्म में परस्त्री-गमन करने से और पुत्र-कन्या-समेत अपनी स्त्री का त्याग करने से॥ १२॥

तत्पापेनैव भो देवि पुत्रादीनां विनाशनम्।
गर्भनाशो भवेद्देवि वन्ध्यात्वं जायते शिवे!॥ १३॥

भा० टी०—हे देवि! उस पाप के प्रभाव से पुत्रादिकों का मरण हुआ और हे देवि! गर्भ नष्ट होते हैं अथ्सवा हे शिवे! वन्ध्यापन को उसकी स्त्री प्राप्त होती है॥ १३॥

काकवन्ध्या भवेन्नारी सुखं नैव प्रजायते।
स्वल्पयोनिकृशाङ्गश्च कथाश्रवणतत्परः॥ १४॥

भा० टी०—काकवन्ध्यापन को प्राप्त होती है उसको सुख नहीं होता है, फिर कृशांग और सूक्ष्म भोग वाला, कथाश्रवण करने में तत्पर ऐसा होता है॥ १४॥

विद्यादानविहीनश्च स्वकुले बहुनिष्ठुरः।
अस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि कृतं यत्पूर्वजन्मनि॥ १५॥

भा० टी०—वह विद्या के दान से रहित अपने कुल में कष्ट देने वाला है। अब पूर्वजन्म में जो कुछ बुरा कर्म किया है, उस की शांति को कहता हूँ॥ १५॥

तत्सर्वं शृणु मे देवि यतः शुद्धिमवाप्नुयात्।
गायत्रीमूलमन्त्रेण लक्षजाप्यं वरानने!॥ १६॥

भा० टी०—हे देवि! उस सबका तुम श्रवण करो जिस संसार के जन सिद्धि को प्राप्त हों, हे वरानने! गायत्री के मूल मंत्र का एक लाख तक जप करायें॥ १६॥

हवनं तद्दशांशेन तर्पणं मार्जनं तथा।
हरिवंशश्रुतिं कुर्य्यात् त्रिवारावृत्तिसंख्यया॥ १७॥

भा० टी०—उसके दशांश हवन, दशांश तर्पण, दशांश मार्जन करायें और तीन आवृत्ति से युक्त हरिवंश का श्रवण करें॥ १७॥

दशवर्णां ततो दद्यात्स्वर्णदानं विशेषतः।
निष्कत्रयं प्रदद्याच्च ततः पापक्षयो भवेत्॥ १८॥

भा० टी०—और दशवर्ण वाली गौओं का दान तथा विशेषकर स्वर्ण का दान और सुवर्ण के तीन मोहरों का दान करने से पापों का नाश होता है॥ १८॥

भोजयेद्ब्राह्मणान्षष्टिं तथा दद्याच्च दक्षिणाम्।
एवं कृते विधाने च पुत्रो भवति नान्यथा॥ १९॥

भा० टी०—और साठ ब्राह्मणों को भोजन करायें और उन्हीं को दक्षिणा दें ऐसे विधानपूर्वक करने से निश्चय ही पुत्र की उत्पत्ति होती है यह अन्यथा नहीं है॥ १९॥

रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति नात्र कार्या विचारणा।
एवं यदा न कुर्यात्तु तदा रोगाः पुनः पुनः॥ २०॥

भा० टी०—और सब रोग नाश को प्राप्त होते हैं इसमें कुछ भी विचार नहीं करना है और जो ऐसा नहीं करें तो बार-बार शरीर में रोग पैदा होते हैं॥ २०॥

जायन्ते नात्र संदेहः पूर्वजन्मफलात्किल।

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे पूर्वानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम षट्चत्वारिंशोऽध्यायः॥ ४३॥

भा० टी०—इसमें संशय नहीं यह निश्चय ही पूर्वजन्म का फल है॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे तृतीयचरणे प्रायश्चित्तकथनं नाम षट्चत्वारिंशोऽध्यायः॥ ४६॥

॥ ४७ ॥

पूर्वानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

नर्मदादक्षिणे कूले ब्राह्मणो वसति प्रिये!
ब्रह्मकर्मकरो नित्यं सदा वेदपरायणः ॥ १ ॥

भा० टी०—हे प्रिये! नर्मदा के दक्षिण तीर पर एक ब्राह्मण वास कहता था, वह ब्रह्म कर्म में नित्य रत रहता था, सर्वदा वेद में परायण रहता था ॥ १ ॥

शंकरस्य पुरे देवि प्रत्यहं वेदपाठनम्।
अर्भकान्ब्रह्मजातीयान्पाठयामास वै तदा ॥ २ ॥

भा० टी०—हे देवि! महादेव की पुरी में नित्य प्रति वेद पढ़ाया करता था और ब्रह्म जातीय बालकों को पढ़ाया करता था ॥ २ ॥

तस्य भार्याद्वयं चासीदेका प्रीतिमती सदा।
विरोधिनी ततो ह्येका ज्येष्ठा भार्या तु तां त्यजेत् ॥ ३ ॥

भा० टी०—उनकी दो भार्याएँ थीं, जिन में से प्रीतियुक्त एक थी और दूसरी विरोध से युक्त थी, वह बड़ी थी उसने उसका त्याग कर दिया ॥ ३ ॥

एवं बहुगते काले ब्राह्मणस्य तदा शिवे!।
ततो मृत्युवशं यातस्तस्य भार्या गरीयसी ॥ ४ ॥

भा० टी०—हे शिवे! ऐसे बहुत काल व्यतीत होने पर उस ब्राह्मण की मृत्यु हो गयी, जो उसकी श्रेष्ठ भार्य्या थी ॥ ४ ॥

चितां कृत्वा प्रयत्नेन भर्तुः खलु वराननेऽ!।
भर्त्रा सह च भो देवि सती जाता महामतिः ॥ ५ ॥

भा० टी०—हे देवि! हे वरानने! यत्न से चिता बनाकर वह पति के साथ सती हो गयी ॥ ५ ॥

सत्यलोकस्त्वभूत्तस्य जायया सहितस्य वै।
बहुवर्षसहस्राणि सत्यलोकेऽवसत्तदा ॥ ६ ॥

भा० टी०—तब स्त्री के सहित उसको सत्य लोक की प्राप्ति हुई और अनेक हजारों वर्षों तक वह सत्यलोक में वास करता रहा॥ ६॥

ततः पुण्यक्षये जाते मर्त्यलोकेऽभवत्पुनः।
मानुषत्वं शुभे जन्म कुले महति पूजिते॥ ७॥

भा० टी०—फिर वहाँ पुण्यक्षीण होने पर मनुष्य-लोक में उसका जन्म हुआ, सब जनों से पूजित, शुभ लक्षणों से युक्त उसका उत्तम कुल में जन्म हुआ॥ ७॥

धनधान्यसमायुक्तो वंशहीनो विचक्षणः।
पूर्वजन्मनि भो देवि भार्य्यात्यागः कृतस्तथा॥ ८॥

भा० टी०—और हे देवि! धनधान्य से युक्त, बुद्धिमान् वह वंश से रहित होता गया है, क्योंकि उसने पिछले जन्म में भार्य्या का त्याग किया था॥ ८॥

तेन दोषेण भो देवि ततः पुत्रो न जीवति।
दिने दिने कुक्षिपीडा तस्य चाऽभिनवा भवेत्॥ ९॥

भा० टी०—हे देवि! उस दोष से पुत्र न उसका हुआ और प्रतिदिन उसकी कोख में नवीन पीड़ा होती रहती है॥ ९॥

पुण्यं शृणु महादेवि यतः शान्तिर्भविष्यति।
गृहवित्तषडंशेन पुण्यकार्यं च कारयेत्॥ १०॥

भा० टी०—हे देवि! अब मैं उसकी शांति के प्रायश्चित को कहता हूँ तुम श्रवण करो घर के द्रव्य में से छठा भाग पुण्य हेतु दान करें॥ १०॥

वापीकूपतडागांश्च पथि मध्ये च कारयेत्।
गायत्रीजातवेदाभ्यां जपं कुर्याद्विचक्षणः॥ ११॥

भा० टी०—बावड़ी, कूप, तलाब को मार्ग के मध्य में बनायें तथा गायत्री और जातवेद० इन मंत्रों का जप बुद्धिमान् जन करायें॥ ११॥

होमं च तद्दशांशेन तिलतण्डुलपायसैः।
दशवर्णाः प्रदातव्या विप्राणां भोजनं शतम्॥ १२॥

भा० टी०—और दशांश हवन तिल, चावल, घृत तथा खीर इन से करायें और दशवर्ण वाली गौओं का दान करें और सौ ब्राह्मणों को भोजन करायें॥ १२॥

एवं कृते न संदेहो वंशलाभो भवेदनु।
व्याधेश्चैव प्रमुच्येत सत्यं सत्यं वरानने!॥ १३॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे पूर्वानक्षत्रस्य चतुर्थचरणे प्रायश्चित्तकथनं नाम सप्तचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४७ ॥

भा० टी०—ऐसा कराने से निश्चय ही वंश का लाभ होता है और हे वरानने! व्याधि से भी छूट जाता है। यह सत्य है और सत्य ही है ॥ १३ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां० पूर्वा० चतुर्थ० नाम सप्तचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४७ ॥

॥ ४८ ॥

उत्तराफाल्गुनीनक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

अयोध्यानगरे देवि वैश्योऽवात्सीत्सुरेश्वरि!।
स्वकर्मनिरतो दक्षो विष्णुभक्तिपरायणः ॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे सुरेश्वरि! हे देवि! अयोध्यानगरी में एक वैश्य रहता था, वह अपने कर्म में रत बड़ा चतुर और विष्णु भक्ति में परायण था॥ १ ॥

धनधान्यसमायुक्तो विप्रसेवासु तत्परः ।
पत्नी तस्य वरारोहे सुन्दरी च पतिव्रता ॥ २ ॥

भा० टी०—हे वरारोहे! धनधान्य से युक्त ब्राह्मणों की सेवा में रत उसकी स्त्री अतिसुंदर पतिव्रता धर्म का पालन करने वाली थी॥ २ ॥

कश्चिन्मित्रं प्रियस्तस्य ब्राह्मणो वेदपारगः ।
प्रत्यहं निकटे तस्य बहु स्वर्णमुपार्जयेत्।
ब्राह्मणोऽप्यात्मनः स्वर्णं ददौ वैश्याय वै शिवे!॥ ३ ॥

भा० टी०—और कोई वेद का पाठ करने वाला ब्राह्मण उस वैश्य के समीप नित्य प्रति स्वर्ण को इकट्ठा किया करता था। हे शिवे! वह ब्राह्मण अपने स्वर्ण को उस वैश्य को ही देता था॥ ३ ॥

तीर्थयात्राप्रसङ्गेन वाराणस्यां गतस्स वै ।
गत्वा काश्यां वरारोहे शरीरं ब्राह्मणोऽत्यजत् ॥ ४ ॥

भा० टी०—और तीर्थ-यात्रा के प्रसंग से वह काशीजी में गया, वहीं काशीजी में उसने अपने शरीर को त्याग दिया॥ ४॥

सर्वं वैश्येन तद्द्रव्यं भुक्तं बहुदिनोपरि।
शरीरत्याजनाद्देवि पुण्यतीर्थे स्त्रिया सह ॥ ५ ॥

भा० टी०—हे देवि! उस वैश्य ने वह सब द्रव्य बहुत काल तक भोगा। और पवित्र तीर्थ पर शरीर त्यागने से वह वैश्य स्त्री सहित॥ ५ ॥

अयोध्यायां विशालाक्षि स्वर्गवासं तथाऽक्षयम्।
दशपञ्चयुगं भुक्त्वा फलं चैव मनोहरम्॥ ६॥

भा० टी०—हे विशालाक्षि! अयोध्यापुरी में मरने से उसे अक्षय स्वर्गवास प्राप्त हुआ १५ युग वर्षों तक मनोहर उसके फल को भोगता रहा॥ ६॥

ततः पुण्यक्षये जाते मृत्युलोके सुरेश्वरि!
कुले महति वै पूज्ये नरजन्म ततोऽभवत्॥ ७॥

भा० टी०—हे सुरेश्वरि! वहाँ पुण्य क्षीण होने पर वहाँ मृत्यु लोक में बड़ों से पूजित उत्तम कुल में मनुष्य योनि को प्राप्त हुआ॥ ७॥

धनधान्यसमायुक्तो विष्णुपूजासु तत्परः।
ब्राह्मणस्यैव स्वर्णं हि न दत्तं वै गृहीतवान्॥ ८॥

भा० टी०—वह धनधान्य से युक्त, विष्णुपूजा में रत है और ब्राह्मण का द्रव्य नहीं देने से तथा अपने आप ही भोगने से इस पाप के प्रभाव से॥ ८॥

तस्मात्खलु वरारोहे पुत्रस्तस्य न जायते।
शरीरे च महाकष्टं मध्ये मध्ये प्रजायते॥ ९॥

भा० टी०—हे वरारोहे! उसके पुत्र नहीं हुआ और शरीर में महाकष्ट उसे मध्य-मध्य में होता है॥ ९॥

तस्य चोत्तरफाल्गुन्याः प्रथमे चरणे शुभे।
जन्म वै चाप्यऽभूद्देवि पुत्रकन्याविवर्जितः॥ १०॥

भा० टी०—हे देवि! उसका उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र के पहले चरण में जन्म हुआ इससे पुत्र और कन्या से रहित हुआ॥ १०॥

अस्य पापस्य वै शान्तिं पुण्यं शृणु वरानने!
हरिवंशश्रुतिं कुर्याद्वारमेकं च तत्परः॥ ११॥

भा० टी०—हे वरानने! इस पाप की पवित्र शांति का तुम श्रवण करो। एकबार सावधान होकर हरिवंश का श्रवण करें॥ ११॥

गृहवित्तषडंशेन पुण्यकार्यं च कारयेत्।
गायत्रीमूलमन्त्रेण दशायुतजपं तथा॥ १२॥

भा० टी०—घर के द्रव्य में से छठे भाग को दान कर दें और गायत्री के मूल मंत्र का १०००० जप करायें॥ १२॥

होमं च तद्दशांशेन तर्पणं मार्जनं तथा।
दशवर्णाः प्रदातव्याः स्वर्णयुक्ताश्च साम्बराः॥ १३॥

भा० टी०—और उसके दशांश से हवन तथा दशांश से तर्पण तथा दशांश मार्जन करायें और दश वर्ण वाली गौओं का दान सुवर्ण और वस्त्रों से युक्त करके करें॥ १३॥

भूमिदानं ततो देवि विप्राय विदुषे प्रिये!
व्रतं सूर्यस्य वै कुर्य्यात्पत्न्या सह वरानने!॥ १४॥

भा० टी०—हे देवि! पृथिवी (भूमि) का दान वेद ज्ञाता ब्राह्मण को करें और हे वरानने! स्त्री सहित आदित्य का व्रत करें॥ १४॥

कूष्माण्डं नारिकेरं च पञ्चरत्नसमन्वितम्।
गङ्गामध्ये प्रदातव्यं सुवर्णं दक्षिणां ततः॥ १५॥

भा० टी०—और पेठा तथा नारियल को पंचरत्न से युक्त कर सुवर्ण की दक्षिणा सहित गंगाजी के मध्य में दान कर दें॥ १५॥

शय्यादानं प्रयत्नेन प्रकुर्यान्नियतेन्द्रियः।
एवं कृते न संदेहः सर्वरोगो विनश्यति॥ १६॥

भा० टी०—शुद्ध मन से जितेन्द्रिय होकर यतन से शय्या का दान करें ऐसा करने से सब रोग नष्ट होते हैं, इसमें संदेह नहीं॥ १६॥

अपुत्रो लभते पुत्रं काकवन्ध्या सुतं लभेत्।
मृतवत्सा सुतं सूते चिरंजीविनमुत्तमम्॥ १७॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे उत्तरानक्षत्रस्य प्रथमचरणे प्रायश्चित्तकथनं नाम अष्टचत्वारिंशोऽध्यायः॥ ४८॥

भा० टी०—इसप्रकार बिना पुत्र वाले पुत्र को प्राप्त करते हैं और काकवन्ध्या स्त्री भी पुत्र को प्राप्त करती है मरने वाले पुत्रों वाली स्त्री भी बहुत काल तक जीवत रहने वाले पुत्र को प्राप्त करती है॥ १७॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां०
नामाष्टचत्वारिंशोऽध्यायः॥ ४८॥

॥ ४९ ॥

उत्तराफाल्गुनीनक्षत्र द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

पुरुषोत्तमपुरे रम्ये स्वर्णकारोऽवसत्पुरा।
स्वकर्मनिरतो नित्यं हेमकृत्ये विचक्षणः॥ १॥

भा० टी०—पुरुषोत्तमपुर नामक नगर में पहले एक स्वर्णकार वास करता था। अपने कर्म में रत सुवर्ण के काम में चतुर था॥ १॥

ब्राह्मणस्तस्य वै मित्रं धनाढ्यो वेदवर्जितः।
तेन विप्रेण भो देवि स्वर्णं दत्तं शतं पलम्॥ २॥

भा० टी०—हे देवि! उस स्वर्णकार का एक ब्राह्मण मित्र था, वह धन से युक्त था और वेद से रहित था, उस विप्रने सौ पल मात्रावाला सुवर्ण उस स्वर्णकार (सुनार) को दिया॥ २॥

स्वर्णकाराय मित्राय माल्यार्थं च विचक्षणः।
ब्राह्मणाय न दत्तं हि माल्यं दिव्यं वरेऽनघे॥ ३॥

भा० टी०—हे अनघे! उस स्वर्णकार मित्र को माला बनाने के लिए दिया था, फिर उस स्वर्णकार ने माला नहीं दी॥ ३॥

ब्राह्मणस्याभवन्मृत्युः किंचित्काले गते सति।
स्वर्णं तत्स्वेच्छया भुक्तं पुत्रदारयुतेन च॥ ४॥

भा० टी०—तब कुछ काल व्यतीत होने पर उस ब्राह्मण की मृत्यु हो गयी, तब वह द्रव्य स्वर्णकार ने पुत्रदारा सहित स्वयं भोगा॥ ४॥

ततो बहुगते काले स्वर्णकारस्य वै शिवे!।
मरणं वै तदा जातं पुत्रदारयुतस्य च॥ ५॥

भा० टी०—हे शिवे! फिर बहुत सा समय बीत जाने पर उस स्वर्णकार की पुत्रदारा सहित मृत्यु हो गयी॥ ५॥

महाकटाहनरके दूतैः क्षिप्तो यमाज्ञया।
युगमेकं वरारोहे भुक्तं नरकजं फलम्॥ ६॥

भा० टी०—हे वरारोहे! उस स्वर्णकार को यमराज की आज्ञा पा कर दूतों ने महाकटाह नाम वाले नरक में प्राप्त किया तहां एक युग संख्या वाले वर्षों तक नरक के फल को भोगता भया॥ ६॥

नरकान्निर्गतो देवि व्याघ्रयोनिस्ततोऽभवत्।
व्याघ्रयोनिं ततो भुक्त्वा शृगालत्वं ततोऽभवत्॥ ७॥

भा० टी०—हे देवि! नरक से निकलकर बाघ की योनि को प्राप्त हुआ, फिर बाघ की योनि को भोगकर गीदड़ की योनि को प्राप्त हुआ॥ ७॥

ततः काकस्य वै योनिं भुक्त्वा नरकमाप्नुयात्।
देशे पुण्यतरे देवि मानुषत्वं सुरेश्वरि!॥ ८॥

भा० टी०—हे देवि! वहाँ से भी निकलकर काक पक्षी की योनि को प्राप्त हुआ, फिर वहाँ के दुःखों को भोगकर हे सुरेश्वरि! अति पवित्र देश में मनुष्य योनि को प्राप्त हुआ॥ ८॥

पूर्वजन्मनि यत्स्वर्णं ब्राह्मणस्य ऋतं प्रिये!
तेन पापेन भो देवि पुत्रो नैव प्रजायते॥ ९॥

भा० टी०—हे प्रिये! पिछले जन्म में उसने ब्राह्मण के सुवर्ण को भोगा था उस पाप से उसका पुत्र नहीं हुआ॥ ९॥

गर्भस्त्रावो भवेन्नार्य्याः काकवन्ध्या च जायते।
अस्य पापस्य वै शान्तिं शृणु देवि सुशोभने!॥ १०॥

भा० टी०—उसकी स्त्री के गर्भस्राव होता है जिसके कारण उसकी स्त्री काकवन्ध्यापन को प्राप्त होती गई, हे सुशोभने! हे देवि! इस पाप की शांति को मैं कहता हूँ, तुम सुनो॥ १०॥

षडंशं च ततो देवि ब्राह्मणाय समर्पयेत्।
दशायुतजपं कुर्याद्गायत्र्या नियमेन च॥ ११॥

भा० टी०—घर के द्रव्य में से छठे भाग को ब्राह्मण को दान करें दश हजार गायत्री का नियम से जप करायें॥ ११॥

हरिवंशश्रुतिं देवि संकल्प्य श्रद्धया युतः।
होमं वै कारयेद्देवि स्वर्णदानं शतं पलम्॥ १२॥

भा० टी०—हे देवि! हरिवंश का श्रवण करें और श्रद्धायुक्त होकर हरिवंश का संकल्प करें होमादि करायें सौ पल मात्रा वाले सुवर्ण का दान करें॥ १२॥

गोदानं विधिवत्कुर्य्याच्छिवपूजनमेव च।
एवं कृते न संदेहः शीघ्रं पुत्रमवाप्स्यते॥ १३॥

भा० टी०—विधिपूर्वक गौ का दान करें, शिवजी का पूजन करें, ऐसा करने से शीघ्र ही पुत्र की प्राप्ति होती है॥ १३॥

मृतवत्सा लभेत्पुत्रं चिरञ्जीविनमुत्तमम्।
काकवन्ध्या प्रसूयेत सत्यमेव न संशयः॥ १४॥

भा० टी०—मरने वाले पुत्रों की माता बहुत काल तक जीने वाले पुत्रों को प्राप्त करती है और काकवन्ध्या भी पुत्र को जन्म देती है, यह सत्य है, इसमें संशय नहीं है॥१४॥

रोगात्प्रमुच्यते शीघ्रं ज्वरं सर्वं क्षयं व्रजेत्॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे उत्तरानक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नामैकोनपञ्चाशत्तमोऽध्यायः॥ ४१॥

भा० टी०—सब रोगों से शीघ्र ही छुटकारा मिलता है और सब प्रकार के ज्वर नाश को प्राप्त होते हैं।

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहर० उत्तरा० द्वितीयचरण० नामैकोनपंचाशत्तमोध्यायः॥ ४१॥

॥ ५० ॥

अथोत्तरानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

पुरे वै गहने देवि तैलकारोऽवसत्पुरा।
महाधनाढ्यो वै देवि कोटिद्रव्येण संयुतः ॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे देवि! पहले एक गहन नामक पुर में एक तैलकार (तेली) रहता था, वह महाधन से युक्त और करोड़ों द्रव्य से युक्त था ॥ १ ॥

तस्य च स्त्रीद्वयं चासीज्ज्येष्ठायां वै विषं ददौ।
कनिष्ठा च गृहे तस्य गृहिणी धर्मचारिणी ॥ २ ॥

भा० टी०—उसकी दो स्त्रियाँ थीं उसने बड़ी स्त्री को जहर दिया, छोटी स्त्री गृहस्थ धर्म में रत रहकर उसके घर में वास करती रही ॥ २ ॥

एवं बहुगते काले तैलकारस्य वै शिवे!
मरणं तस्य वै जातं यमदूतैर्यमाज्ञया ॥ ३ ॥

भा० टी०—हे शिवे! इस प्रकार तैलकार ने बहुत से दिन व्यतीत किये, फिर उस तैलकार की मृत्यु हुई तब उसे यमराज के दूतों नें यम की आज्ञा पाकर ॥ ३ ॥

महाकटाहे नरके निक्षिप्तश्च सुदारुणे।
तत्र च बहुधा पीडा नानानरकयातना ॥ ४ ॥

भा० टी०—महाकटाह नाम वाले घोर नरक में उसे डाला, वहाँ नाना प्रकार के नरकों की पीड़ाओं को उसने भोगा ॥ ४ ॥

त्रिंशत् सहस्त्रं वै वर्षं तीव्रं दुःखं च जायते।
भुक्तं नरकजं दुःखं योनिं सर्पस्य वै शिवे! ॥ ५ ॥

भा० टी०—उसने तीन हजार वर्षों तक बड़े दुःखों को भोगा फिर हे शिवे! नरकों के दुःखों को भोगकर वह सर्प योनि को प्राप्त हुआ ॥ ५ ॥

गृध्रत्वं कुक्कुटत्वं वै द्वे योनी च तदा गतः।
मानुषस्य च वै योन्यां जातः खलु वरानने! ॥ ६ ॥

भा० टी०—हे वरानने! गृध्र पक्षी की योनि को प्राप्त होकर फिर मुरगे की योनि को प्राप्त हुआ, फिर मनुष्य योनि को प्राप्त हुआ॥ ६॥

धनधान्यसमायुक्तो गुणज्ञो ज्ञानवानपि।
ततो वै तस्य मरणं गङ्गायां देव्यभूत्पुरा॥ ७॥

भा० टी०—हे देवि! धनधान्य से युक्त, गुणी, ज्ञानवान्,-ऐसा वह गंगाजी मैं मृत्यु को प्राप्त हुआ॥ ७॥

तत्पुण्येन महादेवि मानुषो धनवानभूत्।
तैलकारो यतः पूर्वं ज्येष्ठायै च विषं ददौ॥ ८॥

भा० टी०—हे देवि! उस पुण्य के प्रताप से वह धनी होता गया पहले तैलकार होकर उसने अपनी बड़ी स्त्री को जहर दिया था॥ ८॥

तत्पापेनैव भो देवि पुत्रो नैव प्रजायते।
बहुरोगेण संयुक्तो भार्या कष्टयुता सदा॥ ९॥

भा० टी०—हे देवि! उस पाप के प्रभाव से उसका पुत्र नहीं हुआ और बहुत से रोग से युक्त होता गया और उसकी भर्य्या कष्ट से युक्त रहती है॥ ९॥

अथ शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणु देवि सविस्तरम्।
गृहवित्ताष्टमं भागं पुण्यकार्यं करोतु सः॥ १०॥

भा० टी०—हे देवि! अब उसकी शांति को कहता हूँ तुम श्रवण करो अपनें घर के द्रव्य का आठवें भाग का दान करें॥ १०॥

गायत्रीमूलमन्त्रेण लक्षजाप्यं च कारयेत्।
हवनं तद्दशांशेन मार्जनं तर्पणं तथा॥ ११॥

भा० टी०—गायत्री के मूल मंत्र का एक लाख तक जप करायें और उसके दशांश हवन, दशांश मार्जन, दशांश तर्पण करायें॥ ११॥

त्र्यम्बकेति च मन्त्रेण दशायुतजपं पुनः।
दशवर्णां ततो दद्यात् कूष्माण्डं रत्नसंयुतम्॥ १२॥

भा० टी०—त्र्यंबक मंत्र के दश हजार जप करवायें दशवर्ण वाली गौओं का दान करें, रत्नों से संयुक्त किये पेठे का दान करें॥ १२॥

काश्यां वै ग्रहणे दद्यात्पत्न्या सार्द्धं महद्धनम्।
कार्तिके माघवैशाखे प्रातः स्नानं समाचरेत्॥ १३॥

भा० टी०—काशीजी में ग्रहण के समय स्त्री सहित बहुत-सा द्रव्य दान करें तथा कार्तिक, माघ, वैशाख-इन मासों में प्रातः काल स्नान करें॥ १३॥

तिलधेनुं ततो दत्वा सद्यः पापात्प्रमुच्यते।
एवं कृते न संदेहो वंशलाभो भवेद्ध्रुवम्॥ १४॥

भा० टी०—तिल धेनु को दान देने से तत्काल पाप से छूट जाते हैं ऐसा करने से वंश का लाभ होता है, इसमें संशय नहीं है॥ १४॥

कन्यका जननी यापि सापि पुत्रवती भवेत्।
मृतवत्सा लभेत्पुत्रं चिरञ्जीविनमुत्तमम्॥ १५॥

भा० टी०—यदि कन्या को भी जन्म देती हो तो भी पुत्र वाली हो और मरने वाले पुत्रों की भी माता बहुत काल तक जीने वाले पुत्र को प्राप्त करती है॥ १५॥

रोगात्प्रमुच्यते शीघ्रं ज्वरो नैव प्रजायते।

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे उत्तरानक्षत्रस्य तृतीयचरणे प्रायश्चित्तकथनं नाम पञ्चाशत्तमोऽध्यायः॥ ५०॥

भा० टी०—रोग से शीघ्र छूट जाता है, ज्वर की पीड़ा उसको नहीं होती है॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्व० उत्तरानक्षत्रस्य तृतीयचरणे प्रायश्चित्तकथनं नाम पञ्चाशत्तमोऽध्यायः॥ ५०॥

॥ ५१ ॥

उत्तरानक्षत्रस्य चतुर्थचरणे प्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

गयापुर्यां पुरा देवि ब्राह्मणोऽध्यवसत्प्रिये!
वेदकर्मपरिभ्रष्टो मद्यपानरतः सदा ॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे प्रिये! गया नामक पुरी में एक ब्राह्मण वास करता था वह वेद कर्म से भ्रष्ट मदिरा पान में रत रहता था ॥ १ ॥

स्तेयवेश्यासु संसर्गी सप्रतिग्रहवानपि।
वयः सर्वं गतं चेत्थं वृद्धे जाते मृतः स वै ॥ २ ॥

भा० टी०—चोरी करने में प्रवृत्त, वेश्या-संग, प्रतिग्रह के लेने वाला था, इस प्रकार सब आयु व्यतीत कर बुढ़ापे को प्राप्त होकर मर गया ॥ २ ॥

यमदूतो महाघोरे कटाहनरकेऽक्षिपत्।
लक्षत्रयमितं देवि भुक्तं नरकजं फलम् ॥ ३ ॥

भा० टी०—हे देवि! यमराज के दूतों ने आज्ञा पाकर महाघोर नरक में डाला, तीन लाख वर्षों तक नरक के दु:खों को भोगता रहा ॥ ३ ॥

चाणूरस्य कुले जन्म ततः प्रेतोऽगमत्पुरा।
बिडालत्वं ततो यातः फल्गुतीर्थे मृतः स वै ॥ ४ ॥

भा० टी०—फिर चाणूर नामक कुल में जन्म लेकर वहाँ से फिर प्रेत गति को प्राप्त हुआ, फिर बिलाव की योनि को प्राप्त होकर फल्गु नाम वाले तीर्थ पर मृत्यु को प्राप्त हुआ ॥ ४ ॥

पुनर्मानुषयोनित्वं मध्यदेशे सुरेश्वरि!
कन्यकाजननीभार्याशरीरे सततं ज्वरः ॥ ५ ॥

भा० टी०—फिर हे सुरेश्वरि! मध्य देश में मनुष्य योनि को प्राप्त हुआ और उसकी पत्नी कन्या पैदा करने वाली हुई और उसके शरीर में निरंतर ज्वर की पीड़ा रहती है ॥ ५ ॥

चिन्तोद्विग्नः सदा देवि बहुदुःखेन पीडितः।
अस्य शान्तिं शृणुष्वादौ यतः पापक्षयो भवेत्॥ ६॥

भा० टी०—हे देवि! चित्त में उद्वेग, बहुत से दुःख से पीड़ित हुआ, अब इस पाप की शांति को कहता हूँ, जिससे पापक्षय हो, तुम सुनो॥ ६॥

केशवस्याऽर्चनं चादौ साधूनां सेवनं सदा।
ब्राह्मणे दृढभक्तिश्च दाने वै भोजने तथा॥ ७॥

भा० टी०—केशवभगवान् का पूजन, सदा श्रेष्ठ पुरुषों का सेवन, ब्राह्मणों में दृढभक्ति, ब्राह्मणों को दान तथा भोजन कराना॥ ७॥

गां सवत्सां ततो दद्याद्विप्राय प्रतिवत्सरम्।
श्रवणं विष्णुशास्त्रस्य हरिवंशश्रुतिं तथा॥ ८॥

भा० टी०—और बछड़े से युक्त गौ का दान को ब्राह्मण प्रत्येक दिन दें विष्णुपुराण का श्रवण करना तथा हरिवंश का श्रवण करना चाहिए॥ ८॥

एवं कृते न संदेहो बहुपुत्रः प्रजायते।
रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति काकवन्ध्या च पुत्रिणी॥ ९॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे उतरानक्षत्रस्य चतुर्थचरणे प्रायश्चित्तकथनं नामैकपञ्चाशत्तमोऽध्यायः॥ ५१॥

भा० टी०—ऐसा करने से बहुत से पुत्रों को प्राप्त करता है इसमें संशय नहीं और सारे रोग नाश को प्राप्त होते हैं, काकवन्ध्या स्त्री भी पुत्र को प्राप्त करती है॥ ९॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वहर०
नामैकपञ्चाशत्तमोऽध्यायः॥ ५१॥

॥ ५२ ॥

हस्तनक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

स्वर्णकारोऽवसद्देवि पुरे भोजकटे तथा।
स्त्री तस्याऽसीन्महादुष्टा परपुंसि रता सदा॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे देवि! एक स्वर्णकार भोजकट नामक पुर में वास करता था और उसकी स्त्री महादुष्टा सदा पर-पुरुषों से गमन करने वाली थी॥ १ ॥

तद्गृहे वैश्य एकोऽपि ह्यागतो धनसंयुतः।
तयोः प्रीतिरभूद्देवि स्वर्णकारकवैश्ययोः॥ २ ॥

भा० टी०—हे देवि! उस स्वर्णकार के घर में एक वैश्य धन से युक्त होके आके तहां वास करता भया और जिन दोनों की परस्पर प्रीति होती भई॥ २ ॥

व्यापारार्थं गृहीतं तु वैश्यस्वर्णं तदा प्रिये!
पलं शतमितं देवि विक्रयं चाकरोत्किल॥ ३ ॥

भा० टी०—तब हे प्रिये! जिस वैश्य का स्वर्ण सौ पल मात्रा में व्यापार के लिए स्वर्णकार ने लेकर विक्रय किया॥ ३ ॥

स्वर्णकारस्य या पत्नी सुन्दरी कुलटा परा।
प्रीत्या तदाऽभजत्पत्नी वैश्याय धनिकाय वै॥ ४ ॥

भा० टी०—उस स्वर्णकार की पत्नी सुंदरी नाम वाली कुलटा और चतुरा थी वह प्रीति से उस धनयुक्त वैश्य को चाहती थी॥ ४ ॥

एवं बहुगते काले वैश्यस्य मरणे सति।
पश्चान्मृतस्तदा सोऽपि स्वर्णकारो वरानने!॥ ५ ॥

भा० टी०—ऐसे बहुत-सा समय व्यतीत होने पर उस वैश्य की मृत्यु हुई फिर हे वरानने! पश्चात् उस स्वर्णकार की भी मृत्यु हो गयी॥ ५ ॥

उभौ च नरके प्राप्तौ बहुकालं तु दोषतः।
युगैकसंमितं देवि भुक्त्वा नरकयातनाम्॥ ६ ॥

भा० टी०—तब वे वैश्य और स्वर्णकार दोनों नरक को प्राप्त हुए। हे देवि! पाप के प्रभाव से एक युग की अवधि पर्यंत नरक के दुःखों को भोगते रहे॥ ६॥

नरकान्निःसृतौ तौ तु शुनो योनिं तदा गतौ।
पुनर्वृषभयोनिं च नरयोनिस्ततोऽभवत्॥ ७॥

भा० टी०—फिर नरक से निकलकर दोनों श्वान योनि को प्राप्त हुए, पुनः वहाँ बैल की योनि को प्राप्त होकर उनका मनुष्य की योनि में जन्म हुआ॥ ७॥

महद्धनैः समायुक्तो देशे पुण्यतमे शुभे!
पूर्वजन्मप्रसङ्गेन स वैश्यः पुत्रतां गतः॥ ८॥

भा० टी०—पुण्य से युक्त देश में उसे बहुत धन प्राप्त करके सुख भोग रहा है पूर्वजन्म के प्रसंग से वह वैश्य पुत्रभाव को प्राप्त हुआ॥ ८॥

भार्या तस्य तु भो देवि या पुरा व्यभिचारिणी।
पुत्रोत्पत्तिस्तदा तस्यां मरणं शीघ्रमाप्नुयात्॥ ९॥

भा० टी०—हे देवि! उनकी भार्या जो पहले व्यभिचारिणी थी, वह वैश्य उसका पुत्र होकर शीघ्र ही मर गया॥ ९॥

शरीरे महती पीडा सततं चिन्तया युतः।
अस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि यथोक्तं शृणु वल्लभे!। १०॥

भा० टी०—हे वल्लभे! इसके शरीर में महापीड़ा है और निरंतर चिंता से युक्त है, अब यथोक्त उसकी शांति को कहता हूँ, तुम सुनो॥ १०॥

गृहवित्ताष्टमं भागं पुण्यकार्यं च कारयेत्।
जातवेदेति मन्त्रेण पञ्चायुतजपं तथा॥ ११॥

भा० टी०—अपने घर के द्रव्य में से आठवें भाग को पुण्य हेतु दान करें जातवेद मंत्र का आधे लाख तक जप करायें॥ ११॥

दशांशं हवनं कुर्य्यात्तर्पणं मार्जनं तथा।
पापशान्त्यै च भो देवि भोजयेत् ब्राह्मणान् शतम्॥ १२॥

भा० टी०—दशांश हवन, दशांश मार्जन, दशांश तर्पण और पाप की शांति के लिए १०० ब्राह्मणों को भोजन करायें॥ १२॥

गौदानं च विशेषेण शय्यादानं तथा प्रिये!
प्रतिमां कारयेद्देवि सुवर्णस्य तदा प्रिये!॥ १३॥

भ० टी०—हे प्रिये! विशेषता से गौ का दान करें और हे प्रिये! सुवर्ण की प्रतिमा अर्थात् मूर्ति बनायें॥ १३॥

एकादशपलेनैव रचितां वस्त्रभूषिताम्।
पूजयेद्विधिवद्देवि मन्त्रेणानेन वै शिवे!॥ १४॥

भा० टी०—एकादश पल प्रमाण की सुवर्ण की मूर्ति बनवाकर फिर वस्त्र से युक्त और आभूषण युक्त कर उस मूर्ति का विधिवत्पूजन करें, इन मंत्रों से-॥ १४॥

श्रीविष्णो पुण्डरीकाक्ष भुवनानां च पालक!।
चन्दनैः प्रतिमां दिव्यां पूजयामि गृहाण भोः॥ १५॥

ॐ शङ्खाय नमः ॐ चक्राय नमः।
ॐ गदायै नमः ॐ शार्ङ्गाय नमः।
ॐ गरुडाय नमः ॐ नन्दकाय नमः।
ॐ सुनन्दाय नमः ॐ जयाय नमः।
ॐ विजयाय नमः॥

ॐ भो किरीटिन् महादेव शङ्खचक्रगदाधर!
पापं मया कृतं पूर्वं तत्क्षमस्व दयानिधे!॥ १६॥

भा० टी०—ॐ शंखाय नमः १, ॐ चक्राय नमः २, ॐ गदायै नमः ३, ॐ शार्ङ्गाय नमः ४, ॐ गरुडाय नमः ५, ॐ नन्दकाय नमः ६, ॐ सुनन्दाय नमः ७, ॐ जयाय नमः ८ ,ॐ विजयाय नमः ९, ॐ किरीटिन्! हे महादेव! हे शङ्खचक्रगदाधर!॥ मैंने पूर्व में जो पाप किये हैं हे दयानिधे! उनको क्षमा करो॥ १५॥ १६॥

ततः प्रदक्षिणां कुर्य्यात्पत्न्या सह वरानने!
प्रतिमां पूजितां चैव ब्राह्मणाय समर्पयेत्॥ १७॥

भा० टी०—फिर हे वरानने! परिक्रमा करें। प्रतिमा का पूजन करके संकल्प कर ब्राह्मण को दें॥ १७॥

एवं कृते तदा देवि पुत्रो भवति नान्यथा।
रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति नात्र कार्या विचारणा॥ १८॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे हस्तनक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम द्विपञ्चाशत्तमोऽध्यायः॥ ५२॥

भा० टी०—हे देवि! ऐसा करने से पुत्र होता है, यह अन्यथा नही है और सब रोग दूर होते हैं इसमें सन्देह नहीं करना॥ १८॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहर० हस्तनक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम द्विपंचाशत्तमोऽध्यायः॥ ५२॥

॥ ५३ ॥

हस्तनक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

वङ्गदेशे महादेवि केशवं नाम वै पुरम्।
खड्गनामेति विख्यातो नापितो वसति प्रिये!॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे देवि! हे प्रिये! वङ्गदेश में केशव नामक पुर में एक नापित अर्थात् नाई खड्ग नामक वास करता था॥ १ ॥

महाधनसमायुक्तो भाग्यवान्देवपूजकः।
तस्य पत्नी विशालाक्षी लीलानाम्नीति विश्रुता॥ २ ॥

भा० टी०—वह महावैभव से युक्त, भाग्यवान्, देवता का पूजन करने वाला था और उसकी स्त्री विशाल नेत्रों वाली लीला नाम से विख्यात थी॥ २ ॥

तस्यां पुत्रद्वयं जातं नापितस्य तदा प्रिये!
एको द्यूतपरः पुत्रो द्वितीयश्चोरसंमतः॥ ३ ॥

भा० टी०—हे प्रिये! उसके उस स्त्री से नापित के दो पुत्र हुए। एक पुत्र द्यूत अर्थात् जुए में तत्पर और दूसरा चौरी में तत्पर रहता था॥ ३ ॥

परस्त्रीलम्पटो देवि नापितस्य च वै मृतः।
ज्येष्ठपुत्रस्य या भार्या पुंश्चली चातिसुन्दरी॥ ४॥

भा० टी०—और हे देवि! नापित का पुत्र पर स्त्री गमन में भी तत्पर होता भया और जेठे पुत्र की जो भार्या थी वह भी जार कर्म में अति चतुरता से युक्त थी॥ ४॥

नापितं प्राऽभजत्सा तु श्वशुरं खड्गनामकम्।
एवं बहुगते काले तस्य मृत्युरभूत्तदा॥ ५ ॥

भा० टी०—वह भी खड्ग नाम से विख्यात उस अपने ससुर को चाहती थी, ऐसे बहुत-सा काल व्यतीत होने पर उस नाई की मृत्यु हो गयी॥ ५ ॥

तदा पत्नी सती जाता नापितस्य चिताग्निना।
सत्यलोकमभूद्देवि भार्य्यया सहितस्य वै॥ ६ ॥

भा० टी०—हे देवि! तब उसकी पत्नी नापित की चिता में सती हो गई उसके प्रभाव से दोनों को सत्य लोक प्राप्त हुआ॥ ६॥

युगमेकायुतं देवि सत्यलोकेऽवसत्तदा।
ततः पुण्यक्षये जाते पुनर्मानुषतां गतः॥ ७॥

भा० टी०—हे देवि! एक युग पर्यंत सत्यलोक में वास कर पुण्य क्षीण होने पर मनुष्यलोक में उसका जन्म हुआ॥ ७॥

धनधान्यसमायुक्तो ह्यपुत्रश्च सुशोभने!
पञ्च कन्याः प्रजायन्ते व्याधिस्तस्य प्रजायते॥ ८॥

भा० टी०—हे सुशोभने! धनधान्य से युक्त, पुत्र से रहित, पाँच कन्याओं से युक्त और शरीर में व्याधि- इस प्रकार हो गया॥ ८॥

अस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि पूर्वपापक्षयं यतः।
गृहवित्ताष्टमं भागं ब्राह्मणाय समर्पयेत्॥ ९॥

भा० टी०—अब उस पाप की शांति को कहता हूँ, जिससे पहले के पाप नष्ट हों, अपने घर के द्रव्य से अष्टमभाग ब्राह्मण को दान करके दें॥ ९॥

गायत्रीमूलमन्त्रेण लक्षजाप्यं च कारयेत्।
हवनं तद्दशांशेन तर्पणं मार्जनं तथा॥ १०॥

भा० टी०—गायत्री के मूल मंत्र का एक लाख तक जप, दशांश हवन तथा दशांश तर्पण तथा दशांश मार्जन करायें॥ १०॥

वाटिकाकूपमार्गांश्च तडागं चैव कारयेत्।
तुलसीसेवनं नित्यमेकादश्यां व्रतं ततः॥ ११॥

भा० टी०—बगीचा, कुआँ, तलाब मार्गों के मध्य में बनाने से, नित्य तुलसीजी के सेवन से, एकादशी का व्रत करने से पाप दूर होते हैं॥ ११॥

वृन्ताकं मूलिकां चैव न भोक्तव्यं कदाचन।
दशवर्णां ततो दद्याद्धरिवंशश्रुतिं तथा॥ १२॥

भा० टी०—वृंताक तथा मूली का भोजन नहीं करें और दशवर्णों वाली गायों का दान करें और हरिवंश का श्रवण करें॥ १२॥

एवं कृते न संदेहः पुत्रो भवति तस्य वै।
कन्यका नैव जायन्ते वन्ध्यात्वं च प्रशाम्यति॥ १३॥

भा० टी०—ऐसा करने से उसके निश्चय ही पुत्र होता है कन्या की उत्पत्ति नहीं होती है और वन्ध्यापना दूर होता है ॥ १३ ॥

रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति काकवन्ध्या लभेत्सुतम्।

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे हस्तनक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम त्रयःपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५३ ॥

भा० टी०—सब रोग नाश को प्राप्त होते हैं तथा काकवंध्या स्त्री भी पुत्र को प्राप्त होती है ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां भाषाटीकायां० हस्तनक्ष० द्वितीचरण० नाम त्रयःपंचाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५३ ॥

॥ ५४ ॥

हस्तनक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

कौशिक्या दक्षिणे कूले कारुको न्यवसत्प्रिये!
विष्णुभक्तिरतो नित्यं कृषिकर्मसु तत्परः ॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे प्रिये! कौशिकी नदी के दाहिने किनारे पर कारुक अर्थात् चटाई बनाने वाला वास करता था, वह विष्णुभक्त और नित्य कृषि-कर्म में तत्पर रहता था ॥ १ ॥

धनं तु सञ्चितं देवि कार्पण्यात्पुण्यवर्जितम् ।
एकस्मिन्समये रात्रौ क्षेत्रे व्याघ्रेण वै हतः ॥ २ ॥

भा० टी०—हे देवि! कृपणता से धन को संचित किया और पुण्य से रहित हुआ उसे एक समय रात्रि में खेत में व्याघ्र अर्थात् बाघ ने मार दिया ॥ २ ॥

यमदूतैर्महाघोरे रौरवे पातितस्तदा ।
षष्टिवर्षसहस्राणि भुक्त्वा नरकयातनाम् ॥ ३ ॥

भा० टी०—तब उसे यमराज के दूतों ने यम की आज्ञा पाकर रौरव नामक नरक में डाला वहाँ साठ हजार वर्षों तक नरकों में महादुःखों को भोगकर ॥ ३ ॥

ततः कर्मवशाद्देवि बिडालत्वं ततो गतः ।
पुनः कुक्कुटयोनिर्वै शृगालत्वं ततोऽभवत् ॥ ४ ॥

भा० टी०—हे देवि! वहाँ से कर्मों के वश प्राप्त हो बिडाल अर्थात् बिलाव की योनि को प्राप्त हुआ, फिर कुक्कुट की योनि को प्राप्त होकर शृगाल अर्थात् गीदड़ की योनि को प्राप्त हुआ ॥ ४ ॥

पुनर्मानुषयोनिश्च मध्यदेशे वरानने!
पुत्रकन्याविहीनश्च अर्शोरोगेण पीडितः ॥ ५ ॥

भा० टी०—हे वरानने! फिर मनुष्य योनि को प्राप्त होता हुआ। पुत्र और कन्या-संतान से रहित (अर्श) बवासीर रोग से पीड़ित हुआ॥ ५॥

अस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि पूर्वपापविशुद्धये।
सूर्य्यमाराधयेन्नित्यं व्रतं सूर्यस्य वासरे॥ ६॥

भा० टी०—अब इसकी शांति को कहता हूँ, पूर्व पाप की शुद्धि के लिये प्रतिदिन सूर्य्य नारायण का आराधन करें तथा आदित्य के दिन व्रत करें॥ ६॥

गायत्रीमूलमन्त्रेण दशायुतजपं तथा।
प्रयागे नियतः स्नानं माघवैशाखकार्तिके॥ ७॥

भा० टी०—गायत्री के मूल मंत्र का जप दश हजार तक करायें, प्रयाग में नियम पूर्वक माघ, वैशाख, कार्तिक-इन महीनों में स्नान करें॥ ७॥

भूमिदानं ततो देवि वित्तशाठ्यं न कारयेत्।
गोमिथुनं ततो दद्यात्सर्वालंकारभूषितम्॥ ८॥

भा० टी०—हे देवि! फिर भूमि का दान करें और श्रद्धाहीन कर्म न करें और सब गहनों से युक्त दो गायों का दान करें॥ ८॥

कूष्माण्डं नारिकेरं च पञ्चरत्नसमन्वितम्।
गङ्गामध्ये प्रदातव्यं तुलसीपत्रसंयुतम्।
माल्यस्य रचना कार्या स्वर्णैर्दशपलैः शुभा॥ ९॥

भा० टी०—पेठे और नारियल को पंचरत्न से तथा तुलसी पत्र से युक्त कर गंगाजी के मध्य में दान करें और दशपल सुवर्ण की सुंदर माला बनवायें॥ ९॥

विधिपूर्वं विशेषेण विविधं गन्धचर्चितम्।
आचार्याय ततो दद्यात् सर्वपापविशुद्धये॥ १०॥

भा० टी०—फिर विधिपूर्वक गंधादि से पूजन कर आचार्य को सर्वपाप की शुद्धि के लिये संकल्प करके दे दें॥ १०॥

पुत्रश्च जायते देवि कन्यका नैव जायते।
सर्वे रोगाः क्षयं यान्ति वन्ध्यात्वं च प्रणश्यति।
काकवन्ध्या लभेत्पुत्रं मृतवत्सा च पुत्रिणी॥ ११॥

भा० टी०—ऐसा करने से हे देवि! पुत्र संतान होती है कन्या का जन्म नहीं होती और सब रोग नष्ट होते हैं वन्ध्यापन शांत होता है काकवन्ध्या और मृतवत्सा भी पुत्रों को प्राप्त करती है॥ ११॥

अधनो धनमाप्नोति नात्र कार्या विचारणा।

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे हस्तनक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम चतुःपञ्चाशत्तमोऽध्यायः॥५४॥

भा० टी०—निर्धन पुरुष धन को प्राप्त करता है, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं करना॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां० हस्तनक्ष० नाम चतुःपंचाशत्तमोऽध्यायः॥५४॥

॥ ५५ ॥

हस्तनक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

हस्तिनानगरे कश्चित्कायस्थो वसति प्रिये!
कवलेति समाख्यातस्तस्य स्त्री कमला शुभे!॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे प्रिये! हे शुभे!! हस्तिनापुर में एक कायस्थ निवास करता था, कवल नाम से विख्यात था, उसकी स्त्री कमला नाम वाली थी॥ १ ॥

महाधनसमायुक्तो मद्यपानरतः सदा।
वेश्यासुरतसंतृप्तो ब्राह्मणस्य विदूषकः॥ २ ॥

भा० टी०—वह महाधन से युक्त था, मदिरापान में रत, वेश्यासंगी और ब्राह्मण से द्वेष रखने वाला था॥ २ ॥

एकस्मिन् समये देवि कश्चिद्विप्रः समागतः।
गङ्गाजलसमायुक्तं याचितं तेन भोजनम्॥ ३ ॥

भा० टी०—हे देवि! एक समय उसके घर एक ब्राह्मण आया, उसने उससे गंगा-जल-युक्त भोजन की कामना की॥ ३ ॥

तच्छ्रुत्वा देहजक्रोधाद्ब्राह्मणं निरभर्त्सयत्।
ताडितो भर्त्सितस्तेन विषं पीत्वा द्विजो मृतः॥ ४॥

भा० टी०—उसके वचन को सुनकर क्रोध युक्त शरीर से उस ब्राह्मण को झिड़क दिया ताडित हुआ और झिडका हुआ ब्राह्मण विष अर्थात् जहर पीकर मृत्यु को प्राप्त हुआ॥ ४॥

ततो बहुगते काले मरणं तस्य चाभवत्।
तस्य पत्नी सती जाता तद्दिने च वरानने!॥ ५ ॥

भा० टी०—तब हे वरानने! बहुत-सा काल व्यतीत होने पर उस कायस्थ की भी मृत्यु हुई तब उसी दिन उसकी स्त्री भी सती हो गयी॥ ५ ॥

बहून्यब्दसहस्राणि सत्यलोकेऽवसत्तदा।
सौख्यानि बहुधा तत्र प्रभुक्तानि वरानने!॥ ६ ॥

भा० टी०—हे वरानने! बहुत से वर्षों तक उन्होंने सत्यलोक में वास किया वहाँ अनेक प्रकार के सुखों को भोगा॥ ६॥

ततः पुण्यक्षये जाते मानुषत्वं पुनर्गतः।
धनधान्यसमायुक्तो विप्रवंशे प्रजायते॥ ७॥

भा० टी०—फिर वहाँ से पुण्य क्षीण होने पर मनुष्य योनि को प्राप्त हो धनधान्य से युक्त विप्रवंश में पैदा हुआ॥ ७॥

जाताश्च बहवः पुत्रा गौराङ्गप्रियदर्शनाः।
गुणज्ञा रूपसंपन्ना म्रियन्ते प्रीतिवर्द्धनाः॥ ८॥

भा० टी०—और उसके गौर अंग वाले तथा प्रियदर्शन वाले तथा गुणों को जानने वाले, प्रीति के बढ़ाने वाले ऐसे बहुत से पुत्र मरते गये॥ ८॥

द्वौ पुत्रौ शीलसंपन्नौ चोद्वाहेन समायुतौ।
पितुः कर्मवशाद्देवि ब्रह्महत्या पुरा यतः॥ ९॥

भा० टी०—हे देवि! जिन में से दो पुत्र शील सम्पन्न विवाहे गए थे किन्तु पिता के कर्मों के वश क्योंकि पहले पिता ने ब्रह्म-हत्या की थी॥ ९॥

राजरोगसमायुक्तो जायागर्भो विनश्यति।
अस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणु देवि पतिव्रते॥ १०॥

भा० टी०—पिता के पापों से क्षय-रोग से ग्रस्त हो गये और उसकी स्त्री की संतान गर्भ में ही नष्ट होती है, अब हे देवि! हे पतिव्रते!! इसकी शांति को कहता हूँ तुम सुनो॥ १०॥

विष्णोरराटमन्त्रेण लक्षजाप्यं च कारयेत्।
दशांशं हवनं कुर्यात् तर्पणं मार्जनं तथा॥ ११॥

भा० टी०—'विष्णोरराट' इस मंत्र का एक लाख तक जप करायें दशांश हवन करवायें तथा तर्पण-मार्जन करायें॥ ११॥

वित्तस्य च षडंशं च ब्राह्मणे दानमाचरेत्।
वापीकूपतडागानि पथि मध्ये च कारयेत्॥ १२॥

भा० टी०—और अपने घर के द्रव्य में से छठा भाग ब्राह्मण को दान कर दें और बावडी, कूप, तलाब इनको मार्ग के मध्य में बनवायें॥ १२॥

गामेकां कपिलां दद्यात् सवत्सां वस्त्रभूषिताम्।
सुवर्णस्य कृतं विप्रं पलपञ्चदशस्य तु॥ १३॥

भा० टी०—वत्स सहित एक कपिला गौ का दान तथा वस्त्रादि आभूषण से युक्त कर और १५ पल सुवर्ण की ब्राह्मण-मूर्त्ति बनवायें॥ १३॥

दद्याद्विप्राय विदुषे सर्वप्राणिरताय वै।
हरिवंशश्रुतिं देवि विधिपूर्वं च कारयेत्॥ १४॥

भा० टी०—फिर सब प्राणियों में रत वेदपाठी दान कर दें ब्राह्मण को तथा हरिवंश का श्रवण करें॥ १४॥

पुत्रश्च जायते देवि गर्भपातश्च शाम्यति।
काकवन्ध्या लभेत्पुत्रं निश्चयो नात्र संशयः॥ १५॥

भा० टी०—हे देवि! गर्भपात की शांति होती है तथा काकवन्ध्यापन वाली भी निश्चय ही पुत्र को प्राप्त करती है, इसमें संशय नहीं॥ १५॥

पुत्राणां मरणं देवि पूर्वपापप्रसङ्गतः।
प्रायश्चित्तं विना देवि कुतः शान्तिमवाप्नुयात्॥ १६॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे हस्तनक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम पञ्चपञ्चाशत्तमोऽध्यायः॥ ५५॥

भा० टी०—हे देवि! पूर्वपाप के प्रसंग से जिसके पुत्रों का मरण हुआ हो, प्रायश्चित्त के विना कैसे शांति होगी अर्थात् इस पाप की शांति के लिये प्रायश्चित्त कराना आवश्यक है॥ १६॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां० नाम पंचपंचाशत्तमोऽध्यायः॥ ५५॥

॥ ५६ ॥

चित्रानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

गयापुर्यां महादेवि क्षत्री ह्येकोऽवसत्पुरा।
कुकर्मणि रतो नित्यं धनाढ्यः कृपणः शठः ॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं-हे देवि!! गया नाम वाली पुरी में एक क्षत्रिय वास करता था और खोटे कर्म में रत वह धन से युक्त किन्तु अतिकृपण शठ रहता था॥ १ ॥

स्त्री भवेच्चञ्चला तस्य द्वौ पुत्रौ च वरानने!
कन्या चैका विशालाक्षी जाता तस्यां वरानने!॥ २ ॥

भा० टी०—हे वरानने! उसकी स्त्री चंचला और दो उसके पुत्र तथा एक कन्या सुंदर नेत्रों वाली थी॥ २ ॥

उद्वाहिता तदा देवि कन्यका व्यभिचारिणी।
महिषीपुत्रघातं च प्रत्यब्दमकरोत्प्रिये!॥ ३ ॥

भा० टी०—हे प्रिये! विवाह होते ही वह कन्या व्यभिचारिणी हो गई, वह प्रति वर्ष काटडे (महिषी पुत्र) को मारता था॥ ३ ॥

अनेनैव प्रकारेण वयः सर्वं क्षयं गतम्।
ततः सर्पेण वै दष्टस्तस्य मृत्युरभूत्तदा॥ ४॥

भा० टी०—इस प्रकार से उसकी आयु व्यतीत हुई, फिर सर्प के दंशित होने से उसकी मृत्यु हो गयी॥ ४॥

यमदूतैर्महाघोरे निक्षिप्तो नरकार्णवे।
त्रिसप्ततिसहस्राणि वर्षाणि च वरानने!॥ ५॥

भा० टी०—हे वरानने! उसे यमराज के दूतों ने महाघोर नरक में डाला और सत्तर हजार वर्षों तक नरक में दु:खों को भोगकर॥ ५ ॥

भुक्त्वा कष्टं विशालाक्षि गर्भत्वं च ततो गतः।
मध्यदेशे विशालाक्षि नरजन्मा च क्षत्रियः॥ ६॥
पुत्रो न जायते देवि पूर्वपापानुसारतः।
कन्यका रजसा युक्ता विधवा जायते प्रिये!॥ ७॥

भा० टी०—हे विशालाक्षि! फिर मध्य देश में क्षत्रिय जन्म लेकर पुत्र से रहित हुआ, पूर्वपाप के प्रभाव से उसकी कन्या युवा अवस्था में विधवा होती है॥ ६॥ ७॥

महिषीपुत्रघातेन रोगोत्पत्तिश्च जायते।
अस्य पापस्य शान्त्यर्थं पुण्यं शृणु वरानने!॥ ८॥

भा० टी०—हे वरानने! महिषी पुत्र को घात मारने से उसके शरीर में रोग की उत्पत्ति हुई इस पाप की शांति के लिए पुण्य को कहता हूँ, तुम सुनो॥ ८॥

स्ववित्तस्याष्टमं भागं ब्राह्मणाय ददेत वै।
एकां कृष्णां च गां देवि स्वर्णशृङ्गीं सवत्सकाम्॥ ९॥

भा० टी०—अपने घर के द्रव्य में से आठवें भाग को ब्राह्मण को दान दें और एक काली गौ स्वर्ण के शृंग बछड़े से तथा वस्त्रों से युक्त करके दान दें॥ ९॥

सर्वलक्षणसंपन्नां वस्त्रमुक्तादिभूषिताम्।
ब्राह्मणाय तदा दद्याच्छय्यादानं विशेषतः॥ १०॥

भा० टी०—सब लक्षणों से युक्त तथा भूषणादि से युक्त ब्राह्मण को दान दें उसी प्रकार सब सामग्री युक्त विशेषकर शय्या का दान दें॥ १०॥

गायत्रीजातवेदाभ्यां अयुतं जपमाचरेत्।
हवनं तद्दशांशेन तर्पणं मार्जनं ततः॥ ११॥

भा० टी०—'गायत्री' 'जातवेद'-इन मंत्रों से दश हजार जप करायें और उसके दशांश हवन तथा तर्पण तथा मार्जन करायें॥ ११॥

पथि मध्ये वरारोहे पञ्चवृक्षस्य वाटिकाम्।
कारयेद्विभवेनैव विष्णुवृक्षादिभिर्वृताम्॥ १२॥

भा० टी०—हे वरारोहे! मार्ग के मध्य में पांच वृक्षों की वाटिका लगायें ऐश्वर्य्ययुक्त होकर पीपलादि वृक्षों को लगायें॥ १२॥

भोजयेद्देवि षट्षष्टि ब्राह्मणान्वेदपारगान्।
निष्कत्रयसुवर्णस्य प्रतिमां वस्त्रभूषिताम्॥ १३॥

भा० टी०—हे देवि! वेदपाठी ६६ ब्राह्मणों को भोजन करायें और तीन निष्क प्रमाण के तीन तोले सुवर्ण की मूर्ति बना आभूषण वस्त्र से युक्त करके॥ १३॥

ब्राह्मणाय ततो दद्यात् विष्णुभक्ताय सुन्दरि!
एवं कृत्वा विशालाक्षि पूर्वजन्मकृतं च यत्॥ १४॥

भा० टी०—हे विशालाक्षि! विष्णु के भक्त ब्राह्मण को दान दें हे सुंदरि! ऐसा करने से पूर्व जन्म में जो पाप किये हैं॥ १४॥

पापं प्रणाशयेद्देवि नात्र कार्या विचारणा।
काकवन्ध्या च या नारी लभते पुत्रमुत्तमम्॥ १५॥

भा० टी०—हे देवि! वे नष्ट हो जाते हैं, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है और काकवन्ध्या स्त्री भी उत्तम पुत्र को पैदा करती है॥ १५॥

पुत्रश्च जायते देवि सुरूपेण समन्वितः।
रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति नात्र कार्या विचारणा॥ १६॥

भा० टी०—हे देवि! पुत्र भी रूपवान् उत्पन्न होता है और सब रोग नाश को प्राप्त होते हैं इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है॥ १६॥

मृतवत्सा लभेत्पुत्रं चिरञ्जीविनमुत्तमम्।

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे चित्रानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम षट्पञ्चाशत्तमोऽध्यायः॥ ५६॥

भा० टी०—मरने वाले पुत्रों वाली स्त्री भी बहुत काल तक जीने वाले पुत्रों को पैदा करती है॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे चित्रानक्ष० नाम षट्पञ्चाशत्तमोऽध्यायः॥ ५६॥

॥ ५७ ॥

चित्रानक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

पुण्येन जायते पुत्रः पुण्येन लभते श्रियम्।
पुण्येन रोगनाशः स्यात् सर्वशास्त्रे च संमतः ॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—पुण्य से पुत्र होता है, पुण्य से ही लक्ष्मी होती है, पुण्य से ही रोग का नाश होता है—यह सब शास्त्रों का मत है ॥ १ ॥

मध्यदेशे वरारोहे ब्राह्मणो न्यवसत्प्रिये!।
सरय्वा दक्षिणे कूले कालिकापुरशोभने ॥ २ ॥

भा० टी०—हे वरारोहे! हे प्रिये!! मध्यदेश में सरयू के दाहिने किनारे पर कालिका नामक सुंदरपुर में एक ब्राह्मण रहता था ॥ २ ॥

तत्र कालीपुरे शुभ्रे द्विजोऽतिष्ठन्महाशनः।
स्तेनवेश्यापरस्त्रीणां रतिसंसर्गतत्परः ॥ ३ ॥

भा० टी०—वहाँ शुभ कालीपुर में निवास करता हुआ वह ब्राह्मण चोरी, वेश्या, पर-स्त्री संग, इन में तत्पर रहता था ॥ ३ ॥

मद्यपानं विना देवि निद्रा तस्य न जायते।
तस्य स्त्री सुभवा नाम्नी पतिसेवापरायणा ॥ ४ ॥

भा० टी०—हे देवि! मदिरा पान किये विना उसको नींद नहीं आती थी उसकी स्त्री सुभवा नाम वाली पति की सेवा में परायण थी ॥ ४ ॥

प्रत्यहं पूजयेद्देवि स्वपतिं पापकारिणम्।
ततो बहुगते काले मरणं व्याघ्रतोऽभवत् ॥ ५ ॥

भा० टी०—हे देवि! वह अपने पापकारी पति का पूजन करती थी, तब बहुत काल व्यतीत होने पर बाघ के खाने से उसकी मृत्यु हो गयी ॥ ५ ॥

तस्य पत्नी सती जाता चिताग्नौ च तदाहिता।
सत्यलोके ततो देवि कल्पमेकं बुभोज सा ॥ ६ ॥

भा० टी०—हे देवि! तब उसकी पत्नि चिता की अग्नि में सती हो गई तब उसके प्रभाव से एक कल्प पर्य्यंत सत्यलोक में उसने सुख भोगा॥ ६॥

पत्या सह वरारोहे ततः पुण्यक्षये सति।
मृत्युलोके भवेज्जन्म कुले महति पूजिते॥ ७॥

भा० टी०—हे वरारोहे! पति के साथ सती हुई वह स्त्री फिर वहाँ से पुण्य क्षीण होने पर बड़ों से पूजित महान् कुल में पैदा हुई॥ ७॥

धनधान्यसमायुक्तो बाल्यतो रोगवानपि।
पुण्यसंबन्धयोगेन पुण्यस्त्री या च संस्थिता॥ ८॥

भा० टी०—वह ब्राह्मण धनधान्य से युक्त उसके बाल्याऽवस्था से ही शरीर में रोग है, पवित्र पुण्य के योग से जिस पुण्य स्त्री के साथ पूर्वजन्म में रहा था॥ ८॥

पुनर्विवाहिता सैव यायात् पुत्रविवर्जिता।
अस्य पापस्य शान्त्यर्थं पुण्यं शृणु वरानने!॥ ९॥

भा० टी०—हे देवि! हे वरानने! वह स्त्री पुनर्विवाही गयी है। ऐसे वह पुत्रहीन है इस पाप की शांति के लिये शांति को कहता हूँ, तुम सुनो॥ ९॥

गृहवित्तषडंशस्य पुण्यकार्यं च कारयेत्।
गायत्रीमूलमन्त्रेण त्रिलक्षं जपमाचरेत्॥ १०॥

भा० टी०—अपने घर के द्रव्य के छठे भाग का पुण्य करें और गायत्री के मूल मंत्र का तीन लाख तक जप करवायें॥ १०॥

हवनं तद्दशांशेन तर्पणं मार्जनं तथा।
दशवर्णास्ततो दानं भूमिदानं विशेषतः॥ ११॥

भा० टी०—दशांश हवन तथा तर्पण और मार्जन करायें, दश वर्ण वाली गायों का दान करें विशेषकर भूमि का दान करें॥ ११॥

गोविन्देति ततो नाम जपेन्नित्यं वरानने!
प्रातः स्नानं सदा कुर्यान्माघवैशाखकार्तिके॥ १२॥

भा० टी०—हे वरानने! फिर हे गोविंद-ऐसे नाम का स्मरण करें और माघ, वैशाख, कार्त्तिक-इन में प्रातः काल स्नान करें॥ १२॥

कृष्णस्य शतकं देवि भूर्जपत्रेण संयुतम्।
लेखयित्वा विधानेन स्थापयेत्स्वगृहं प्रति॥ १३॥

भा० टी०—हे देवि! कृष्ण महाराज के सौ नामों को चारों तरफ से भोज पत्र पर लिखवाकर अपने घर में स्थापित करें॥ १३॥

हरिवंशश्रुतिं कुर्यादेकादश्यां व्रतं चरेत्।
एवं कृत्वा वरारोहे सर्वरोगक्षयो भवेत्॥ १४॥

भा० टी०—हे वरारोहे! हरिवंश का श्रवण करें एकादशीतिथी का व्रत करने से सब रोग नष्ट होते हैं॥ १४॥

पुत्रश्च जायते देवि नात्र कार्या विचारणा।

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे चित्रानक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम सप्तपञ्चाशत्तमोऽध्यायः॥ ५७॥

भा० टी०—हे देवि! पुत्र उत्पन्न होता है। इसमें कुछ भी सन्देह नहीं करना॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां० नाम सप्तपञ्चाशत्तमोऽध्यायः॥ ५७॥

॥ ५८ ॥

चित्रानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

अयोध्यापुरतो देवि योजनत्रयदक्षिणे।
सुधर्मपुरविख्याते न्यवसन् बहवो जनाः ॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे देवि! अयोध्यापुरी से तीन योजन दूर दक्षिणदिशा में सुधर्म नामक वाला पुर (एक नगर) विख्यात है, वहाँ बहुत से जन निवास करते हैं ॥१ ॥

रतिदासेति विख्यातो बभूव वस्तुविक्रयी।
दलाक्षीति समाख्याता तस्य पत्नी च स्वैरिणी ॥ २ ॥

भा० टी०—वहाँ एक रतिदास नामक वस्तु बेचने वाला (वैश्य) रहता था और दलाक्षी नाम वाली इच्छापूर्वक विचरने वाली उसकी स्त्री थी ॥ २ ॥

पतिं न पूजयेद्देवि रूपगर्ववशा तथा।
महिष्यो बहुला आसन् गावो विक्रयकारणात् ॥ ३ ॥

भा० टी०—हे देवि! वह रूप के गर्व में रहकर पति का पूजन नहीं करती थी उस वैश्य के पास क्रय-विक्रय के व्यापार के कारण महिषी और गौ बहुत थीं ॥ ३ ॥

महिषीपुत्रघातं च प्रत्यहं खलु जायते।
छागस्य विक्रयो नित्यं छागानां वध एव च ॥ ४ ॥

भा० टी०—वह महिषी के पुत्र की हत्या नित्य प्रति किया करता था और नित्य ही छाग अर्थात् बकरियों को बेचा करता था इससे बकरियों का भी वध किया करता ॥४ ॥

गोप एको महाप्राज्ञो धनार्थी स्वर्णसंयुतः।
तत्र जातो महादेवि वैश्यमित्रं हि बाल्यतः ॥ ५ ॥

भा० टी०—वहाँ हे देवि! एक ग्वाला महाबुद्धिमान् धन की इच्छा वाला स्वर्ण से युक्त होकर आया बाल्यावस्था से ही वह वैश्य का मित्र था ॥ ५ ॥

तस्य गेहे स्थितो देवि धनधान्यसमन्वितः।
वैश्यपत्नी तदा देवि गोपं प्रति तदाऽभजत्॥ ६॥

भा० टी०—हे देवि! उसके घर में वह ग्वाला रहने लगा वह धनधान्य से युक्त था तब वैश्य की पत्नी उस ग्वाले के साथ रमण करती थी॥ ६॥

एवं बहुगते काले तस्य गोपस्य वै मृतिः।
वैश्यगेहे महादेवि धनं गोपस्य वै खलुः॥ ७॥

भा० टी०—हे देवि! ऐसे ही बहुत काल बीतने पर उस गोप की मृत्यु हो गयी और उसका द्रव्य सम्पत्ति वैश्य के घर में रही॥ ७॥

वैश्येनैव तु तत्सर्वं धनं तस्य व्ययं कृतम्।
ततः सर्वं वयो यातं वैश्यमृत्युरभूत्तदा॥ ८॥

भा० टी०—और उस ग्वाले के सारे द्रव्य को वैश्य ने ही भोगा, फिर समय व्यतीत होने पर वैश्य की मृत्यु हो गयी॥ ८॥

गङ्गायां च विशालाक्षि पत्नी तस्य तथा मृता।
वैश्यस्याऽभूत्तथा स्वर्गो वर्षषष्टिसहस्त्रकम्॥ ९॥

भा० टी०—हे विशाल नेत्रों वाली! उसकी वह स्त्री भी मृत्यु को प्राप्त हुई तब वैश्य को साठ हजार वर्षों का स्वर्गवास हुआ॥ ९॥

वैश्यपत्नी ततो देवि कर्दमे नरके गता।
षष्टिवर्षसहस्त्राणि भुक्त्वा नरकयातनाम्॥ १०॥

भा० टी०—हे देवि! वैश्य की स्त्री को साठ हजार वर्षों तक कर्दम नाम वाले नरक का वास हुआ और नरक का भोग पूरा होने पर॥ १०॥

नरकान्निसृता सा तु सर्पयोनिं तथा गता।
सर्पयोनिं ततो भुक्त्वा गङ्गायां मरणात् खलु॥ ११॥

भा० टी०—नरक से निकलकर वह स्त्री सर्प की योनि को प्राप्त हुई फिर सर्प-योनि को भोग कर गंगाजी पर मृत्यु को प्राप्त हुई॥ ११॥

शूद्रं प्रति पुरा स्नेहस्ततः शूद्रस्य चाऽभवत्।
वैश्यः स्वर्गफलं भुक्त्वा मानुषत्वं ततोऽगमत्॥ १२॥

भा० टी०—शूद्र से पूर्वजन्म में वह वैश्य स्नेह रखा करता था उसके घर में आया तब भी स्नेह ही रखा इस लिए वह वैश्य स्वर्ग के फल को भोगकर मनुष्य योनि में शूद्र जाति को प्राप्त हुआ॥ १२॥

धनधान्यसमायुक्तो रूपवानतिथिर्हितः।
बहुधनी गुणी ज्ञानी पुत्रकन्याविवर्जितः॥ १३॥

भा० टी०—धनधान्य से युक्त, रूप वाला आभ्यागत का पूजन करने वाला, बहुत धनी, गुणवान्, ज्ञान से युक्त, पुत्र और कन्या से रहित है॥ १३॥

वैश्यस्य शूद्रजातित्वं पूर्वस्नेहफलं यतः।
पत्नी सा च समायाता पूर्वसंबन्धकारणात्॥ १४॥

भा० टी०—पूर्वजन्म में शूद्र से स्नेह करने कारण तथा शूद्रता में लीन होने से और पहले ही अनैतिक संबंध के कारण उसकी पत्नी भी अपने कर्मों से शूद्र जाति को प्राप्त हुई॥ १४॥

यतो द्रव्यं समायुक्तं सर्वं शूद्रस्य पापिना।
ततश्चैव समुत्पन्नाः कन्या बह्व्यः सुरेश्वरि!॥ १५॥

भा० टी०—हे सुरेश्वरि! उसने शूद्र का द्रव्य पहले शूद्र ही होकर भोगा, उस पाप से उसके बहुत-सी कन्याएँ ही हुईं॥ १५॥

महिषीपुत्रघातित्वाद्वायुरोगादयस्तथा।
स्वपतेर्वञ्चनं कृत्वा परपुंसि रता यतः॥ १६॥

भा० टी०—और महिषी के पुत्र मारने से वायु का रोग शरीर में हुआ और उसकी स्त्री पति को छोड़कर परपुरुष से रमण करती थी॥ १६॥

तस्मात्पुत्रस्य मरणं गर्भपातः पुनः पुनः।
अस्य शान्तिमहं वक्ष्ये शृणु देवि वरेऽनघे!। १७॥

भा० टी०—हे देवि! हे वरे! हेऽनघे! इससे उसका बार-बार गर्भपात हुआ, अब इसकी शांति को कहता हूँ, तुम सुनो॥ १७॥

गृहवित्तषडंशेषु पुण्यं कार्य्यं च यत्नतः।
वापीकूपतडागादि पथि मध्ये च कारयेत्॥ १८॥

भा० टी०—अपने घर के धन में से छठे भाग द्रव्य को यत्न से पुण्य हेतु दान दें और मार्ग के मध्य में बावड़ी, कूप, तालाब इत्यादि बनवायें॥ १८॥

शिवस्य पूजनं चैव शिवभक्तिमहर्निशम्।
नमः शिवाय मन्त्रं च पञ्चलक्षं च जापयेत्॥ १९॥

भा० टी०—शिवजी का पूजन और शिव की रात-दिन भक्ति करें। ॐ नमः शिवाय-इस मंत्र का पांच लाख जप करायें॥ १९॥

पार्थिवाँल्लक्षसंख्याकान् पूजयेच्च यथाविधि।
ॐ नमः शिवाय मन्त्रस्तु सर्वपापप्रणाशनः॥ २०॥

भा० टी०—यथाविधि एक लाख संख्या वाले पार्थिवों का पूजन करायें ॐ नमः शिवाय यह मंत्र सब पापों का नाश करने वाला है॥ २०॥

देहान्ते मुक्तिदश्चैव मर्त्यलोके च कामदः।
हवनं कारयद्देवि कुण्डे चैव तु शोभने॥ २१॥

भा० टी०—और हे देवि! देह के अंत होने पर मुक्ति के देने वाला है और मृत्युलोक में मनोरथ सिद्ध करता है, इसका हवन सुंदरकुंड में करना चाहिए॥ २१॥

चतुरस्त्रे विशालाक्षि तिलधान्यादितण्डुलैः।
ताम्रवर्णां ततो देवि गां दद्याद्विदुषे प्रिये!॥ २२॥

भा० टी०—हे विशालाक्षि! हे प्रिये! चौकोर कुंड में तिल, जौ तंडुल आदि से होम करें और तांबे के समान वर्ण वाली गौ को ब्राह्मण को दान करें॥ २२॥

निष्कमात्रं ततः स्वर्णं ब्राह्मणाय प्रदापयेत्।
एवं कृते न संदेहो व्याधिनाशो भवेद्ध्रुवम्॥ २३॥

भा० टी०—और निष्क (१ तोला) प्रमाण के सुवर्ण को ब्राह्मण को दान करें ऐसा करने से निश्चय ही व्याधि का नाश होता है॥ २३॥

पुत्रश्च जायते देवि पुनर्गर्भो न नश्यति।
काकबन्ध्या पुनः पुत्रं प्रसूयेत न संशयः॥ २४॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे चित्रानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नामाष्टपञ्चाशत्तमोऽध्यायः॥ ५८॥

भा० टी०—हे देवि! पुत्र की प्राप्ति होती है, फिर गर्भ नष्ट नहीं होता और काकवन्ध्या स्त्री भी फिर पुत्र को उत्पन्न करती है इसमें संशय नहीं॥ २४॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वती० चित्रानक्षत्रस्य तृतीचरण० अष्टपंचाशत्तमोऽध्यायः॥ ५८॥

॥ ५९ ॥

चित्रानक्षस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

देशे पुण्यतमे देवि प्रतिष्ठानपुरे तथा।
ब्राह्मणो वेदविभ्रष्टस्तत्र वासमकारयत्॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे देवि! पुण्य से युक्त देश में प्रतिष्ठान नाम वाले पुर में एक वेद से भ्रष्ट ब्राह्मण निवास करता था॥ १ ॥

सुरामांसस्य वै भोक्ता नित्यं मत्स्यामिषस्य च।
पापकार्ये विशालाक्षि व्ययकर्ता दिने दिने॥ २ ॥

भा० टी०—हे विशालाक्षि! प्रतिदिन वह मदिरापान तथा मांस आदि का भक्षण तथा मत्स्य आदि का भक्षण और इन का विक्रय किया करता था॥ २ ॥

तस्य स्त्री परमानाम्नी भ्रष्टा चातीवसुन्दरी।
पुरपुंसि रता नित्यं निर्भया पतिवञ्चिका॥ ३ ॥

भा० टी०—और उसकी स्त्री अति सुंदरी परमा नाम से प्रसिद्ध थी वह भी भ्रष्टा और निर्भय होकर पति का वंचन (ठगना) कर पर पुरुषों से रमण किया करती थी ॥३ ॥

एवं सर्वं वयो यातं तयोर्मृत्युरभूत्किल।
पुण्यक्षेत्रे च गङ्गायां देवगन्धर्वपूजिते॥ ४॥

भा० टी०—इस प्रकार सारी अवस्था व्यतीत होने पर उनकी मृत्यु हुई वहाँ पवित्र क्षेत्र देव-गंधर्वों से पूजित गंगाजी में उनकी मृत्यु हुई॥ ४॥

तस्य विप्रस्य वै स्वर्गः कल्पमेकं वरानने!
भुक्ता च विविधं सौख्यं देवकन्याभिरावृतः॥ ५॥

ततः पुण्यक्षये जाते मृत्युलोके सुरेश्वरि!॥ ६॥

भा० टी०—हे वरानने! उस विप्र को एक कल्प तक स्वर्ग का वास हुआ वहाँ

अनेक भोगों को भोगता हुआ देव-कन्याओं से युक्त रहा। तब हे सुरेश्वरि! वहाँ से पुण्य नष्ट होने पर॥ ५॥ ६॥

जन्माऽभवत्तस्य नरस्य शुद्धे
महत्कुले पुण्ययुते धनाढ्ये।
कान्ता तु सैव प्रबभूव या पुरा
स्थिता तदीया व्यभिचारचित्ता॥ ७॥

भा० टी०—उत्तम कुल में धन से युक्त मनुष्य योनि में उसका जन्म हुआ और पूर्वजन्म में जो व्याभिचारिणी उसकी स्त्री थी वही कांता फिर पत्नी हो गयी॥ ७॥

मद्यपानादिकं पापं पूर्वजन्मनि यत्कृतम्।
तत्फलेन महादेवि व्याधिग्रस्तस्ततोऽभवत्॥ ८॥

भा० टी०—हे देवि! पूर्वजन्म में जो उसने मदिरापानादि किये थे उस के फल से उसका व्याधि से ग्रस्त शरीर हुआ॥ ८॥

अथ शान्तिं प्रवक्ष्यामि यतः पापक्षयो भवेत्।
गायत्रीमूलमन्त्रेण लक्षजाप्यं वरानने!॥ ९॥

भा० टी०—अब हे वरानने! इसकी शांति को कहता हूँ, जिनसे पापों का क्षय हो, इसके लिए गायत्री के मूल मंत्र का एक लाख तक जप करायें॥ ९॥

हवनं तद्दशांशेन तर्पणं मार्जनं तथा।
देवस्याराधनं नित्यं सूर्य्यस्य व्रतमाचरेत्॥ १०॥

भा० टी०—दशांश हवन, दशांश तर्पण, दशांश मार्जन तथा नित्य देवता का आराधन और सूर्य का व्रत करें॥ १०॥

प्रयागे नियतः स्नानं माघे मासि यथाविधि।
पत्न्या सह विशालाक्षि ततः पापं प्रणश्यति॥ ११॥

भा० टी०—हे विशालाक्षि! प्रयाग में नियम पूर्वक स्नान यथाविधि माघ में स्त्री सहित करने से सम्पूर्ण पाप नष्ट होते हैं॥ ११॥

षडंशं च ततो देवि विप्रेभ्यो दानमाचरेत्।
ततो वर्षेण महतीं गां च दद्यात्पयस्विनीम्॥ १२॥

भा० टी०—हे देवि! घर के द्रव्य में से छठे भाग को ब्राह्मण को दान करें और दूधवाली उत्तम गौ का भी दान करें॥ १२॥

भूमिं वृत्तिकरीं दद्यात् पुत्रपौत्रानुजीविनीम्।
एवं कृते न सन्देहो वंशो भवति नान्यथा॥ १३॥

भा० टी०—जोतने वाली भूमि का दान करें, जिसमें पुत्रपौत्रादि की आजीविका हो ऐसा करने से वंश-वृद्धि होती है, इसमें संदेह नहीं यह अन्यथा नहीं है॥ १३॥

रोगार्तो मुच्यते रोगात्काकवन्ध्या सुतं लभेत्।
गर्भभ्रष्टा लभेत्पुत्रं चिरञ्जीविनमुत्तमम्॥ १४॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे चित्रानक्षस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं नामैकोनषष्टितमोऽध्यायः॥ ५९॥

भा० टी०—रोगी रोग से छूट जाता है, काकवन्ध्या पुत्र को प्राप्त करती है, गर्भ से भ्रष्टा भी बहुत काल तक जीने वाले पुत्र को प्राप्त करती है॥ १४॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहर० चित्रानक्षत्र० प्रायश्चित्तकथनं नाम एकोनषष्टितमोऽध्यायः॥ ५९॥

॥ ६० ॥

स्वातिनक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

कान्यकुब्जे महादेवि राजाप्येकोऽवसत्पुरा।
राजधर्मरतः शान्तः प्रजापालनतत्परः ॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे देवि! कान्यकुब्ज देश में एक राजा रहता था, वह धर्म में रत, शान्तिपूर्वक प्रजा पालन में तत्पर रहता था ॥ १ ॥

रुद्रधर्मेति विख्यातो भार्या तस्य प्रभावती।
एकस्मिन् दिवसे देवि ब्राह्मणो भयपीडितः ॥ २ ॥

भा० टी०—हे देवि! रुद्रधर्म नामक उस राजा की भार्या प्रभावती नाम वाली थी, एक दिन भय से पीड़ित एक ब्राह्मण ॥ २ ॥

शरणं श्रावयामास शरणार्थी द्विजोत्तमः।
तस्य भार्या महादेवि सुरूपाप्यतिसुन्दरी ॥ ३ ॥

भा० टी०—हे देवि! राजा से उस ब्राह्मण ने शरण की याचना की, वह द्विजोत्तम शरणार्थी था और उसकी भार्या रूपवती, अति सुंदरी थी ॥ ३ ॥

राजपुत्रेण तस्यां तु गमनं मुग्धतः कृतम्।
शरणं दत्तवान् राजा पुत्रस्नेहेन यन्त्रितः ॥ ४ ॥

भा० टी०—उसकी सुन्दर पत्नी पर राजपुत्र मोहित हो गया, उसके संग राजपुत्र ने रमण किया और वह राजा पुत्र-स्नेह से यंत्रित होकर उसे शरण देता रहा ॥ ४ ॥

एवं बहुगते काले नृपस्य मरणं यदा।
तदा यमाज्ञया दूतैः क्षिप्तो नरककर्दमे ॥ ५ ॥

भा० टी०—इस प्रकार बहुत-सा काल व्यतीत होने पर राजा का मरण हुआ तब यमराज के दूतों ने उसको कर्दमसंज्ञक नरक में डाला ॥ ५ ॥

षष्टिवर्षसहस्राणि नरके परिपच्यते।
नरकान्निस्सृतो देवि शूकरत्वं ततोऽलभत् ॥ ६ ॥

भा० टी०—साठ हजार वर्षों तक नरक में दु:खों को भोगकर फिर नरक से निकलकर वह शूकर योनि को प्राप्त हुआ॥ ६॥

पुनः शृगालयोनिं च मानुषत्वं ततोऽगमत्।
धनधान्यसमायुक्तो बहुशो गुणवानपि॥ ७॥

भा० टी०—फिर गीदड़ योनि को प्राप्त होकर मनुष्य योनि को प्राप्त हो धनधान्य से युक्त हुआ, वह बहुत जानने वाला गुणों से युक्त इस प्रकार का हुआ॥ ७॥

पुनर्विवाहिता जाता पत्नी तस्य प्रभावती।
पूर्वकर्मफलाद्देवि तस्य पुत्रो न जायते॥ ८॥

भा० टी०—हे देवि! पूर्वजन्म के प्रसंग से पुनः विवाही हुई प्रभावती (पूर्व रानी) जिसकी पत्नी है, पुत्र की प्राप्ति उसको नहीं हुई॥ ८॥

शरीरं सततं देवि ज्वरेणैव प्रपीडितम्।
वातपित्तकफानां च संभवः स्याद्वयोगते॥ ९॥

भा० टी०—हे देवि! उसका शरीर निरंतर ज्वर से पीड़ित रहता है और अवस्था व्यतीत होने पर वातपित्तकफादि रोगों से वह पीड़ित होता रहता है॥ ९॥

अस्य दानं शृणु त्वं हि यथा पापक्षयस्तथा।
गृहवित्ताष्टमं भागं पुण्यकार्यं च कारयेत्॥ १०॥

भा० टी०—जिससे पाप नष्ट हों इस प्रकार इसके दान को कहता हूँ, तुम सुनो अपने घर के द्रव्य में से आठवें भाग को पुण्य हेतु दान कर दें॥ १०॥

वापीकूपतडागानां जीर्णोद्धारं यदा भवेत्।
तदा पापं क्षयं याति पूर्वजन्मसमुद्भवम्॥ ११॥

भा० टी०—जीर्ण-शीर्ण पुराने बावड़ी, कूप, तालाब इत्यादि का जीर्णोद्धार करें, तब पहले जन्म में किये हुए पाप नाश को प्राप्त होते हैं॥ ११॥

विष्णोरराटमन्त्रेण जपं कुर्याद्विचक्षणः।
दद्याद्गां वेदविदुषे सवत्सां चैव शोभने!॥ १२॥

भा० टी०—हे शोभने! बुद्धिमान् पुरुष विष्णोरराट-इस मंत्र का जप करवायें तथा वेद पाठी ब्राह्मण को बछड़ा युक्त गौ का दान दें॥ १२॥

वस्त्ररत्नसमायुक्तां घण्टाचामरभूषिताम्।
ग्रहणेर्कहिमांश्वोश्च काश्यां स्नानं समाचरेत्॥ १३॥

भा० टी०—और उस गौ को वस्त्र से तथा घंटाचमर आदि भूषणों से युक्त कर चंद्रमा सूर्य के ग्रहण के दिन दान करें और काशीजी में स्नान करें॥ १३॥

निष्कत्रयसुवर्णस्य कमलं कारयेत्ततः।
ब्राह्मणाय वरारोहे प्रदद्यात्कमलं शुभम्॥ १४॥

भा० टी०—हे वरारोहे! तीन निष्क प्रमाण (३ तोला) सुवर्ण का एक कमल बनवाकर संकल्प कर ब्राह्मण को दान दें॥ १४॥

एंव कृते वरारोहे सर्वपापक्षयो भवेत्।
अपि वन्ध्या लभेत्पुत्रं चिरञ्जीविनमुत्तमम्॥ १५॥

भा० टी०—हे वरारोहे! ऐसा करने से सर्वपाप नाश को प्राप्त होते हैं और वंध्या भी बहुत काल तक जीने वाले पुत्र को प्राप्त करती है॥ १५॥

सर्वे रोगाः क्षयं यान्ति नात्र कार्या विचारणा।

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे स्वातिनक्षत्रस्य प्रथमचरणे प्रायश्चित्तकथनं नाम षष्टितमोऽध्यायः॥ ६०॥

भा० टी०—और सब रोग दूर होते हैं, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं करना॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहर० स्वातिनक्षत्रस्य प्रथमचरण० नामषष्टितमोऽध्यायः॥ ६०॥

॥ ६१ ॥

स्वातिनक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

गङ्गाया दक्षिणे कूले विन्ध्ये च नगरोत्तमे।
द्विजोऽप्येकोऽवसद्देवि ब्रह्मकर्मविवर्जितः॥ १॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे देवि गङ्गाजी के दक्षिण किनारे पर विंध्य नाम वाला उत्तम एक नगर था, वहाँ ब्रह्म-कर्म से रहित एक ब्राह्मण रहता था॥ १॥

अनाचाररतो नित्यं परस्त्रीलम्पटः शठः।
व्यापारं कुरुते नित्यं गोहिरण्यगजादिकम्॥ २॥

भा० टी०—आचार से रहित नित्य परस्त्री लंपट तथा महाशठ—ऐसा वह गौ, हिरण्य, गजादि का व्यापार किया करता था॥ २॥

बहुद्रव्यमभूत्तस्य त्रिंशत्कोटिप्रमाणकम्।
द्रव्यस्य संग्रहं नित्यं न च किंचिद्ददाति सः॥ ३॥

भा० टी०—तीन करोड़ की मात्राा में उसने बहुत सा द्रव्य का संग्रह किया और मोह से कुछ भी दान नहीं किया॥ ३॥

स्वाभार्यां च परित्यज्य परभार्यारतो द्विजः।
धनेश्वर इति ख्यातं तस्य नाम पुराभवत्॥ ४॥

भा० टी०—तथा अपनी भार्या को त्यागकर पर भार्य्या से रत रहता था और धनेश्वर उसका नाम हो गया॥ ४॥

ततो बहुगते काले तस्य मृत्युरभूत्किल।
यमदूतेन वै बद्ध्वा निक्षिप्तो नरकार्णवे॥ ५॥

भा० टी०—ऐसे बहुता सा काल व्यतीत होने पर उसकी मृत्यु हुई तब उसे यमराज के दूतों ने बांधकर नरक रूपी समुद्र में डाल दिया॥ ५॥

महाघोरे सुरश्रेष्ठे कल्पमेकं तदाऽवसत्।
पुनर्व्याघ्रस्य योनिं च वृषयोनिं ततोऽलभत्॥ ६॥

भा० टी०—हे सुरश्रेष्ठे! वह महाघोर नरक में एक कल्प पर्यंत वास करता रहा फिर बाघ की योनि को प्राप्त हुआ वहाँ से फिर बैल की योनि को प्राप्त हो गया॥ ६॥

पुनर्मानुषयोनिं च मृतवत्सत्वमाप्नुयात्।
महारोगसमायुक्तो न सुखं लभते क्वचित्॥ ७॥

भा० टी०—फिर मनुष्य योनि को प्राप्त होकर मरने वाले पुत्रों को प्राप्त करता रहा और महारोगों से युक्त होकर कहीं भी सुख को नहीं पाता है॥ ७॥

अस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणु देवि वरानने!
गायत्रीमूलमन्त्रेण दशलक्षजपं यदा॥ ८॥

भा० टी०—हे देवि! हे वरानने! इसकी शांति को कहता हूँ तुम सुनो गायत्री के मूल मंत्र का दश लाख तक जप करायें॥ ८॥

दशांशहवनं चैव तदा पापक्षयो भवेत्।
गोविन्दस्य सदा ध्यानं सदा गोविन्दकीर्तनम्॥ ९॥

भा० टी०—दशांश हवनादि करायें तब पाप-क्षय होते हैं और सर्वकाल में गोविंद का ध्यान तथा गोविंद का कीर्तन करें॥ ९॥

नित्यं प्रपूजयेद्देवं शङ्खचक्रगदाधरम्।
पीताम्बरधरं श्यामं श्रीवत्सेन विराजितम्॥ १०॥

भा० टी०—और शंख, चक्र, गदा, पद्म-इनको धारण करने वाले पीत वस्त्रधारी श्याम रूप छाती में लक्ष्मी के चिह्न से युक्त-ऐसे विष्णुदेव का पूजन करें॥ १०॥

प्रत्यब्दं कार्तिके मासि तुलसीं विष्णुरूपिणीम्।
पूजयेद्दीपदानं च दद्याद्भार्यासमन्वितः॥ ११॥

भा० टी०—प्रत्येक वर्ष प्रत्येक कार्तिक महीने में विष्णुरूप वाली तुलसीजी का पूजन करें और भार्य्या से युक्त होकर दीपक का दान करें॥ ११॥

गोदानं शास्त्ररीत्या च गोदानाच्च वसुंधराम्।
यथाशक्ति च भो देवि ब्राह्मणाय शिवात्मने॥ १२॥

भा० टी०—हे देवि! शास्त्र की रीती से गौ का दान तथा भूमि का दान शिवजी के भक्त ब्राह्मण को यथा शक्ति दें॥ १२॥

एवं कृते न संदेहः पूर्वजन्मकृतं च यत्।
तत्पापं नाशमायति सर्वरोगक्षयो भवेत्॥ १३॥

भा० टी०—ऐसा करने से पूर्वजन्म का पाप दूर होता है, इसमें संशय नहीं और सब पाप नष्ट होते हैं तथा सभी रोगों का क्षय हो जाता है॥ १३॥

वन्ध्या च प्रशमं याति पुत्रलाभो भवेद्ध्रुवम्।
काकवन्ध्या लभेत्पुत्रं नात्र कार्या विचारणा॥ १४॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे स्वातिनक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नामैकषष्टितमोऽध्यायः॥ ६१॥

भा० टी०—और वन्ध्या भी शांति को प्राप्त करके निश्चय ही पुत्र को प्राप्त करती है इसमें कुछ भी सन्देह नहीं करना॥ १४॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां० पार्व० प्रायश्चित्तकथनं नामैकषष्टितमोऽध्यायः॥ ६१॥

॥ ६२ ॥

स्वातिनक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

कुरुक्षेत्रे महातीर्थे बल्लवो न्यवसत्प्रिये!।
कृषिकर्मरतो नित्यं क्रयविक्रयतत्परः ॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे देवि! कुरुक्षेत्र महातीर्थ में बल्लव (गोप) वास करता था और वह कृषि-कर्म में रत तथा नित्य पशुओं के क्रय-विक्रय में तत्पर रहता था॥ १ ॥

महिषीगोवृषाणां च संग्रहं चाकरोद्बहु।
तस्य भार्या वरारोहे परपुंसि रता सदा॥ २ ॥

भा० टी०—हे देवि! हे वरारोहे! वह महिषी, गौ, बैल-इन का बहुत संग्रह किया तथा उसकी भार्य्या पर-पुरुष से रमण किया करती थी॥ २ ॥

स्वपतिं तर्जयेन्नित्यं सदा निष्ठुरभाषणात्।
संग्रहो बहुद्रव्याणां न दानं दत्तवान् क्वचित्॥ ३ ॥

भा० टी०—नित्य अपने पति को ताड़ना देती थी सदा कठोर वचन कहती थी। उसके पास द्रव्य बहुत ही था, परंतु किसी को दान करके नहीं देता था॥ ३ ॥

एकस्मिन् दिवसे देवि चन्द्रपर्वणि शोभने!
दशसंख्यं च गोदानं कृतं क्षेत्रे तदा किल॥ ४ ॥

भा० टी०—हे देवि! हे शोभने! एक दिन चंद्रमा के ग्रहण में उसने महाक्षेत्र में दश गायों का दान किया॥ ४ ॥

ततो बहुगते काले तस्य मृत्युरभूत्किल।
यमदूतेन भो देवि निक्षिप्तो नरके किल॥ ५ ॥

भा० टी०—हे देवि! बहुत-सा काल व्यतीत होनें पर उसकी मृत्यु हुई तब यमराज के दूतों ने आज्ञा पाकर उसे नरक में डाल दिया॥ ५ ॥

त्रिंशद्वर्षसहस्राणि भुक्त्वा नरकयातनाम्।
पुनर्माहिषयोन्यां च जातः खलु वरानने!॥ ६॥

भा० टी०—हे वरानने! तब तीस हजार वर्षों तक नरक के दुःखों को भोगकर फिर भैंसे की योनि को प्राप्त हुआ॥ ६॥

नरयोनिं पुनर्लेभे धनधान्यसमन्वितः।
जातः खलु वरारोहे पुत्रकन्याविवर्जितः॥ ७॥

भा० टी०—हे वरारोहे! फिर वहाँ से मनुष्य योनि को प्राप्त हुआ, धनधान्य से युक्त होकर पुत्र और कन्या से रहित है॥ ७॥

रोगवान्नात्र संदेहो जङ्घापीडा ततोऽधिका।
अस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणु त्वं च यथातथम्॥ ८॥

भा० टी०—वह रोग वाला है, इसमें संदेह नहीं है विशेष करके जंघों में पीड़ा रहती है, अब इसकी शांति को कहता हूँ, तुम सुनो॥ ८॥

षडंशं च ततो दानं विप्राय विदुषे तथा।
गायत्रीलक्षजाप्यं च ततो होमं प्रकल्पयेत्॥ ९॥

भा० टी०—अपने घर के द्रव्य में से छठे भाग को विद्वान् ब्राह्मण को दान करें और एक लाख तक गायत्री का जप करवायें तथा उसका दशांश हवन करवायें॥ ९॥

दशांशं तर्पणं कुर्यात्तद्दशांशं च मार्जनम्।
गामेकां कपिलां दद्यात् स्वर्णशृङ्गीं सहाम्बराम्॥ १०॥

भा० टी०—दशांश तर्पण तथा दशांश मार्जन करवायें और सुवर्ण के शृंग और वस्त्रादि से युक्त करके एक कपिला गौ का दान दें॥ १०॥

ब्राह्मणान्पञ्चपञ्चाशत् पक्वान्नेन च भोजयेत्।
पञ्चपात्राणि दद्याद्वै शय्यादानं यथाविधि॥ ११॥

भा० टी०—और पचपन ब्राह्मणों को पक्वान्न से तृप्त करें और यथाविधि शय्या का दान तथा पांच पात्रों का दान करें॥ ११॥

दशवर्णाः प्रदातव्या ब्राह्मणेभ्यो यथाविधि।
एवं कृते न संदेहः शीघ्रं पुत्रः प्रजायते॥ १२॥

भा० टी०—और यथाविधि दश वर्णों वाली गायों का दान ब्राह्मणों को दें। ऐसा करने से शीघ्र पुत्र की प्राप्ति होती है, इसमें संदेह नहीं है॥ १२॥

रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति नात्र कार्या विचारणा।

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे स्वातिनक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नामं द्विषष्टितमोऽध्यायः॥ ६२॥

भा० टी०—और सारे रोग नाश को प्राप्त होते हैं, इसमें किसी प्रकार का भी संशय नहीं है॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहर० स्वातिनक्षत्र-तृतीयचरण० नाम द्विषष्टितमोऽध्यायः॥ ६२॥

॥ ६३ ॥

स्वातिनक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

हस्तिनानगरं ख्यातमासीज्जन्तुमनोहरम्।
अवसन् तत्र भो देवि नराः सर्वे विचक्षणाः॥ १॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे देवि! हस्तिनापुर नामक नगर विख्यात है, जहाँ मनोहर जंतु अर्थात् जीव वास करते हैं, इसलिये मनोहर है, वहाँ के सब मनुष्य विद्वान् हैं॥ १॥

तन्मध्ये शूद्र एको हि धर्मात्मा ज्ञानवानपि।
स्वधर्मकर्मणी कृत्वा व्ययकर्ता दिने दिने॥ २॥

भा० टी०—उनके मध्य में धर्मात्मा ज्ञानवान् एक शूद्र निवास कर रहा था और अपने धर्म-कर्म करके प्रतिदिन धन का खर्च किया करता था॥ २॥

तस्य पुत्रद्वयं जातं शठं पापयुतं सदा।
प्रत्यहं जीवघातेन मद्यवेश्यारतौ च तौ॥ ३॥

भा० टी०—उसके शठ, पाप से युक्त, दो पुत्र हुए—वे प्रतिदिन जीव-हिंसा तथा मदिरापान तथा वेश्या के संग में रत रहते थे॥ ३॥

द्यूतेनैव महादेवि रात्रावह्नि च जक्षतः।
न च वारयितुं शक्यौ शूद्रेणैतौ तदा शिवे!॥ ४॥

भा० टी०—हे देवि! द्यूत (जुआ) के व्यवहार से ही रात्रि और दिन में क्रीड़ा करते थे। हे शिव! उनका को निवारण करने में वह शूद्र भी समर्थ नहीं होता था॥ ४॥

ततस्तु दैवयोगेन प्रयागे शूद्र आगतः।
मासमेकं ततः स्थित्वा तस्य मृत्युरभूत्किल॥ ५॥

भा० टी०—तब दैवयोग से वह शूद्र प्रयाग में गया, वहाँ एक माह रहने पर उसकी मृत्यु हो गयी॥ ५॥

विष्णुदासात्तदा लब्ध्वा मृत्युलोके वरानने!
विमानवरमारूढो गतः स्वर्गे वरानने!॥ ६॥

भा० टी०—हे वरारोहे! हे वरानने! वह मृत्युलोक में विष्णुभक्ति को प्राप्त होकर वहाँ से श्रेष्ठ विमानों में बैठकर स्वर्ग को प्राप्त हुआ॥ ६॥

तस्य भार्या विशालाक्षि मर्त्यलोके सुरेश्वरि!
सा जाता विधवा नारी किञ्चित्काले गते सति॥ ७॥

भा० टी०—हे विशालाक्षि! हे सुरेश्वरि! उसकी भार्य्या सुंदर नेत्रों वाली विधवा हो गयी, कुछ दिन तो वह वैसी रहती रही॥ ७॥

परपुंसि रता जारे प्रत्यहं व्यभिचारिणी।
ततो बहु गते काले तस्या मृत्युरभूत्किल॥ ८॥

भा० टी०—फिर वह स्त्री जार कर्म में रत होकर पर-पुरुषों से व्यभिचार करती रही ऐसे बहुत सा काल व्यतीत होने पर उसकी भी मृत्यु हुई॥ ८॥

यमदूतैर्महाघोरैर्निक्षिप्ता नरके तदा।
विंशत्यब्दसहस्राणि नरके संप्रपीडिता॥ ९॥

भा० टी०—तब यमराज के दूतों नें उसे भी घोर नरक में डाल दिया, २० हजार वर्षों तक नरक में वह पीड़ा को प्राप्त हुई॥ ९॥

शूद्रः पुण्यक्षये जाते मृत्युलोके सुरेश्वरि!
जन्म संप्राप्तवान्देवि मध्यदेशे सुरेश्वरि!॥ १०॥

भा० टी०—हे देवि! हे सुरेश्वरि! पुण्य क्षीण होने पर मृत्यु लोक में शूद्र जन्मा मध्यदेश में उसने मनुष्य योनि में जन्म लिया॥ १०॥

तदा सा तु भवेन्नारी या पुरा व्यभिचारिणी।
पूर्वजन्मप्रसङ्गाच्च वंशच्छेदो हि जायते॥ ११॥

भा० टी०—और जो पहले उसकी व्यभिचारिणी स्त्री थी, वही उसके पूर्वजन्म के प्रसंग से पत्नी हुई किन्तु संतान से हीन हो गयी॥ ११॥

रोगश्च जायते देवि कष्टं चैव दिने दिने।
अस्य पापस्य वै शान्तिं तत्समासेन मे शृणु॥ १२॥

भा० टी०—हे देवि! दिन-प्रतिदिन उसके शरीर में कष्ट तथा रोग होते हैं, अब इस पाप की शांति को संक्षेप से कहता हूँ तुम सुनो॥ १२॥

स्वर्णवृक्षवरं कृत्वा स्वाङ्गुष्ठपरिमाणकम्।
फलपुष्पसमायुक्तं पलपञ्चदशस्य तु॥ १३॥

भा० टी०—पांच पल प्रमाण वाले सुवर्ण का उत्तम वृक्ष बनवायें, अँगूठे के प्रमाण से फल तथा पुष्पों से युक्त करें॥ १३॥

तस्य वृक्षस्य वै मूले शालिग्रामशिलां शुभाम्।
पूजयित्वा विधानेन विष्णुरूपं वरानने!॥ १४॥

भा० टी०—हे वरानने! उस वृक्ष के मूल में शुभ विष्णुरूप शालिग्राम की मूर्ति का विधि-विधान से पूजन करके॥ १४॥

ब्राह्मणाय ततो दद्याद्गां च दद्यात्पयस्विनीम्।
गायत्रीमन्त्रजाप्यं तु लक्षमेकं तु कारयेत्॥ १५॥

भा० टी०—ब्राह्मण को दान करें तथा दूध वाली गौ का दान दें और गायत्री मंत्र का एक लाख तक जप करायें॥ १६॥

ततः पापविशुद्धिः स्यात् पुत्रो भवति नान्यथा।
सर्वे रोगाः क्षयं यान्ति काकवन्ध्या लभेत्सुतम्॥ १६॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे स्वातिनक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम त्रयःषष्टितमोऽध्यायः॥ ६३॥

भा० टी०—तब पाप से श्रुद्ध होकर पुत्र संतान की प्राप्ति होती है अन्यथा नहीं होकर और सारे रोग दूर होते हैं काकवन्ध्या भी पुत्र को प्राप्त करती है॥ १६॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां भाषाटीकायां० स्वातिनक्ष० चतुर्थचरण० नाम त्रयःषष्टितमोऽध्यायः॥ ६३॥

॥ ६४ ॥

विशाखानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

कपिले नगरे देवि क्षत्री वै न्यवसत्पुरा।
क्षत्रधर्मविहीनश्च वैश्यकर्मरतः सदा॥ १॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे देवि! पहले कपिल नामक नगर में एक क्षत्रिय वास करता था, वह क्षत्रिय-धर्म से रहित और सदा वैश्य के धर्मों में रत रहता था॥ १॥

प्रत्यहं वैश्यवृत्त्या तु व्ययं कुर्याद्दिने दिने।
बहुद्रव्यं तदा तेन संचितं त्यक्तधर्मणा॥ २॥

भा० टी०—वैश्य कर्म से प्रतिदिन व्यापार करके तथा अपना धर्म त्यागकर उसने बहुत-सा द्रव्य इकट्ठा किया॥ २॥

महालोभेन संयुक्तो धर्मचर्चा न कुत्रचित्।
पत्नी पुत्राय भोगार्थं नादात्कृपणकेसरी॥ ३॥

भा० टी०—और महालोभ से युक्त होकर उसने कभी भी धर्म की चर्चा न की और अपनी स्त्री अथवा पुत्र को भी भोगने के लिए कुछ नहीं देता था वह ऐसा कृपण शिरोमणि था॥ ३॥

एवं बहुतिथे काले मरणं सर्पतस्तदा॥ ४॥

भा० टी०—ऐसे ही बहुत-सा काल व्यतीत होने पर सर्प के द्वारा काटने से उसकी मृत्यु हुई॥ ४॥

आसीत्तदीयप्रमदापि तादृक्
यतो जनो योग्यमुपैति सर्वम्।
यथार्थतः क्षिप्तमतीवदुःखे
यमस्य दूतैः कृतपादशृङ्खलः॥ ५॥

भा० टी०—और उसकी स्त्री भी वैसी ही होती गई, क्योंकि जो जिस धर्म में

युक्त हो, उसको सब वैसा ही मिलता है, तब यमराज के दूतोंनें पैरों में शृंखला अर्थात् शांकल डाल कर उसे महाघोर नरक में डाला॥ ५॥

युगमेकं वरारोहे कष्टं भुक्त्वा सुदारुणम्।
ततोऽभूत्स ततो देवि महिषी वृषभो हयः॥ ६॥

भा० टी०—हे वरारोहे! हे देवि!! एक युग तक नरक के दुःखों को भोगकर फिर महिषी की योनि को प्राप्त हुआ, तदनन्तर बैल की योनि को प्राप्त होकर वहाँ से घोड़े की योनि को प्राप्त हुआ॥ ६॥

पुनश्च मानुषो भूत्वा तस्य भार्या च या पुरा।
विवाहिता च सा देवि तस्यां पुत्रो न जायते॥ ७॥

भा० टी०—हे देवि! फिर मनुष्य योनि को प्राप्त होकर, जो पहले उसकी भार्या थी, वही फिर उसे विवाहित हुई किन्तु पुत्र की संतान न हुई॥ ७॥

पुरा ह्येकाऽभवत्कन्या पुनः सूतिविवर्जिता।
रोगो भवति देहे च मध्ये मध्ये ज्वरो भवेत्॥ ८॥

भा० टी०—पहली कन्या की संतान होने के पश्चात् उसको गर्भ नहीं ठहरता और देह में रोग तथा मध्य-मध्य में ज्वर की पीड़ा होती है॥ ८॥

अस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणु देवि वरानने!
कल्पवृक्षवरं कुर्यात् स्वाङ्गुष्ठपरिमाणकम्॥ ९॥

भा० टी०—हे देवि! हे वरानने!! इसकी शांति को कहता हूँ, तुम सुनो, एक अंगुष्ठ के परिमाण वाला कल्पवृक्ष बनवायें॥ ९॥

सुवर्णस्य महादेवि पलपञ्चदशस्य तु।
वेदीं रौप्यमयीं कुर्यात् पलपञ्चदशस्य तु॥ १०॥

भा० टी०—हे महादेवि! पंद्रह पल वाले सुवर्ण का वृक्ष बनवायें और पंद्रह पल परिमाण वाली चांदी की वेदी बनवायें॥ १०॥

तत्र वृक्षं समारोप्य फलपुष्पेण संयुतम्।
अष्टम्यां च चतुर्दश्यां नवम्यां च सुरेश्वरि!॥ ११॥

भा० टी०—और हे सुरेश्वरि! वहाँ फल-पुष्प से युक्त उस वृक्ष को स्थापित कर अष्टमी, चतुर्दशी तथा नवमी के दिन॥ ११॥

तस्य वृक्षस्य वै मूले वृषकेतुं सुरेश्वरि!
सगणं देवमीशानमर्चयित्वा यथाविधि॥ १२॥

भा० टी०—हे सुरेश्वरि! उस वृक्ष के मूल में यथाविधि गणों सहित महादेव की पूजा करें ॥ १२॥

यथाशक्ति वरारोहे गन्धधूपादिभिस्तथा।
साष्टाङ्गं दण्डवत्तत्र देवदेवं समापयेत्॥ १३॥

भा० टी०—हे वरारोहे! यथाशक्ति गंधधूपादि से पूजन करें और देवों के देव को साष्टांग दंडवत् प्रणाम कर समाप्त करें॥ १३॥

मन्त्रेणानेन भो देवि विसर्जनमथाचरेत्।
ॐ नमः शिवाय देवाय शिवायै सततं नमः॥ १४॥

भा० टी०—और हे देवि! ''ॐ नमः शिवाय शिवायै सततं नमः'' इस मंत्र से पार्वती और महादेव का विसर्जन करें॥ १४॥

मम पूर्वकृतं पापं जन्मजन्मसमुद्भवम्।
तत्सर्वं क्षम्यतां देव देव्या सह महेश्वर!॥ १५॥

भा० टी०—हे देव! हे महेश्वर! देवी के सहित तुम मेरे जन्म-जन्मों के पापों को शांत करो॥ १५॥

ततो वै पूजयेद्विप्रं वेदब्रह्मस्वरूपिणम्।
पट्टवस्त्राद्यलंकारैर्विविधैर्मोदकैरपि॥ १६॥

भा० टी०—फिर वेद ब्रह्म के स्वरूप विप्र का पट्ट वस्त्रादि अलंकार से तथा नाना प्रकार के मोदकों से पूजन करें॥ १६॥

ततो वृक्षं च वेदीं च कपिलां गां सवत्सकाम्।
ब्राह्मणाय ततो दद्यात् पूर्वपापविशुद्धये॥ १७॥

भा० टी०—फिर पूर्वपाप की शुद्धि के लिये वेदी के सहित वृक्ष और बछड़े से युक्त कपिला गौ को ब्राह्मण को दान दें॥ १७॥

भक्त्या मम महादेवि शिवरात्र्यां विशेषतः।
आ जन्ममरणाद्देवि व्रतं कुर्यात्प्रयत्नतः॥ १८॥

भा० टी०—हे महादेवि! भक्ति पूर्वक शिवरात्रि के दिन विशेषता से जन्म से मरण पर्यंत यत्न पूर्वक व्रत करें॥ १८॥

एवंकृते महादेवि शीघ्रं पुत्रः प्रजायते।
रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति वन्ध्या च लभते सुतम्॥ १९॥

भा० टी०—हे देवि! ऐसा करने से शीघ्र पुत्र की प्राप्ति होती है और सब रोग नाश को प्राप्त होते हैं और वन्ध्या भी पुत्र को प्राप्त करती है॥ १९॥

मृतवत्सा लभेत्पुत्रं चिरञ्जीविनमुत्तमम्।

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे विशाखानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चितकथनं नाम चतुःषष्टितमोऽध्यायः॥ ६४॥

भा० टी०—मृतवत्सा भी बहुत काल तक जीने वाले पुत्र को प्राप्त करती है॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे विशाखानक्ष० प्रथमचर० प्रायश्चित्तकथनं नाम चतुःषष्टितमोऽध्यायः॥ ६४॥

॥ ६५ ॥

विशाखानक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच॥

विष्णुकाञ्च्यां महादेवि ब्राह्मणो वेदपारगः।
अत्याचाररतः शान्तो विष्णुभक्तिपरायणः॥ १॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे महादेवि! विष्णुकांचिपुरी में एक ब्राह्मण वेद का पारायण करने वाला, अति आचार में रत शांतस्वभाव विष्णु की भक्ति में परायण रहता था॥ १॥

लाञ्छितो विष्णुचक्रेण विप्रो विद्याविवर्जितः।
न वेदः पाठ्यते तेन न विप्रः स्पृश्यते क्वचित्॥ २॥

भा० टी०—वह विष्णु चक्र के चिह्न वाला अर्थात् चक्रांकित था। वह ब्राह्मण विद्या से रहित होकर वेद को नहीं पढ़ने वाला तथा ब्राह्मण वृत्ति को भी कभी स्पर्श न करने वाला हुआ॥ २॥

द्विजानां स्मार्तवृत्तीनां विद्वेषं च करोति सः।
शिवशक्तिरतानां च नाभिवादनमाचरेत्॥ ३॥

भा० टी०—ऐसा वह स्मार्तवृत्ति वाले ब्राह्मणों के प्रति वैरभाव रखता था और शिव की भक्ति में रत रहने वालों को नमस्कार भी नहीं करता था॥ ३॥

एवं वयोगते देवि वृद्धे जाते वरानने!
मरणं तस्य वै जातं ब्राह्मणस्य वरानने!॥ ४॥

भा० टी०—हे देवि! हे वरारनने!! इस प्रकार वृद्ध होने पर जब उसकी अवस्था बीत गयी तो उसकी मृत्यु हो गयी॥ ४॥

यमदूतैर्महाघोरे नरके पातितस्तदा।
रौरवे च तदा देवि षष्टिवर्षसहस्रकम्॥ ५॥

भा० टी०—और यमराज के दूतों न यम की आज्ञा पाकर साठ हजार वर्षों तक महाघोर नरक में तथा रौरव संज्ञक नरक में उसे डाला॥ ५॥

भुक्त्वा नरककष्टं च पुनर्जातः सरीसृपः।
मानुषत्वं पुनर्जातः कष्टानि विविधानि च॥ ६॥

भा० टी०—तब वह नरक के दु:खों को भोगकर विच्छू की योनि को प्राप्त हुआ, फिर अनेक कष्टों सहित मनुष्य योनि को प्राप्त हुआ॥ ६॥

पुत्रस्य मरणं कान्ते प्रतिवर्षे महाव्यथा।
पुनः स्त्री काकवन्ध्या स्यात्पूर्वजन्म प्रसङ्गतः॥ ७॥

भा० टी०—हे कांते! पुत्र का मरण और प्रतिवर्ष महादु:ख को प्राप्त होता है और उसकी स्त्री पूर्वजन्म के प्रसंग से काकवन्ध्या हो गयी है॥ ७॥

धनधान्यसमायुक्तोऽप्येवं दुःखं महद्भवेत्।
अथ वक्ष्ये महादेवि पूर्वपापस्य निष्कृतिम्॥ ८॥

भा० टी०—और धनधान्य से युक्त होकर भी वह दु:खों को प्राप्त होता है, अब हे देवि! पूर्वपाप की शुद्धि को कहता हूँ, तुम सुनो॥ ८॥

गङ्गामध्ये प्रदातव्यं पूर्वपापविशुद्धये।
निष्कत्रयसुवर्णस्य कमलं निर्मितं शुभम्॥ ९॥

भा० टी०—हे देवि! पूर्वपाप की शुद्धि के लिए तीन निष्कप्रमाण वाले सुवर्ण का कमल बनाकर ब्राह्मण को दान कर दें॥ ९॥

दद्याद्वेदविदे देवि ब्राह्मणाय शुभार्थिने।
अष्टांशं विभवं देवि ब्राह्मणाय समर्पयेत्॥ १०॥

भा० टी०—और हे देवि! शुभार्थी ब्राह्मण को अपने घर के द्रव्य में से आठवें भाग का दान कर के दें॥ १०॥

गायत्रीजातवेदाभ्यां दशायुतजपं तथा।
कूष्माण्डं नारिकेरं च पञ्चरत्नसमन्वितम्॥ ११॥

भा० टी०—गायत्री तथा जातवेद मंत्र का दश हजार तक जप करायें और पेठा वा नारियल को पंच रत्न से युक्त कर गंगा के मध्य में दान करें॥ ११॥

एवं कृते भवेद्देवि पूर्वपापविशुद्धता।
पुत्रं चैवं लभेद्देवि चिरञ्जीविनमुत्तमम्॥ १२॥

भा० टी०—हे देवि! ऐसा करने से पूर्वपाप की शुद्धि होती है और बहुत काल तक जीने वाले पुत्र-संतान को प्राप्त करता है॥ १२॥

व्याधयः प्रशमं यान्ति ज्वराः सर्वे तथाविधाः।
काकवन्ध्या लभेत्पुत्रं चिरञ्जीविनमुत्तमम्॥ १३॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे विशाखानक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम पञ्चषष्टितमोऽध्यायः॥ ६५॥

भा० टी०—सब व्याधियों का नाश तथा सब ज्वरों का क्षय और काकवन्ध्या को भी बहुत काल तक जीवने वाले पुत्र की प्राप्ति होती है॥ १३॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां० विशा० द्वितीयच० नाम पञ्चषष्टितमोऽध्यायः॥ ६५॥

॥ ६६ ॥

विशाखानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

विदर्भनगरे देवि क्षत्री ह्येकोऽवसत्पुरा।
तेजशर्मेति विख्यातो द्विजानां वृत्तिहारकः ॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे देवि! पहले विदर्भ नामक पुर में एक क्षत्रिय वास करता था, वह तेजशर्मानाम से प्रसिद्ध था और ब्राह्मणों की जीविका को हरने वाला था॥ १ ॥

प्रजानां दुःखदो नित्यं वेदानां चैव निन्दकः।
तस्य त्रासवशात्सर्वा प्रजा ग्रामात्पलायिता ॥ २ ॥

भा० टी०—वह प्रजा को नित्य दुःख देने वाला तथा देवों की निंदा करने वाला था उसके त्रास से सब प्रजा दुःखी होकर ग्राम से भाग गई॥ २ ॥

एवं बहुगते काले तस्य मृत्युरभूत्किल।
यमदूतैर्महाघोरैर्निक्षिप्तो नरके ततः ॥ ३ ॥

भा० टी०—इस प्रकार बहुत-सा काल व्यतीत होने पर उसकी मृत्यु हुई, पश्चात् पीछे वह यमराज के भयंकर दूतों के द्वारा घोर नरक में डाला गया॥ ३ ॥

द्विसप्ततिसहस्राणि घोरे नरककर्दमे।
भुक्तं नरककष्टं च सूचीमुखसमुद्भवम् ॥ ४ ॥

भा० टी०—हे देवि! वह बहत्तर हजार वर्षों तक घोर नरक में रहा, वहाँ-सूची मुख नरक से उत्पन्न हुए कष्टों को भोगता रहा॥ ४ ॥

नरकान्निर्गतो देवि गर्दभत्वं ततोऽगमत्।
रासभत्वात्ततो देवि मानुषत्वं ततोऽभवत् ॥ ५ ॥

भा० टी०—नरक से निकलकर वह गर्दभ की योनि को प्राप्त हुआ और वहाँ से फिर मनुष्य-योनि को प्राप्त हुआ॥ ५ ॥

तस्य भार्याभवद्वन्ध्या पूर्वजन्मफलाच्छिवे!
तस्माद्गात्रे भवेद्रोगो दद्रुरर्शादयस्तथा॥ ६॥

भा० टी०—उसकी भार्य्या पिछले जन्म के कर्म-प्रसंग से वंध्या होती हो गयी तथा उसके गात्र में दद्रु अर्श (बवासीर) इत्यादि रोग पीड़ होती रहती है॥ ६॥

न सुखं लभते देवि चिन्तया व्याकुलेन्द्रियः।
शृणु सर्वं वरारोहे पूर्वपापस्य निग्रहे॥ ७॥

भा० टी०—हे देवि! हे वरारोहे! वह चिंता से व्याकुल होकर कुछ भी सुख को नहीं प्राप्त करता, अब उस पाप की शांति को कहता हूँ, तुम सुनो॥ ७॥

दशांशं विभवं देवि ब्राह्मणाय समर्पयेत्।
वापीकूपतडागादि पथि मध्ये च कारयेत्॥ ८॥

भा० टी०—हे देवि! अपने घर के द्रव्य में से दशांश ब्राह्मण को दान करें और मार्ग के मध्य में बावड़ी, कूप, तालाब इत्यादि बनवायें॥ ८॥

गृहदानं ततो देवि सर्ववस्तुसमन्वितम्।
प्रदद्याद्वेदविदुषे ब्राह्मणाय वराय च॥ ९॥

भा० टी०—हे देवि! सभी वस्तुओं से युक्त घर का दान वेद पाठी विद्वान् ब्राह्मण को करें॥ ९॥

आकृष्णेति जपं देवि लक्षमेकं च कारयेत्।
होमं कुर्यादद्रिसुते तिलाज्यमधुतण्डुलैः॥ १०॥

भा० टी०—हे देवि! हे अद्रिसुते!! 'आकृष्णे०' इस मंत्र का एक लाख तक जप करवायें, तिल, घृत, तंडुल इनको एकत्रित करके होम करवायें॥ १०॥

ततो गां कपिलां देवि ब्राह्मणाय प्रपूजिताम्।
प्रदद्याद्विधिवच्चैव सर्वालंकारभूषिताम्॥ ११॥

भा० टी०—हे देवि! फिर ब्राह्मण को पूजन करके तथा विधिपूर्वक वस्त्रादि अलंकार से युक्त करके कपिला गौ का दान दें॥ ११॥

सुवर्णनिष्कमात्रं तु ब्राह्मणाय ततो ददेत्।
एवं कृते वरारोहे रोगनाशो भवेद्ध्रुवम्॥ १२॥

भा० टी०—और हे वरारोहे! निष्कमात्र प्रमाण के सुवर्ण का दान ब्राह्मण को दें ऐसा करने से निश्चय ही रोग का नाश होता है॥ १२॥

पुत्रश्च जायते देवि वन्ध्यत्वं च प्रशाम्यति।
काकवन्ध्या लभेत्पुत्रं नात्र कार्या विचारणा॥ १३॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे विशाखानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम षट्षष्टितमोऽध्यायः॥ ६६॥

भा० टी०—हे देवि! पुत्र-संतान होती है वन्ध्यापन दूर होता है, काकवन्ध्याभी पुत्र को प्राप्त करती है, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है॥ १३॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां० विशाखा० प्रायश्चित्तकथनं नामषट्षष्टितमोऽध्यायः॥ ६६॥

॥ ६७ ॥

विशाखानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

मायापुर्य्यां महादेवि क्षत्री ह्येकोऽवसत्पुरा।
स शूरश्च धनी मानी देवताऽतिथिपूजकः॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे देवि! मायापुरी में पहले एक क्षत्रिय रहता था, वह शूरवीर तथा धन से युक्त, सम्मानित देवता और अभ्यागत का पूजन करने वाला था॥ १ ॥

तस्य भार्या विशालाक्षी शतानाम्नी वराङ्गना।
ब्राह्मणातिथिदेवानां पूजने चातितत्परा॥ २ ॥

भा० टी०—उसकी भार्या सुंदर नेत्रों वाली शता नाम से विख्यात, श्रेष्ठ अंगों वाली ब्राह्मण, अतिथि, देवता-इन के पूजन में रत रहती थी॥ २ ॥

एकस्मिन् समये देवि हेमकारः समागतः।
धनाढ्यः स्वर्णसंयुक्तो गृहे तस्यावसत्स च॥ ३ ॥

भा० टी०—हे देवि! एक समय वहाँ सुवर्णकार आया, धन तथा सुवर्ण सहित उस क्षत्रिय के घर में उसने निवास किया॥ ३ ॥

क्षत्रियाय स्वमित्राय शतं स्वर्णस्य वै पलम्।
प्रदत्तं हेमकारेण चान्यत्स्वर्णं समर्पितम्॥ ४ ॥

भा० टी०—उस स्वर्णकार को क्षत्रिय ने अपना मित्र समझकर उसको सौ पल मात्रा वाला सुवर्ण तथा अन्य सुवर्ण भी सारा दे दिया॥ ४ ॥

अत्रान्तरे महादेवि स्वर्णकारस्ततो मृतः।
दष्टः सर्पेण तीव्रेणः पुत्रहीनः सुवर्णकृत्॥ ५ ॥

भा० टी०—हे देवि! कुछ समय के अंतर में वह स्वर्णकार तीव्र सर्प के डँसने से मृत्यु को प्राप्त हुआ। वह सुवर्णकार (सुनार) पुत्रादि से हीन था॥ ५ ॥

स्वर्णं सर्वं गृहीत्वा तु प्रभुक्तं क्षत्रियेण तत्।
पुत्रदारयुते जाते न दत्तं तद्द्विजाय च॥ ६॥

भा० टी०—और वह सारा सुवर्ण क्षत्रि ने ले लिया पुत्रदारा से युक्त होकर सारे द्रव्य को भोगता गया और ब्राह्मण को किंचित् मात्र भी दान नहीं दिया॥ ६॥

ततो बहुगते काले तस्य मृत्युरभूत्किल।
क्षत्रियस्य महादेवि सुरलोकस्ततोऽभवत्॥ ७॥

भा० टी०—हे देवि! तब बहुत-सा काल व्यतीत होने पर उस क्षत्रिय का मृत्यु हो गयी और सुरलोक का वास उसको मिला॥ ७॥

सौख्यं सुराङ्गनासार्द्धं षष्टिवर्षप्रमाणकम्।
ततः पुण्यक्षये जाते बभूव मनुजः क्षितौ॥ ८॥

भा० टी०—और वहाँ देवांगनाओं के साथ साठ हजार वर्षों तक भोगों को भोगकर वहाँ से पुण्य क्षीण होने पर पृथ्वी पर मनुष्य शरीर लेकर जन्मा॥ ८॥

धनधान्ययुतस्तस्य भूयो भार्याऽभवत् किल।
कन्यका चैव पुत्रौ च जातौ तस्यां वरानने!॥ ९॥

भा० टी०—हे वरानने! धनधान्य से युक्त हुए उसके फिर वही पूर्वजन्म वाली भार्य्या हो गयी और उनके एक कन्या तथा दो पुत्र पैदा हुए॥ ९॥

गर्भं च जायते देवि तद्गर्भपतनं भवेत्।
रोगमुग्रं भवेद्देवि न सुखं जायते खलु॥ १०॥

भा० टी०—हे देवि! उसके अन्य गर्भों का पात हो गया और उसे बड़ा उग्ररोग हुआ सुख की प्राप्ति उसको किंचित् भी नहीं हुई॥ १०॥

शान्तिं शृणु वरारोहे यतः पापक्षयो भवेत्।
षडंशं च ततो देवि ब्राह्मणाय समर्पयेत्॥ ११॥

भा० टी०—हे वरारोहे! उसकी शांति को तुम सुनो मैं कहता हूं जिससे पाप शांत हों, घर के द्रव्य में से छठे भाग पुण्य के लिए ब्राह्मण को दें॥ ११॥

दशवर्णा ततो दद्याद्विप्राय ज्ञानिने प्रिये!
गायत्रीमूलमन्त्रेण लक्षजाप्यं च कारयेत्॥ १२॥

भा० टी०—हे प्रिये! दशवर्णों वाली गायों का दान ज्ञानवान् ब्राह्मण को दें और गायत्री के मूलमंत्र का एक लाख तक जप करवायें॥ १२॥

पक्वान्नेनैव भो देवि ब्राह्मणान् भोजयेच्छतम्।
वृक्षं स्वर्णस्य वै देवि फलपुष्पसमन्वितम्॥ १३॥

भा० टी०—और हे देवि! पक्वान्न भोग से सौ ब्राह्मणों को भोजन करवायें और सुवर्ण से वृक्ष को बनाकर फलपुष्पों से युक्त कर॥ १३॥

दद्याद्विप्राय विदुषे पलं दशप्रमाणकम्।
सूर्यस्य पूजनं चैव रविवारे विशेषतः॥ १४॥

भा० टी०—दश पल प्रमाण वाले सुवर्ण से युक्त कराकर वेद पाठी ब्राह्मण को दान करके दें और विशेषकर रविवार के दिन सूर्य की पूजा करें॥ १४॥

एवं कृते वरारोहे शीघ्रं पुत्रश्च जायते।
ज्वरस्य वै भवेन्मुक्तिः काकवन्ध्या सुतं लभेत्॥ १५॥

भा० टी०—हे वरारोहे! ऐसा करने से शीघ्र पुत्र पैदा होता है और ज्वर से व्यक्ति छूट जाता है, काकवन्ध्या स्त्री भी पुत्र को प्राप्त करती है॥ १५॥

मृतवत्सा लभेत्पुत्रं चिरञ्जीविनमुत्तमम्।

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे विशाखानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम सप्तषष्टितमोऽध्यायः॥ ६७॥

भा० टी०—मृतवत्सा भी बहुत काल की आयु वाले पुत्र को पैदा करती है॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे विशाखानक्षत्रस्य चतुर्थ० प्रायश्चित्त० सप्तषष्टितमोऽध्यायः॥ ६७॥

॥ ६८ ॥

अनुराधानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

कल्याणनगरे गौरि मायापुर्याः समीपतः।
वणिग्जनोऽवसत्तत्र धनाढ्यो धनगर्वितः॥ १॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे गौरि! कल्याण नाम वाले नगर में मायापुरी के समीप एक बनियां धन से युक्त था, किन्तु धन के मद से अत्यधिक घमण्डी होकर वह वहाँ निवास करता था॥ १॥

क्रयकृत्सर्ववस्तूनां विक्रयं च सदाऽकरोत्।
महालोभवशाद्देवि न दत्तं पापिना क्वचित्॥ २॥

भा० टी०—हे देवि! वह वस्तुओं को लेने-देने का व्यापार सदा करता था, महालोभ वशीभूत होकर उस पापी ने कुछ भी दान नहीं किया॥ २॥

तस्य भार्या विशालाक्षी पुंश्चली कुलटाऽधमा।
यमौ पुत्रौ वरारोहे पुंश्चल्यां जज्ञिरे तदा॥ ३॥

भा० टी०—हे वरारोहे! उसकी भार्या सुंदर नेत्रों वाली पुंश्चली (जारिणी) तथा कुलटा तथा अधमवृत्ति वाली थी, उसने दो पुत्रों को जुड़वा पैदा किया॥ ३॥

एको द्यूतरतः पुत्रो द्वितीयो ब्राह्मणीरतः।
वैश्येनैव विशालाक्षि धनं च बहु सञ्चितम्॥ ४॥

भा० टी०—हे विशालाक्षि! उस वैश्य ने बहुत धन और साधन संचित किये और उसके दोनों पुत्रो में से एक तो द्यूत कर्म अर्थात् जुआ खेलने में और दूसरा ब्राह्मणी में रत रहता था॥ ४॥

प्रत्यहं भुज्यते छागविक्रयं कुरुते सदा।
वृद्धे सति महादेवि वैश्यस्य मरणं ह्यभूत्॥ ५॥

भा० टी०—हे महादेवि! प्रतिदिन वे दोनों उस धन का भोग किया करते थे और

बकरियों का क्रयविक्रय भी करते थे। इस प्रकार वैश्य के वृद्ध होने पर उसकी मृत्यु हो गयी॥ ५॥

यमदूतैस्तदा बद्ध्वा निक्षिप्तो नरकार्णवे।
स्वरूपं दर्शयामास तस्मै वैश्याय सूर्यजः॥ ६॥

नवत्यब्दसहस्राणि घोरे नरकदारुणे।
महाकष्टं तदा दत्तं कृमिभिर्घोररुपिभिः॥ ७॥

भा० टी०—तब सूर्य के पुत्र यमराज ने अपना रूप दिखाकर दूतों को आज्ञा देकर शृंखलों से बांधकर उसे नरक रूपी समुद्र में डाला। वहाँ घोर रूप वाले कृमियों से पीडित वह महादु:खों को प्राप्त हुआ॥ ६॥ ७॥

ततो व्याघ्रस्य वै योनिं काककुक्कुटयोः पुनः।
मानुषत्वं ततो यातः पुत्रकन्याविवर्जितः॥ ८॥

भा० टी०—फिर वहाँ से निकलकर बाघ की योनि को प्राप्त हुआ, फिर काकयोनि को प्राप्त होकर मुरगे की योनि को प्राप्त हुआ, फिर मनुष्य योनि पार पुत्र तथा कन्या से रहित है॥ ८॥

पुनर्विवाहिता सा तु या पत्नी पूर्वजन्मनि।
रोगवान् सापि रोगार्त्ता मृतवत्सा पुनः पुनः॥ ९॥

भा० टी०—जो उसकी पूर्व जन्म में स्त्री थी वही फिर विवाही गयी, वह भी रोगयुक्त है तथा स्त्री भी रोग से पीड़ित होकर बार-बार मृतवत्सावस्था को प्राप्त होती है अर्थात् उसके पुत्र मरते हैं॥ ९॥

एकापत्या भवेद्दुष्टा न स्यादन्यसुतः प्रिये!
यदा सर्वस्वदानं वै सूर्यस्याऽऽराधनं यदा॥ १०॥

भा० टी०—हे प्रिये! उसकी एक दुष्ट कन्या पैदा होकर फिर पुत्रादि नहीं हुए अब उसकी शांति को कहता हूँ। इसके लिए सूर्य का आराधन तथा सर्वस्व का दान करें॥ १०॥

हरिवंशश्रुतेश्चैव दुर्गास्तोत्रजपस्तथा।
गायत्रीमूलमन्त्रेण लक्षजाप्यं यदा भवेत्॥ ११॥

भा० टी०—जब हरिवंश का श्रवण, दुर्गा स्तोत्र का जप तथा गायत्री का एक लाख तक जप किया जाता है॥ ११॥

तदा पुत्रो भवेद्देवि व्याधिनाशो भवेद्ध्रुवम्॥ १२॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे अनुराधानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम अष्टषष्टितमोऽध्यायः॥ ६८॥

भा० टी०—तब इन कर्मों को करने से कर्त्ता को पुत्र की प्राप्ति होती और निश्चय ही व्याधि का नाश होता है॥ १२॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे अनुराधान० प्रथमच० प्रायश्चित्तकथनं नामाष्टषष्टितमोऽध्यायः॥ ६८॥

॥ ६९ ॥

अनुराधानक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

मगधे वै शुभे देशे काष्ठकारोऽवसत् प्रिये!।
पुत्रपौत्रसमायुक्तो धनाढ्यो गुणवानपि॥ १॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे प्रिये! मगध देश में एक काष्ठकार पुत्र, पौत्रादि से युक्त, धनाढ्य बहुगुणवान् वास करता था॥ १॥

यदा चार्द्धं वयो यातं दरिद्रत्वं तदाऽगमत्।
गृहीतं यतिनो द्रव्यं शतपञ्चपलं तथा॥ २॥

भा० टी०—उसकी जब आधी आयु व्यतीत हुई, तब दारिद्र्य को प्राप्त होता गया और उसने किसी योगी से सौ पल द्रव्य ग्रहण किया॥ २॥

व्ययं कृत्वा तदा तेन न दत्तं यतिने शिवे!
ततस्तस्य ह्यभून्मृत्युः काष्ठकारस्य मागधे॥ ३॥

भा० टी०—हे शिवे! सब द्रव्य खर्च करके उसने यति का द्रव्य वापस नहीं दिया फिर उस मगध देश में ही उस काष्ठकार की मृत्यु हो गयी॥ ३॥

द्वे दत्त्वा कपिले गावौ स्वर्णरौप्यविभूषिते।
पुत्रेणापि कृतं श्राद्धं शास्त्ररीत्या गयादिकम्॥ ४॥

भा० टी०—तब उसके पुत्र ने शास्त्र रीति से उसका श्राद्ध कराकर सुवर्ण तथा आभूषणों से युक्त दो कपिला गायों का दान दिया और गयादि (पिण्डदान) कर्म करवाया॥ ४॥

यक्षलोकं तदा यातो वर्षं शतसहस्रकम्।
पुनः पुण्यक्षये जाते कपियोनिं ततोऽलभत्॥ ५॥

भा० टी०—तब वह काष्ठकार यक्ष के लोक में प्राप्त हुआ सौ हजार वर्षों तक वहाँ वास करके फिर पुण्य क्षीण होने पर वह वानर की योनि को प्राप्त हो गया॥ ५॥

ऋक्षस्यैव पुनर्योनिं मानुषत्वं ततोऽगमत्।
धनधान्यसमायुक्तो गुणज्ञोप्यतिसुन्दरः॥ ६॥

भा० टी०—फिर उसने रीछ की योनि को प्राप्त कर बाद में मनुष्य शरीर को प्राप्त किया वह धनधान्य से युक्त गुणों को जानने वाला, अति सुंदर रूप वाला है॥ ६॥

पूर्वजन्मनि भो देवि काष्ठच्छेदः कृतः सदा।
तेन पापेन भो देवि शरीरे महती व्यथा॥ ७॥

भा० टी०—हे देवि! पूर्व जन्म में उसने काष्ठच्छेदन किया, उस पाप से हे देवि! उसके शरीर में बड़ी व्यथा होती है॥ ७॥

यतिद्रव्यं गृहीतं च न दत्तं यतिने यतः।
तेन यातः सुतो देवि ऋणसम्बन्धकारणात्॥ ८॥

भा० टी०—हे देवि! यति का द्रव्य ग्रहण करके फिर यति को वापस नहीं देनें के कारण तथा ऋण-संबंध से वह यति उसका पुत्र हुआ है॥ ८॥

द्यूतवेश्यारतो नित्यं पितृमात्रोर्विरोधकृत्।
युवरूपो यदा यातस्तदा मृत्युर्भवेद्ध्रुवम्॥ ९॥

भा० टी०—जुआ तथा वेश्या संग, में रत, माता-पिता से विरोध करने वाला होकर जिस समय युवा हुआ उसी समय वह मृत्यु को प्राप्त हो गया॥ ९॥

पुनः पुत्रस्य संदेहः काकवन्ध्यत्वमाप्नुयात्।
पत्नी तस्य वरारोहे मृतवत्सा पुनः पुनः॥ १०॥

भा० टी०—फिर हे वरारोहे! पुत्र के कारण मानसिक रोगी होकर उसकी स्त्री काकवन्ध्यापन को प्राप्त हो गयी और बार-बार मृतवत्सा बनकर दु:ख उठा रही है अर्थात् उसके पुत्र मर जाते हैं॥ १०॥

अस्य शान्तिमहं वक्ष्ये शृणु देवि प्रयत्नतः।
गृहवित्ताष्टमं भागं पुण्यकार्यं च कारयेत्॥ ११॥

भा० टी०—हे देवि! अब इस पाप की शांति के उपाय को कहता हूँ तुम प्रयत्नपूर्वक से श्रवण करो अपने घर के द्रव्य में से आठवें भाग को पुण्य हेतु दान करके ब्राह्मण को दें॥ ११॥

सूर्यमन्त्रस्य वै जाप्यं वैदिकस्य वरानने!।
आकृष्णेति महामन्त्रः सर्वव्याधिविनाशनः॥ १२॥

भा० टी०—और हे वरानने! सूर्य के मंत्र का जप तथा वैदिक मंत्र का जप तथा सारी प्रकार की व्याधि का नाश करने वाला 'आकृष्णेति' मंत्र का जप करें॥ १२॥

सर्वकामप्रदो देवि मोक्षदो मुक्तिकारणम्।
सूर्यदेवस्य यो भक्तिं कुरुते नियतो नरः॥ १३॥

भा० टी०—हे देवि! मोक्ष को देने वाले सभी कामनाओं को देने वाले मुक्ति के कारण रूप ऐसे मंत्र का जप करने से और प्रतिदिन सावधान होकर सूर्य देवता की भक्ति करने से सब कष्ट दूर होते हैं॥ १३॥

न किञ्चिद्दुर्लभं तस्य पुत्रश्चैव धनं बहु।
ममातीव प्रियो नित्यं सूर्य्यदेवे ह्युपासिते॥ १४॥

भा० टी०—और संसार में ऐसी वस्तु कौन-सी है, जो नहीं मिल सकती है? पुत्र, द्रव्यादि की तो क्या बात है। और महादेव कहते हैं कि जो सूर्यदेव की उपासना करते हैं वे मुझे संसार में अत्यधिक प्रिय हैं॥ १४॥

मद्गणास्तं हि रक्षन्ति यतश्च मत्कला रविः।
कमलं सूज्ज्वलं देवि वंशपात्रं सुशोभनम्॥ १५॥

भा० टी०—और हे देवि! जो सूर्य का उपासना करते हैं, उनकी सदैव रक्षा ये मेरे गण करते हैं क्योंकि सूर्य में मेरी कला है। हे देवि! उज्ज्वल कमल बनवा कर उसको बाँस के सुंदर पात्र पर रखें॥ १५॥

तस्योपरि सुवर्णस्य सूर्य्यं रत्नविभूषितम्।
पलपञ्चमितं देवि मन्त्रेणानेन पूजयेत्॥ १६॥

भा० टी०—फिर हे देवि! उस के ऊपर पाँच पल प्रमाण वाले सुवर्ण की मूर्ति बनाकर रत्नों से भूषित कर इस मंत्र के द्वारा पूजन करें॥ १६॥

ॐ नमः सूर्याय देवाय भद्राय भद्ररूपिणे।
पूर्वजन्मकृतं सर्वं मम पापं व्यपोहतु॥ १७॥

भा० टी०—'ॐ नमः सूर्याय देवाय भद्राय भद्ररूपिणे'—ऐसे उच्चारण करके यह कहें (हे कल्याण रूप सूर्य भगवान्!) कि पूर्वजन्मकृत मेरे पापों को नष्ट करो॥१७॥

प्रतिमां पात्रसंयुक्तां ब्राह्मणाय च दापयेत्।
ततो गां कपिलां शुभ्रां सवत्सां स्वर्णभूषिताम्॥ १८॥

भा० टी०—और पत्र-पुष्पादियुक्त उस मूर्ति को ब्राह्मण को दान दें, फिर कपिला शुद्धा सवत्सा गौ को स्वर्ण से भूषित कर ब्राह्मण को दान कर दें॥ १८॥

ब्राह्मणाय ततो दद्यात् पट्टवस्त्रेण संयुताम्।
सप्तमी रविसंयुक्तोपोष्टव्याङ्गनया सह॥ १९॥

भा० टी०—और पट्टवस्त्रादि से सुशोभित की हुई गौ को संकल्प करके रविवार युक्त सप्तमी तिथि के दिन स्त्री अपनी के साथ उपवास करके ब्राह्मण को दान करें॥१९॥

पूर्वजन्मकृतं पापं नश्यत्येवं कृते प्रिये!
रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति पुत्रलाभो भवेद्ध्रुवम्॥ २०॥

भा० टी०—हे प्रिये! ऐसा करने से सभी प्रकार के रोग समाप्त होते हैं और निश्चय ही पुत्र का लाभ होता है॥ २०॥

काकवन्ध्या लभेत्पुत्रं मृतवत्सा च पुत्रिणी।

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे अनुराधानक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नामैकोनसप्ततितमोऽध्यायः॥ ६९॥

भा० टी०—काकवन्ध्या स्त्री तथा मृतवत्सा स्त्री भी पुनः पुत्र को प्राप्त कर सकती है॥ ६९॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहर० अनुराधान० द्वितीयच० प्रायश्चित्तकथनंनामैकोनसप्ततितमोऽध्यायः॥ ६९॥

॥ ७० ॥

अनुराधानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

सुकर्मनगरं ख्यातं सौराष्ट्रविषये शुभे!
तत्रातिष्ठत्खलो विप्रो ब्रह्मकर्मविवर्जितः ॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे देवि! सौराष्ट्रनामक शुभ देश में सुकर्म नाम वाला विख्यात पुर था, वहाँ एक खल अर्थात् दुष्ट, ब्रह्म कर्म से रहित विप्र रहता था ॥१ ॥

विक्रेता सर्ववस्तूनां गोवाजिकरिणां तथा।
राजमृत्युं समालोक्य ग्रामदाहस्तथा कृतः ॥ २ ॥

भा० टी०—वह सब प्रकार की वस्तुओं को बेचा करता था तथा गौ, अश्व अर्थात् घोड़ा, हस्ती (हाथी) आदि को भी बेचा करता था, उसने राजा की मृत्यु को देख कर ग्राम का दाह कर दिया ॥ २ ॥

ब्राह्मणाः बहवस्तत्र ब्राह्मण्यश्च तथा शिवे!
मृता ग्रामस्य वै दाहे बह्वो गावो मृताः खलु ॥ ३ ॥

भा० टी०—हे शिवे! वहाँ बहुत से ब्राह्मण और ब्राह्मणियाँ उस ग्राम में दाह होने से मर गये और बहुत सी गायें भी मर गयीं ॥ ३ ॥

ततो बहुतिथे काले मृतः सोऽपि द्विजाधमः।
ततस्तु यमदूतेन नरके घोरकर्दमे ॥ ४ ॥

भा० टी०—फिर बहुत सा काल व्यतीत होने पर उस अधम ब्राह्मण की भी मृत्यु हुई, फिर उसे यमराज के दूतों ने घोर कर्दम नाम नरक में डाला ॥ ४ ॥

यमाज्ञया च निक्षिप्तः कष्टं भुक्तं मुहुर्मुहुः।
नरकान्निर्गतो देवि गजयोनिं ततोऽलभत् ॥ ५ ॥

भा० टी०—यम की आज्ञा पाकर यम के दूतों द्वारा उसे नरक में डाल दिया गया, वहाँ बार-बार कष्टों को भोग नरक से निकलकर हस्ती की योनि को प्राप्त हुआ ॥५ ॥

कच्छपत्वं ततो यातः काकयोनिस्ततोऽभवत्।
मानुषत्वं ततो यातः कुले महति शोभने॥ ६॥

भा० टी०—हे शोभने! फिर कछुए की योनि को प्राप्त हुए, वहाँ से फिर काक (कौए) की योनि को प्राप्त हुआ, फिर उत्तम कुल में मनुष्य योनि को प्राप्त हो गया॥६॥

सर्वसंपत्तिसंयुक्तो वंशस्तस्य न जायते।
बहुकन्यासमायुक्तो रोगयुक्तो भवेन्नरः॥ ७॥

भा० टी०—और सब संपत्ति से युक्त होकर भी, वह वंश से हीन हो गया और बहुत सी कन्याएँ हो गयीं तथा रोग से युक्त हो गया॥ ७॥

भार्या तस्य ज्वरग्रस्ता मासे वर्षे भवेज्ज्वरः।
अतः शान्तिं प्रवक्ष्यामि यतः खलु सुखी भवेत्॥ ८॥

भा० टी०—और उसकी भार्या ज्वर से पीड़ित प्रति महीने और वर्ष में ज्वर की पीड़ा को प्राप्त होती है, अब इस पाप की शांति को कहता हूँ जिससे निश्चय ही सुख की प्राप्ति होती है॥ ८॥

चतुर्भागं गृहद्रव्यं ब्राह्मणाय समर्पयेत्।
प्रयागे मकरे मासि पत्न्या सह वरानने!॥ ९॥

भा० टी०—हे वरानने! अपने घर के द्रव्य में से चौथा भाग ब्राह्मण को दान करें और माघ के महीने में प्रयाग में स्त्रीसहित स्नान करें॥ ९॥

स्नानं तु नियतः कुर्यात्सप्ताहं च ततः शिवे!
हेमदानं ततः कुर्य्याद्भूमिदानं च पार्वति!॥ १०॥

भा० टी०—हे शिवे! हे पार्वति! सात दिन तक नियम से वहाँ स्नान कर सुवर्ण तथा भूमि का दान करें॥ १०॥

गायत्रीजातवेदाभ्यां त्र्यम्बकेन तदा जपम्।
दशायुतप्रमाणेन हवनं मार्जनं तथा॥ ११॥

भा० टी०—गायत्री, जातवेद और त्र्यम्बकं०—इन मंत्रों का एक लाख तक जप करायें तथा उससे दशांश हवन तथा दशांश तर्पण और मार्जन करायें॥ ११॥

ब्राह्मणान् भोजयेद्भक्त्या पक्वान्नैः पायसेन च।
विप्रेभ्यो दक्षिणां दद्याद्वस्त्ररत्नविभूषिताम्॥ १२॥

भा० टी०—भक्ति पूर्वक ब्राह्मणों को खीर पक्वान्न आदि भोजन करायें रत्न, आभूषण, वस्त्रादि दक्षिणा दान करें॥ १२॥

दशवर्णां ततो दद्याद्धरिवंशश्रुतिस्तथा।
एवं कृते वरारोहे शीघ्रं पुत्रमवाप्नुयात्॥ १३॥

भा० टी०—हे वरारोहे! दश वर्णों वाली गायों का दान, हरिवंश का श्रवण इत्यादि करने से जल्दी ही पुत्र की प्राप्ति होती है॥ १३॥

काकवन्ध्या लभेत्पुत्रं पुनर्देवि न संशयः।
रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति मृतवत्सा लभेत् सुतम्॥ १४॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे अनुराधानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम सप्ततितमोऽध्यायः॥ ७०॥

भा० टी०—हे देवि! काकवन्ध्या भी फिर पुत्र को प्राप्त करती है, इसमें संशय नहीं है और सब प्रकार केरोग क्षय होते हैं मृतवत्सा भी पुत्र को प्राप्त करती है॥ १४॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहर० अनुराधान० तृतीयच० प्रायश्चित्तकथनं नाम सप्ततितमोऽध्यायः॥ ७०॥

॥ ७१ ॥

अनुराधानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच॥

बन्दीजनोऽवसच्चैकः सौराष्ट्रविषये शुभे।
स कविर्भाग्यवान्देवि स्वधर्मनिरतः सदा॥ १॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे देवि! शुभ सौभाग्य से युक्त सौराष्ट्र देश में एक बंदीजन भाग्यवान् कवि था अपने धर्म में सदा रत रहता हुआ वहाँ निवास करता था॥ १॥

तस्य स्त्री सुन्दरी देवि पतिसेवासु तत्परा।
एकस्मिन् दिवसे देवि ब्रह्मचारी समागतः॥ २॥

भा० टी०—हे देवि! उसकी स्त्री सुंदरी, पति-सेवा में परायण रहने वाली भी एक दिन वहाँ एक ब्रह्मचारी आ गया॥ २॥

आतिथ्यकरणे तस्य चासमर्थस्तदा शिवे!
उपोषणं कृतं तेन द्वारे बन्दिजनस्य च॥ ३॥

भा० टी०—हे शिवे! तब उस ब्रह्मचारी के आतिथ्य-सत्कार करने में असमर्थ होने पर फिर उस ब्रह्मचारी ने उस बंदीजन के घर पर व्रत किया॥ ३॥

प्रभाते स वरारोहे शापं दत्त्वा गतस्तु वै।
ततस्तु दैवयोगेन मार्जारी तत्र सूतिका॥ ४॥

भा० टी०—हे वरारोहे! वहाँ से प्रातःकाल उठकर ब्रह्मचारी ने उन को शाप देकर गमन किया और वहाँ एक मार्जारी अर्थात् बिल्ली के बच्चे हो रहे थे॥ ४॥

पञ्च पुत्रा वरारोहे घातितास्तस्य च स्त्रिया।
मार्जारी च तदा देवि क्षुधार्ता च तदा मृता॥ ५॥

भा० टी०—उस बिल्ली के पाँच बच्चे थे, हे वरारोहे! उस बंदीजन की स्त्री ने वे बिल्ली के पाँचों बच्चे मार दिये और हे देवि! वह बिल्ली भूख से पीड़ित होकर मृत्यु को प्राप्त हो गयी॥ ५॥

ततो बहुतिथे काले तस्य मृत्युरभूत्पुरा।
पत्नी पतिव्रता तस्य सती जाता च तत्क्षणात्॥ ६॥

भा० टी०—फिर बहुत सा-काल व्यतीत होने पर उस बंदीजन की मृत्यु हुई और उसकी स्त्री पतिव्रता होने के कारण साथ सती हो गयी॥ ६॥

सत्यलोके वरारोहे युगमेकमुवास सः।
पत्न्या सह वरारोहे सौख्यं हि मानसेप्सितम्॥ ७॥

भा० टी०—हे वरारोहे! तब उन्होंने एक युग पर्यंत सत्य लोक का वास किया और पत्नी के साथ वहाँ मनोवांछित सुखों को भोगा॥ ७॥

भुक्तं देवाङ्गनासार्द्धं पुनः पुण्यक्षये सति।
मानुषत्वं ततो लेभे सह पत्न्या वरानने!॥ ८॥

भा० टी०—और हे वरानने! देवांगनाओं के साथ सुख को भोगकर फिर पुण्य क्षीण होने पर स्त्री के सहित मनुष्य योनि को प्राप्त हो गये॥ ८॥

धनधान्यसमायुक्तो वरा भार्या विवाहिता।
पुत्राश्च बहवो जातास्तेषां मृत्युरभूत्किल॥ ९॥

भा० टी०—और धनधान्य से युक्त होकर श्रेष्ठा भार्या उससे विवाही गयी और उसके बहुत से पुत्र हुए उनकी निश्चय ही मृत्यु हो गयी॥ ९॥

सा ज्वेरण समाविग्ना मध्ये तापयता पुनः।
तस्य पापस्य वै शान्तिं शृणु त्वं गिरिजे वरे!॥ १०॥

भा० टी०—हे गिरिजे! हे वरे!! उसकी स्त्री ज्वर से पीडित होती गई और मध्य-मध्य में ताप से युक्त होती रहती है अब उस पाप की शांति को कहता हूँ तुम सुनो॥ १०॥

जातवेदस्य मन्त्रेण लक्षजाप्यं च कारयेत्।
बिडालीप्रतिमां कृत्वा पञ्चबालेन संयुताम्॥ ११॥

भा० टी०—'जात वेदसे'—मंत्र का एक लाख तक जप और पांच पुत्रों सहित बिल्ली की मूर्ति बनवायें॥ ११॥

स्वर्णस्याथ च रौप्यस्य पलपञ्चदशस्यतु।
सवस्त्रां वै तदा दद्याद्ब्राह्मणाय वरानने!॥ १२॥

भा० टी०—हे देवि! सुवर्ण तथा चांदी की १५ पल प्रमाण की वस्त्रादि से युक्त करवाकर के ब्राह्मण को दान कर दें॥ १२॥

गामेकां रक्तवर्णां च तां विप्राय प्रदापयेत्।
अमायां पिण्डदानं च सोमवारे तथा गुरौ॥ १३॥

भा० टी०—और एक लाल वर्ण वाली गौ ब्राह्मण को दान कर दें तथा सोमवार अथवा गुरुवार से युक्त आमावास्या के दिन पिंडदान दें॥ १३॥

व्रतं च रविसप्तम्यां कुर्य्याद्वै भार्यया सह।
ततः पुत्रो भवेद्देवि चिरञ्जीवी तथोत्तमः॥ १४॥

भा० टी०—और हे देवि! आदित्यवासरीय सप्तमी का व्रत करें। ऐसा करने से बहुत काल तक जीने वाला उत्तम पुत्र पैदा होता है॥ १४॥

व्याधिनाशो भवेद्देवि वन्ध्यात्वं च प्रशाम्यति।

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे अनुराधानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं नामैकसप्ततितमोऽध्यायः॥ ७१॥

भा० टी०—हे देवि! इसप्रकार व्याधि का नाश और वन्ध्यापन की शांति होती है।

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वती० अनुराधा० चतुर्थच० प्रायश्चित्तकथनं नामैकसप्ततितमोऽध्यायः॥ ७१॥

॥ ७२ ॥

ज्येष्ठानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

**ब्राह्मणो न्यवसच्चैको महाराष्ट्रपुरे शुभे।
स वेदपाठतत्त्वज्ञो वेदपाठं सदाऽकरोत्॥ १ ॥**

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे शुभे! महाराष्ट्रपुर में एक वेदों में गूढार्थ को जानने वाला ब्राह्मण ॥ १ ॥

**तडागं खानयामास तत्र द्रव्यं च लब्धवान्।
द्रव्यस्यार्थे तदा देवि विग्रहो भ्रातरं प्रति॥ २ ॥**

भा० टी०—हे देवि! उस ब्राह्मण ने एक तालाब को खोदा, वहाँ खोदने से उसको द्रव्य की प्राप्ति हुई और द्रव्य के लिए उसके भाइयों में विग्रह अर्थात् लड़ाई होती गई॥ २॥

**भ्रात्रा तस्य महादेवि द्रव्यार्थं भक्षितं विषम्।
बहुकाले तदा देवि व्ययं सर्वं धनं कृतम्॥ ३ ॥**

भा० टी०—हे देवि! उसके भाई ने द्रव्य के लिए विष को खाया फिर इसने बहुत से काल व्यतीत होने पर वह सब द्रव्य खर्च कर दिया॥ ३॥

**ततश्च पञ्चतां यातो ब्राह्मणश्च सुरेश्वरि!
यमदूतैर्महाघोरैर्नरके देवि कर्दमे॥ ४॥**

भा० टी०—हे सुरेश्वरि! तब वह ब्राह्मण मर गया। हे देवि! यमराज के दूतों ने उसे घोर नरक में डाल दिया॥ ४॥

**षष्टिवर्षसहस्राणि निक्षिप्तश्च यमाज्ञया।
भुक्त्वा नरकजं दुःखं काकयोनिरभूत्पुनः॥ ५॥**

भा० टी०—साठ हजार वर्षों तक उसे नरक में यम की आज्ञा पाकर यमदूतों ने डाल दिया, बाद में फिर काक योनि को प्राप्त हो गया॥ ५॥

पुनर्मानुषयोनिश्च पुत्रकन्याविवर्जितः।
पूर्वजन्मनि भो देवि भ्रात्रंशं नैव दत्तवान्॥ ६॥

भा० टी०—फिर हे देवि! मनुष्य योनि को प्राप्त होकर पुत्र और कन्या से हीन हो गया क्योंकि उसने पूर्व जन्म में भाई के अंश को नहीं दिया॥ ६॥

तेन पापेन भो देवि महारोगसमुद्भवः।
अस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणु त्वं गिरिजे वरे!॥ ७॥

भा० टी०—हे देवि! हे गिरिजे!! उस पाप के महारोग से वह पीडित रही अब उस पाप की शांति को कहता हूँ, तुम सुनो॥ ७॥

गृहवित्ताष्टमैर्भागैः पुण्यकार्यं च कारयेत्।
वापीकूपतडागादिजीर्णोद्धारं प्रयत्नतः॥ ८॥

भा० टी०—अपने घर के द्रव्य में से आठवें भाग को पुण्य दान करें और बावड़ी, कूप, तालाब—इनका जीर्णोद्धार करें॥ ८॥

प्रतिमां कारयेद्देवि स्वर्णं पलदशस्य तु।
भ्रातुश्चित्रं तदा देवि पूजयित्वा यथाविधि॥ ९॥

भा० टी०—हे देवि! दश पल प्रमाण की सुवर्ण की मूर्ति बनवा कर उसकी यथाविधि पूजा करें॥ ९॥

गन्धधूपादिभिर्देवि भूषणैर्विविधैरपि।
गायत्रीलक्षजाप्येन दशांशहवनेन तु॥ १०॥

भा० टी०—हे देवि! गंधधूपादि तथा भूषणों से अनेक प्रकार से पूजन करके ब्राह्मण को दान दें और गायत्री का एक लाख तक जप तथा उसका दशांश हवनादि करायें॥ १०॥

प्रयागे मकरे स्नानं सर्वपापक्षयो भवेत्।
ब्राह्मणाय ततो दद्याद्गां च दद्यात्पयस्विनीम्॥ ११॥

भा० टी०—और मकर में सूर्य आने पर प्रयाग का स्नान इत्यादि करने से सब पाप दूर होते हैं और ब्राह्मण को दूध वाली गौ का तथा उस मूर्ति का दान दें॥ ११॥

भूमिं वृत्तिकरीं दद्यात् पुत्रपौत्रानुयायिनीम्।
अश्वदानं ततो दद्यात् ब्राह्मणान् भोजयेत्ततः॥ १२॥

भा० टी०—तथा जीविका प्रदान करने वाली पुत्र पौत्रादि के लिए कल्याणकारी पृथ्वी (भूमि) का दान दें, घोड़े का दान करें और ब्राह्मणों को भोजन करायें॥ १२॥

एवं कृते वरारोहे पुत्रो भवति नान्यथा।
व्याधिस्तस्य निवर्तेत काकवन्ध्या लभेत्सुतम्॥ १३॥

भा० टी०—हे वरारोहे! ऐसा करने से पुत्र की संतान होती है, यह अन्यथा नहीं है और व्याधि दूर होकर काकवंध्या भी पुत्र को प्राप्त करती है॥ १३॥

मृतवत्सा लभेत्पुत्रं चिरञ्जीविनमुत्तमम्।

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे ज्येष्ठानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम द्विसप्ततितमोऽध्यायः॥ ७२॥

भा० टी०—और मृतवत्सा भी बहुत आयु वाले उत्तम पुत्र को प्राप्त करती है॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां भाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे० ज्येष्ठान० प्रथमच० प्रायश्चित्तकथनं नाम द्विसप्ततितमोऽध्यायः॥ ७२॥

॥ ७३ ॥

ज्येष्ठानक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

पट्टने वै पुरे शुभ्रे लोहकारोऽवसत्पुरा।
गोवर्धनाभिधः पत्नीयुक्तोभूत्परमेश्वरि!॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे परमेश्वरि! पट्टन नाम वाले शुभ्र पुर में एक लोहकार वास करता था, और उसका नाम गोवर्धन था॥ १ ॥

धनधान्यसमायुक्तो धर्मकर्मरतस्तथा।
तस्य पुत्रद्वयं जातं लोहकारस्य पार्वति!॥ २ ॥

भा० टी०—हे पार्वति! धनधान्य से युक्त, अपने धर्म-कर्म में रत तथा उसके दो पुत्र उत्पन्न हुए॥ २ ॥

ज्येष्ठपुत्रश्च भो देवि भार्यया सह तेन वै।
निःसारितो गृहाद्देवि दत्तं तस्मै न किञ्चन॥ ३ ॥

भा० टी०—और हे देवि! उसने बड़े पुत्र को स्त्री सहित घर से निकाल दिया और उसको कुछ भी नहीं दिया॥ ३ ॥

एको गृहे स्थितः पुत्रो द्रव्यं तस्मै प्रदत्तवान्।
लोहकारेण भो देवि स्वभार्या पुत्रसंयुता॥ ४ ॥

भा० टी०—हे देवि! एक पुत्र जो घर में था उसको सब द्रव्य दिया फिर तत्पश्चात् हे देवि! लोहकार ने दूसरे पुत्र को और अपनी भार्य्या का भी त्याग कर दिया॥४॥

त्यक्ता चैव महादेवि गोपालस्य तु कन्यका।
भार्या कृता पुनस्तेन पत्न्यास्त्यागश्च वै कृतः॥ ५ ॥

भा० टी०—हे महादेवि! अपनी भार्य्या का त्याग करके एक गोपाल की कन्या से उसने अपना दूसरा विवाह किया॥ ५ ॥

ततो बहुगते काले लोहकारस्य वै शिवे!
व्याघ्रेण मरणं जातं यमदूतैर्यमाज्ञया॥ ६ ॥

भा० टी०—फिर हे देवि! बहुत-सा समय व्यतीत होने पर उस लोहकार की मृत्यु हो गयी और तत्पश्चात् यम की आज्ञा से ॥ ६ ॥

निक्षिप्तो नरके घोरे कृमिविष्ठादिसंयुतः।
त्रिंशद्वर्षसहस्राणि भुक्त्वा नरकयातनाम्॥ ७॥

भा० टी०—यमदूतों ने उसे कृमिविष्ठादि से युक्त घोर नरक में डाला, वहाँ तीस हजार वर्ष पर्यंत नरक को भोग कर॥ ७॥

नरकान्निर्गतो देवि मानुषत्वं ततोऽलभत्।
पुनः सर्पस्य योनिं च ततो नकुलतां गतः॥ ८॥

भा० टी०—फिर हे देवि! नरक से निकल कर वह मनुष्य योनि को प्राप्त हुआ पुनः सर्प की योनि को प्राप्त होकर नकुल की योनि को प्राप्त हुआ॥ ८॥

मानुषत्वं ततो देवि धनधान्यसमाकुलः।
शूरोऽभूत्किल विज्ञश्च ज्ञानवान् राजवल्लभः॥ ९॥

भा० टी०—तत्पश्चात् हे देवि! धनधान्य से युक्त होकर मनुष्य योनि को प्राप्त हुआ, वह शूरवीर और सब विषयों को जानने वाला ज्ञानवान् और राजा का प्यारा हुआ॥ ९॥

पुरैव यत्कृतं सर्वं तत्प्राप्नोति न संशयः।
पुरैव कार्तिके मासि पौर्णमास्यां सदा शिवे!॥ १०॥

भा० टी०—हे शिवे! पूर्वजन्म में जो किया वह सब फल के रूप में इस जन्म में उसे प्राप्त हुआ। कार्तिक के महीने में पूर्णिमा को जो उसने किया उसके फल को प्राप्त हुआ॥ १०॥

धेनुः प्रदत्ता युवती विधिवन्मम वल्लभे!
तेन दानफलेनेह धनाढ्यत्वं प्रलब्धवान्॥ ११॥

भा० टी०—हे मम वल्लभे! पूर्वजन्म में जो उसने युवा गौ का दान दिया, उसके फल से धनाढ्य जीवन को प्राप्त हुआ॥ ११॥

स्वभार्यां च परित्यज्य परकीयारतः स वै।
अतः पुत्रस्य वै मृत्युः पुनः पुत्रो न जायते॥ १२॥

भा० टी०—और अपनी भार्या का त्यागकर पर भार्या का गमन करने के कारण इसकी पुत्र संतान की मृत्यु होने के बाद फिर पुत्र नहीं हुआ॥ १२॥

कन्यकाजनयित्री च तस्य भार्याभवत्खलु।
पुत्रस्त्रियोश्च कृतवान् त्यागं परकलत्रवान्॥ १३॥

भा० टी०—और उसकी स्त्री कन्या को जन्म देने वाली होती गई और पुत्र सहित भार्या का त्याग कर अन्य स्त्री का ग्रहण करने के कारण॥ १३॥

तत्पापेन महादेवि रोगग्रस्तकलेवरः।
व्याधयश्च समुत्पन्ना दद्रुपामादयस्तदा॥ १४॥

भा० टी०—हे महादेवि! उसका रोगग्रस्त शरीर होता गया और उसके शरीर में दद्रुपामादि रोग उत्पन्न हो गये हैं।॥ १४॥

ख्यातवंशे समुत्पन्नो भूमिभागो न लभ्यते।
अथ शान्तिं प्रवक्ष्यामि पूर्वपापविशुद्धये॥ १५॥

भा० टी०—वह ख्याति वाले वंश में पैदा होकर भी भूमि के भाग को नहीं प्राप्त कर सका अब पूर्व पाप की शुद्धि के लिये उसकी शान्ति को कहता हूँ, तुम ध्यान से सुनो॥ १५॥

एकादशीव्रतं नित्यं षडंशं दानमाचरेत्।
षडङ्गं पाठयेन्नित्यं रुद्रपूजनपूर्वकम्॥ १६॥

भा० टी०—नित्य एकादशी का व्रत करें अपने घर के द्रव्य में से छठे भाग का दान करें षडंग पाठ करायें, रुद्र का पूजन करें—ये सब नियमपूर्वक करें॥ १६॥

हरिवंशश्रुतिं कुर्याच्चण्डीपाठं निरन्तरम्।
तिलधेनुप्रदानं वै ह्यमाश्राद्धं विशेषतः॥ १७॥

भा० टी०—तथा हरिवंश का श्रवण, चंडी-पाठ, निरंतर तिल धेनु का दान, अमावास्या को श्राद्ध—ये भी विशेषता से करने योग्य हैं॥ १७॥

एवं कृते महादेवि पुत्रस्तस्य भविष्यति।
वन्ध्यत्वं प्रशमं याति सर्वरोगक्षयो भवेत्॥ १८॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे ज्येष्ठानक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम त्रिसप्ततितमोऽध्यायः॥ ७३॥

भा० टी०—हे महादेवि! ऐसा करने से उसका पुत्र होगा और वंध्यापन तथा सभी रोग दूर होंगे॥ १८॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वती० ज्येष्ठानक्ष०
द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम त्रिसप्ततितमोऽध्यायः॥ ७३॥

॥ ७४ ॥

ज्येष्ठानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

वीजापुरमिति ख्यातं पुरं देवि मनोहरम्।
न्यवसन् बहवो वर्णा ब्राह्मणाश्च वणिग्जनाः ॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे देवि! वीजापुर नाम वाले एक प्रसिद्ध और सुंदर नगर में बहुत से जन वास करते थे वहाँ ब्राह्मण और बनिये भी रहते थे॥ १ ॥

तन्मध्ये शूद्र एको हि ताम्बूलं च करोति सः।
सुरापी च स वै नित्यं ताम्बूलविक्रयी शिवे॥ २॥

भा० टी०—और हे शिवे! उनके मध्य में एक शूद्र दारू का पान करने वाला और तांबूलार्थ पानों को बेचा करता था॥ २॥

तस्य पुत्रद्वयं जातं धनं च बहु संचितम्।
ततस्तु दैवयोगेन महाधनमदेन च॥ ३॥

भा० टी०—हे वरानने! उसके दो पुत्र हुए उसने बहुत धन संचय किया और वह महाधन से युक्त हुआ॥ ३॥

ज्येष्ठपुत्रस्य हननं कृतं तेन वरानने!
स्वभार्यार्थे तदा नीता पत्नीं तस्य तु तेन हि॥ ४॥

भा० टी०—अपने-अपने बड़े पुत्र का हनन किया, उस पुत्र की स्त्री को अपनी भार्या बनाने के लिये अपने घर में लाया॥ ४॥

पुत्राभ्यां चाभवद्वैरं पत्न्या सह विशेषतः।
प्रत्यहं भजते सोऽपि पुत्रपत्नीं तथाऽधमः॥ ५॥

भा० टी०—और उस शूद्र के पुत्रों के साथ तथा उसकी स्त्री के साथ उसका विशेष वैर होता गया। वह अधम पुत्र की पत्नी को भोगता गया॥ ५॥

एवं बहुदिने जाते तस्य मृत्युरभूच्छिवे!
ततो वै नरके घोरे यमदूतैर्यमाज्ञया॥ ६॥

भा० टी०—हे शिवे! ऐसे बहुत-से दिन व्यतीत होने पर उसकी मृत्यु हुई फिर यम की आज्ञा पाकर उसे यमराज के दूतों ने घोर नरक में डाला॥ ६॥

निक्षिप्तो वै ततो देवि षष्टिवर्षसहस्त्रकम्।
कृमिभिर्घोरवक्त्रैश्च भुक्त्वा नरकयातनाम्॥ ७॥

भा० टी०—फिर हे देवि! साठ हजार वर्षों तक नरक में रहकर उसने विकराल कीड़ों के द्वारा दिये जाने वाले दुःखों को भोगा॥ ७॥

नरकान्निर्गतो देवि शुनो योनिं ततोऽलभत्।
ततो वृषभयोनिं च मानुषत्वं ततो गतः॥ ८॥

भा० टी०—वहाँ से निकल कर श्वान योनि को प्राप्त हुआ, फिर बैल की योनि को प्राप्त होकर मनुष्य योनि को प्राप्त हुआ॥ ८॥

पूर्वजन्मनि भो देवि दशवर्णा ददौ बहु।
तत्फलेनेह भो देवि धनधान्ययुतस्तदा॥ ९॥

भा० टी०—हे देवि! पहले जन्म में उसने दश वर्णों वाली गौवों का दान दिया था, उस फल से वह धनधान्य से युक्त है॥ ९॥

पुत्रपत्न्यां च भोगार्थे पुत्रस्यैव वधः कृतः।
तत्पापफलतो देवि ह्यपुत्रश्च ज्वरी तथा॥ १०॥

भा० टी०—पुत्र की पत्नी से मैथुन के लिए पुत्र का वध करने से उस पाप के फल के कारण इसके पुत्र नहीं हैं और शरीर में ज्वर हो गया है॥ १०॥

व्याधिश्च बहुधा तस्य चाङ्गे च महती तथा।
महाचिन्तां समापन्नो ह्यतः शान्तिं शृणु प्रिये!॥ ११॥

भा० टी०—हे प्रिये! उसको बहुत सी व्याधियाँ तथा अंग में पीड़ा होकर वह महाचिंता से युक्त होता गया अब उसकी शांति को कहता हूँ तुम सुनो॥ ११॥

स्ववित्तस्य तृतीयांशं प्रगृह्य हरवल्लभे!
कूपं च खनयेत्कान्ते तडागं जीर्णमुद्धरेत्॥ १२॥

भा० टी०—हे कांते! हे हरवल्लभे! अपने घर के द्रव्य में से तीसरा भाग लेकर कूप बनवायें और पुराने तलाब का जीर्णोद्धार करें॥ १२॥

पौर्णमासीव्रतं देवि सकलत्रः समाचरेत्।
शिवस्य पूजनं लक्षं ब्राह्मणेभ्यश्च कारयेत्॥ १३॥

भा० टी०—हे देवि! पौर्णिमा के व्रत को स्त्री सहित करें और एक लाख बार ब्राह्मणों से शिवजी का पूजन करायें॥ १३॥

कृष्णां च गां च वृषभं ब्राह्मणाय प्रदापयेत्।
गायत्रीमूलमन्त्रेण तथा लक्षप्रमाणतः॥ १४॥

भा० टी०—कृष्णा गौ तथा बैल का दान करें और एक लाख बार गायत्री के मूल मंत्र का जप करवायें॥ १४॥

जपं वै कारयेत्तत्र हवनं तद्दशांशतः।
मार्जनं तर्पणं देवि दशांशं स च कारयेत्॥ १५॥

भा० टी०—हे देवि! उसके दशांश का हवन तथा मार्जन तथा दशांश तर्पण करवायें॥ १५॥

पुत्रस्य प्रतिमां तद्वत्स्वर्णवस्त्रसमन्विताम्।
पलपञ्चदशस्यैव निर्मितां रत्नभूषिताम्॥ १६॥

भा० टी०—पुत्र की सुवर्ण की एक मूर्ति बनवायें, उसको पंदरह पल प्रमाण सुवर्ण की बनवा कर वस्त्र तथा पंचरत्न से युक्त कर ब्राह्मण को दान कर दें॥ १६॥

पूजां कृत्वा विधानेन ब्राह्मणाय प्रदापयेत्।
एवं कृते न संदेहः शीघ्रं पुत्रमवाप्नुयात्॥ १७॥

भा० टी०—इसप्रकार विधि-विधान से पूजा कर ब्राह्मण को दान दें, इससे शीघ्र ही पुत्र की प्राप्ति हो, इसमें संशय नहीं॥ १७॥

व्याधिश्च प्रशमं यायात् काकवन्ध्या लभेत्सुतम्।
मृतवत्सा लभेत्पुत्रं चिरञ्जीविनमुत्तमम्॥ १८॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे ज्येष्ठानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम चतुःसप्ततितमोऽध्यायः॥ ७४॥

भा० टी०—इससे व्याधियाँ सारी दूर हों काकवन्ध्या भी पुत्र को प्राप्त होती है और मृतवत्सा भी उत्तम और बहुत काल तक जीने वाले पुत्र को प्राप्त होती है॥ १८॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां ज्येष्ठानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम चतुःसप्ततितमोऽध्यायः॥ ७४॥

॥ ७५ ॥

ज्येष्ठानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

चतुर्भुजाभिधे क्षेत्रे वेणीपश्चिमतः शिवे!
पट्टकारोऽवसद्देवि लक्ष्मणेति च संज्ञकः ॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे शिवे! वेणी नदी से पश्चिम की तरफ चुतुर्भुज नामक क्षेत्र में एक पट्ट वस्त्र बनाने वाला लक्ष्मण नामक व्यक्ति निवास करता था ॥ १ ॥

तस्य पत्नी विशालाक्षि परपुंसि रता सदा।
पुत्राश्च बहवो जाता धनं च बहु संचितम् ॥ २ ॥

भा० टी०—हे विशालाक्षि! उसकी स्त्री सर्वदा पर-पुरुषों से रमण किया करती थी और उसके बहुत से पुत्र होते गये, उसने बहुत-सा धन भी संचित किया ॥ २ ॥

क्रयविक्रयधर्मेण व्ययकारी दिने दिने।
तस्य गेहेऽकरोद्वासं चटका नाम पक्षिणी ॥ ३ ॥

भा० टी०—इसनप्रकार क्रय-विक्रय का व्यापार करने से प्रतिदिन खर्च करता गया और उसके घर में एक चिड़िया वास करती थी ॥ ३ ॥

एकदा समये देवि चाण्डान्साऽसूत तत्र वै।
बहून्वै पोषितांश्चाण्डान्सपक्षान्कृतवांस्तथा ॥ ४ ॥

भा० टी०—एक समय उस चिड़िया ने वहाँ बहुत से अंडों को पैदा किया, उन में से बहुत से अंडों को पालती गई और वे पंखों वाले होते गये ॥ ४ ॥

फलं गृह्य सदा पक्षी मध्याह्ने बालकान्प्रति।
भोजनं प्रददौ नित्यं स्वकुलाय तदा शिवे! ॥ ५ ॥

भा० टी०—हे शिवे! वह चिड़िया यहाँ से वहाँ उड़ती हुई फल को ग्रहण कर उन पक्षी-बालकों को मध्याह्न समय में अपने कुल को बढ़ाने के लिए नित्य भोजन देती थी ॥ ५ ॥

ततस्तु दैवयोगेन पट्टकारस्तु तद्‌गृहे।
भोजनार्थं गतो देवि पत्नी चाऽन्नं तदाप्यदात्॥ ६॥

भा० टी०—हे देवि! वहाँ दैवयोग से पट्ट वस्त्र बनाने वाला अपने घर में भोजन के लिए आया और उसकी भार्या उसके लिए अन्न लायी॥ ६॥

भुक्तं च विविधं चान्नं तत्क्षणे पक्षिबालकाः।
विष्ठां चक्रुस्तथा दृष्ट्वा पट्टकारो रुषा खलु॥ ७॥

भा० टी०—तब पट्टकार ने अनेक प्रकार के भोजन किये। उसी समय वे पक्षी उस पर वीट करने लगे, तब पट्टकार विष्ठा-कर्म को देख कर क्रोध से युक्त हुआ॥ ७॥

कुलं तस्याकरोन्नष्टं बालानां हननेन सः।
एवं बहुगते काले पट्टकारस्य सुव्रते!॥ ८॥

भा० टी०—हे सुव्रते! उसने उन पक्षियों के सब बालकों को नष्ट कर दिया, फिर बहुत सा समय व्यतीत होने पर पट्टकार॥ ८॥

गङ्गायां मरणं जातं भार्यया सहितस्य वै।
स्वर्गवासोऽभवद्देवि पट्टकारस्य सुव्रते!॥ ९॥

भा० टी०— उसका भार्य्या सहित गंगाजी में मरण हो गया, तब हे देवि! हे सुव्रते! उसको स्वर्ग का वास मिला॥ ९॥

सप्ततिर्वै सहस्राणि स्वयं भुक्त्वा फलं बहु।
पुनः पुण्यक्षये जाते स्वर्गभ्रष्टो यदाभवत्॥ १०॥

भा० टी०—सत्तर हजार वर्षों तक स्वर्ग के सुखों को भोग कर पुण्य क्षीण होने पर स्वर्ग से भ्रष्ट अर्थात् पतित हो गया॥ १०॥

मनुष्यश्चाऽभवद्देवि गङ्गागण्डकिमध्ययोः।
धनधान्यसमायुक्तो विवाहमकरोद्यदा॥ ११॥

भा० टी०—हे देवि! तदनन्तर गंगा और गंडकी के मध्य में धनधान्य से युक्त मनुष्य यानि में उसका जन्म हुआ और जब उसने विवाह किया तो॥ ११॥

पूर्वजन्मस्थिता भार्या सा तस्य गृहमेधिनी।
प्रेष्ययुक्ताऽभवत्सा तु गर्भस्य पतनं मुहुः॥ १२॥

भा० टी०—तब पूर्व जन्म में जो उसकी स्त्री थी, वही उसकी भार्या हो गयी तब वह उसकी स्त्री गर्भ से युक्त होकर भी उसके गर्भ का पतन होता है॥ १२॥

कन्यका नैव जायन्ते पुत्रस्यैव तु का कथा।
ज्वरयुक्ता सदा नारी स्वशरीरेऽभवत्खलु॥ १३॥

भा० टी०— उसकी कन्या भी पैदा नहीं होती पुत्र की तो क्या बात है और उसका शरीर ज्वर से युक्त रहता है॥ १३॥

सुखं न लभते क्वापि दुःखं याति दिने दिने।
अस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणु सर्वं वरानने!॥ १४॥

भा० टी०—और हे वरानने! कहीं भी उन को सुख की प्राप्ति नहीं होती है और प्रतिदिन दु:खी होते रहते हैं अब इसकी शांति को कहता हूँ तुम सुनो॥ १४॥

चन्द्रार्कयोर्मन्त्रजपं गायत्रीजपमाचरेत्।
लक्षमेकं वरारोहे पूर्वपापविशुद्धये॥ १५॥

भा० टी०—चंद्रमा और सूर्य का जप तथा एक लाख गायत्री का जप, पूर्वपाप की शुद्धि के लिये इसप्रकार करते रहें॥ १५॥

गृहवित्ताष्टमं भागं पुण्यकार्यं च कारयेत्।
कपिलां गां सवत्सां च ब्राह्मणाय प्रदापयेत्॥ १६॥

भा० टी०—अपने घर के द्रव्य में से आठवें भाग को पुण्य हेतु दान करें और बछड़ा से युक्त कपिला गौ ब्राह्मण को दान करें ॥ १६॥

दशवर्णास्ततो दद्याद्ब्राह्मणान्भोजयेत्ततः।
चटकस्याकृतिं कृत्वा सार्भकस्य वरानने!॥ १७॥

भा० टी०—हे वरानने! दश वर्णों वाली गायों का दान देकर ब्राह्मणों को भोजन करायें और बच्चों सहित चिड़िया की आकृति बनायें॥ १७॥

रौप्यस्य ताम्रस्वर्णस्य पञ्चविंशपलस्य तु।
ब्राह्मणाय ततो दद्याद्भूमिदानं विशेषतः॥ १८॥

भा० टी०—रूपा, तांबा, स्वर्ण—इनकी पच्चीस पल प्रमाण की मूर्ति बनाकर (संकल्प कर) ब्राह्मण को दें और विशेषकर भूमि का दान दें॥ १८॥

हरिवंशश्रुतिं कुर्याद्भार्यया सहितस्तु वै।
हवनं तर्पणं कुर्यान्मार्जनं तु ततः परम्॥ १९॥

भा० टी०—भार्या सहित हरिवंश का श्रवण करें और तत्पश्चात् हवन, तर्पण, मार्जन इत्यादि करायें॥ १८॥

जातवेदेति मन्त्रेण दशायुतजपं तथा।
गोपालमन्त्रजपनात्पुत्रलाभो भवेदनु॥ २०॥

भा० टी०—और 'जातवेद०' मंत्र का दश हजार तक जप तथा गोपाल मंत्र का जप कराने से निश्चित रूप से पुत्र की प्राप्ति होती है॥ २०॥

रोगनाशो भवेद्देवि काकवन्ध्या लभेत्सुतम्।

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे ज्येष्ठानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम पञ्चसप्ततितमोऽध्यायः॥ ७५॥

भा० टी०—हे देवि! रोग का नाश होकर काकवंध्या भी पुत्र को प्राप्त करती है।

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे ज्येष्ठानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम पञ्चसप्ततितमोऽध्यायः॥ ७५॥

॥ ७६ ॥

मूलनक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

अयोध्यानगरे देवि कायस्थोऽवसदद्रिजे!।
रामदास इति ख्यातस्तस्य भार्या तु देविका॥ १॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे देवि! हे पार्वति!! अयोध्या नगर में एक कायस्थ वास करता था और वह रामदास नाम से विख्यात था, देविका नाम वाली उसकी पत्नी थी॥ १॥

विष्णुभक्तिरतो नित्यं ब्राह्मणस्य च सेवकः।
भार्या पतिव्रता तस्य पतिसेवासु तत्परा॥ २॥

भा० टी०—नित्य विष्णु की भक्ति में रत रहता था और वह ब्राह्मणों का सम्मान करता था उसकी भार्या पतिव्रता थी, वह भी पति की सेवा में तत्पर रहती थी॥ २॥

भाग्यवान् सर्ववस्तूनां विक्रेता गजवाजिनाम्।
तस्य सखाऽभवद्विप्रो ब्राह्मणो वेदपारगः॥ ३॥

भा० टी०—वह भाग्यवान् था, विभिन्न वस्तुओं को तथा हाथी, घोड़ों को बेचने वाला था उसका मित्र एक विप्र वेद पाठी ब्राह्मण बन गया॥ ३॥

आगतो वै गृहे तस्य प्रेम्णा मित्रस्य भामिनि!
चातुर्मास्ये स्थितस्तत्र स्वर्णं शतपलं तदा॥ ४॥

भा० टी०—हे भामिनि! वह विप्र चातुर्मास्य में प्रेम युक्त होकर उस कायस्थ के घर में आकर रहने लगा और सौ पल सुवर्ण, अर्थात् चार सौ तोले सुवर्ण उसके पास था॥ ४॥

कायस्थस्य गृहे तत्तु स्थापितं ब्राह्मणेन वै।
वाराणस्यां गतो देवि स्नानार्थं स द्विजोत्तमः॥ ५॥

भा० टी०—वह ब्राह्मण अपना सारा धन कायस्थ के घर में स्थापित करने के पश्चात् हे देवि! काशीजी में स्नान करने के लिए चला गया॥ ५॥

शरीरं त्यक्तवाँस्तत्र ब्रह्मचारी द्विजस्तदा।
ततो बहुगते काले कायस्थस्य दरिद्रता॥ ६॥

भा० टी०—वहाँ उस ब्रह्मचारी ने शरीर को त्याग दिया तब बहुत-सा काल व्यतीत होने पर कायस्थ दरिद्री होता गया॥ ६॥

तद्धनं ब्राह्मणस्यैव भुक्तं तेन वरानने!।
कालव्यालस्य कवलः कायस्थः कामिनीयुतः॥ ७॥

भा० टी०—हे वरानने! उस विप्र का धन उस कायस्थ ने भोगा, फिर काल रूपी सर्प का ग्रास बनता हुआ कामिनी सहित वह कायस्थ॥ ७॥

अयोध्यायामभूद्देवि तयोः स्वर्गो ह्यजायत।
नवत्यब्दसहस्राणि ब्रह्मलोके वरानने!॥ ८॥

भा० टी०—हे वरानने! अयोध्या में तब उन दोनों का स्वर्गवास हो गया, फिर वहाँ नौ हजार वर्षों तक ब्रह्मलोक का वास उन दोनों ने किया॥ ८॥

भुक्तं सौख्यमनेकं तु देवानामपि दुर्लभम्।
ततः पुण्यक्षये जाते मर्त्यलोके सुरेश्वरि!॥ ९॥

भा० टी०—हे सुरेश्वरि! देवतों को भी दुर्लभ ऐसे भोगों को वहाँ भोग कर पुण्य क्षीण होने पर, मर्त्यलोक में उसका जन्म हुआ॥ ९॥

तत्पापेनाऽभवद्देवि कन्यापुत्रप्ररोधनम्।
अस्य पापस्य वै शान्तिं शृणु त्वं परमेश्वरि!॥ १०॥

भा० टी०—हे देवि! उस पाप के प्रभाव से उसके कन्या और पुत्र का अवरोध होता गया उस पाप की शांति को कहता हूँ तु सुनो॥ १०॥

प्रायश्चित्तं सुरश्रेष्ठे पूर्वजन्मसमुद्भवम्।
गृहवित्तषडंशेन ततो दानं प्रकल्पयेत्॥ ११॥

भा० टी०—हे सुरश्रेष्ठे! पूर्वजन्म से प्राप्त कर्मफल के प्रायश्चित्त के लिये अपने घर के द्रव्य के छठे भाग को दान करें॥ ११॥

गायत्रीत्र्यम्बकाभ्यां च जातवेदेन चानघे!
जपं वै कारयेत्कान्ते प्रतिमन्त्रं दशायुतम्॥ १२॥

भा० टी०—हे अनघे! गायत्री और त्र्यंबक० तथा जातवेद०—इन मंत्रों का जप करायें प्रति मंत्र का जप एक लाख तक करायें॥ १२॥

ततो होमं दशांशेन तर्पणं मार्जनं तथा।
पलैर्दशमितैर्हेमैर्ब्राह्मणस्य तदाकृतिम्॥ १३॥

भा० टी०—फिर दशांश हवन, दशांश तर्पण तथा दशांश मार्जन करायें और उस ब्राह्मण की दश पल की सुवर्ण की मूर्ति बनवायें॥ १३॥

पूजयित्वा यथान्यायं ब्राह्मणाय ततो ददेत्।
ततो गां कपिलां दद्यात् स्वर्णवस्त्रविभूषिताम्॥ १४॥

भा० टी०—यथाविधि उसका पूजन कर ब्राह्मण को दान करें और वैसे ही वस्त्र, स्वर्णादि से युक्त कर कपिला गौ का दान करें॥ १४॥

प्रतिवर्षं ततो देवि दशवर्णां ददेत्पुनः।
एवं कृते न संदेहो वंशे ह्यस्य भवेत्खलु॥ १५॥

भा० टी०—और हे देवि! प्रति वर्ष दश वर्णों वाली गायों का दान करें ऐसा करने से वंश-वृद्धि निश्चय रूप से होती है॥ १५॥

रोगः शरीरजन्यो यस्तस्य नाशः प्रजायते।
काकवन्ध्या लभेत्पुत्रं मृतवत्सा ततः प्रिये!॥ १६॥

भा० टी०—शरीर जन्यरोग का नाश होता है काकवन्ध्या तथा मृतवत्सा भी पुत्र को निश्चय रूप से प्राप्त करती हैं॥ १६॥

लभेत सुसुतं चैव नात्र कार्या विचारणा।

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे मूलनक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम षट्सप्ततितमोऽध्यायः॥ ७६॥

भा० टी०—और अच्छे गुणों से युक्त सुन्दर पुत्र को प्राप्त करती हैं इसमें संशय नहीं है॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे मूलनक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम षट्सप्ततितमोऽध्यायः॥ ७६॥

॥ ७७ ॥

मूलनक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

पश्चिमस्यामयोध्याया योजनानां त्रयोपरि।
राघवस्य पुरे देवि न्यवसन्बहवो जनाः ॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे देवि! अयोध्यापुरी से पश्चिम की तरफ तीन योजन पर राघवपुरी में बहुत से जन निवास करते थे॥ १ ॥

तन्मध्ये ब्राह्मणो ह्येको योगशर्माद्रिनन्दिनि!
तस्य पत्नी समाख्याता गुणज्ञा परमा शुभा॥ २ ॥

भा० टी०—हे अद्रिसुते! उनके मध्य में एक योगशर्मा नामक ब्राह्मण रहता था और उसकी परमा नामक स्त्री सद्‌गुणों से युक्त और शुभ कर्म करने वाली थी॥२॥

तत्र वासोऽभवद्देवि ज्ञानिनस्तस्य कामिनि!
स पुरोधा महादेवि धनाढ्यः कृपणस्तथा॥ ३ ॥

भा० टी०—हे देवि! हे महादेवि! वहाँ वह ज्ञानवान् पुरोहित-वृत्तिवाला धनाढ्य होता गया तथा कृपणता से युक्त होता गया॥ ३ ॥

प्रतिग्रहेण भो देवि व्ययकारी दिने दिने।
तस्य भ्राता कनिष्ठश्च व्यापारकरणे रतः ॥ ४ ॥

भा० टी०—हे देवि! प्रतिदिन वह प्रतिग्रह से युक्त होता गया कंजूसी से खर्च किया करता था उसका छोटा भाई व्यापार में ही रत रहता था॥ ४ ॥

उभौ द्वौ ब्राह्मणौ देवि शान्तिमन्तौ परस्परम्।
ततो बहुगते काले वैरं जातं तदा शिवे!॥ ५ ॥

भा० टी०—हे देवि! हे शिवे!! वे दोनों ब्राह्मण परस्पर शांति से रहते थे, तब बहुत सा काल व्यतीत होने पर दोनों का आपस में वैरभाव हो गया॥ ५ ॥

स्वधनस्य विभागार्थं युद्धं जातं सुदारुणम्।
तदुद्देशेन भो देवि मृतो भ्राता कनिष्ठकः॥ ६॥

भा० टी०—हे देवि! अपने धन के विभाग के कारण दोनों का परस्पर दारुण युद्ध हो गया और उसके कारण से छोटा भाई मर गया॥ ६॥

तद्धनं गृह्य वै स्वर्णं सर्वं पुत्राय दत्तवान्।
दानं नैव कृतं तेन ततो वै मरणं खलु॥ ७॥

भा० टी०—फिर उसने वह सारा सोना और द्रव्य अपने पुत्र को दे दिया और कुछ दान भी नहीं किया फिर बाद में उसकी भी मृत्यु हो गयी॥ ७॥

यमदूतैर्महाघोरेर्निक्षिप्तो रक्तकर्दमे।
बहून्यब्दसहस्राणि भुक्त्वा नरकयातनाम्॥ ८॥

भा० टी०—तब यमराज के दूतों ने उसे महाघोर रक्तकर्दम संज्ञक नरक में डाला, वहाँ बहुत से वर्षों तक उसने दु:खों को भोगा॥ ८॥

नरकान्निर्गतो देवि गर्दभत्वमजायत।
वृकयोनिस्ततो भूत्वा मानुषत्वं ततोऽभवत्॥ ९॥

भा० टी०—हे देवि! नरक से निकलकर गर्दभ योनि को प्राप्त हुआ, फिर वहाँ से भेड़िया की योनि को प्राप्त होकर बाद में मनुष्य योनि को प्राप्त हुआ॥ ९॥

वेदविद्यारतो देवि कन्यावान् पुत्रवर्जितः।
रोगयुक्तो महादेवि सदा भिक्षारतो नरः॥ १०॥

भा० टी०—हे देवि! हे महादेवि!! वेदविद्या से युक्त उसे कन्या की प्राप्ति हुई, किन्तु वह पुत्र की प्राप्ति से रहित है। सदा में भिक्षाटन में रत और रोगी रहता है॥ १०॥

पूर्वपापविशुद्ध्यर्थं प्रायश्चित्तं शृणुष्व मे।
हरिवंशश्रुतिं कुर्याच्छिवपूजनमेव च॥ ११॥

भा० टी०—हे शुभे! पूर्वजन्म में किये हुए पाप की शुद्धि के लिये प्रायश्चित्त को कहता हूँ तुम ध्यान से सुनो, हरिवंश का श्रवण और शिवपूजन॥ ११॥

अमायां पिण्डदानं च गोदानं च विशेषतः।
षडक्षरं तथा मन्त्रं शुद्धं मम सुरेश्वरि!॥ १२॥

भा० टी०—हे सुरेश्वरि! हे वरानने! अमावास्या को पिंड-दान और गौ का दान विशेषता से करें तथा शिव जी के शुद्ध षडक्षर मंत्र का जप करें॥ १२॥

जपं वै कारयेत्सत्यं दशलक्षं वरानने!
होमं वै कारयेत्कान्ते कुण्डे चित्रे वरानने!॥ १३॥

भा० टी०—दश लाख तक जप करवायें और नाना प्रकार के विचित्र कुंडों में होम करवायें॥ १३॥

चतुरस्त्रे वरारोहे तिलधान्यादितण्डुलैः।
प्रतिमां कारयेत्कान्ते भ्रातुः स्वर्णस्य वै शिवे!॥ १४॥

भा० टी०—हे वरानने! तिल, धान्य, तंडुल (चावल) इत्यादि से हवन करायें और हे कान्ते! सुवर्ण की भाई की प्रतिमा बनायें॥ १४॥

पलैर्द्विपञ्चसंख्याकैर्मन्त्रेणानेन पूजयेत्।
ॐ नमः सवित्रे देवाय वेदवेदाङ्गधारिणे॥ १५॥

भा० टी०—बावन पलकी मूर्ति बनाकर इस मंत्र से पूजन करें अब मंत्र को कहता हूँ—ॐ नमः सवित्रे देवाय वेदवेदाङ्गधारिणे अर्थात् वेद-वेदाङ्क को धारण करने वाले सूर्य देव को नमस्कार है।॥ १५॥

पूर्वजन्मकृतं सर्वं मम पापं व्यपोहतु।
अज्ञानाद्वा प्रमादाद्वा भ्रातुरंशापहारतः॥ १६॥

भा० टी०—इस प्रकार उच्चारण कर यह कहें कि पूर्व जन्म में मेरे द्वारा किये गये सारे पाप दूर हों अज्ञान से अथवा जान-बूझकर मैंने भाई के अंश का भक्षण किया इस पाप से मुझे बचाओं॥ १६॥

त्वदर्थं गौर्मया दत्ता सूर्यदेवाय ते नमः।
प्रतिमां पूजयित्वा तु ब्राह्मणाय ददेत सः॥ १७॥

भा० टी०—तुम्हारे लिए मैंने श्रेष्ठ गौ का दान किया। सूर्य देव! तुम्हारे लिए नमस्कार है। इस प्रकार सूर्य की प्रार्थना कर गौ का दान करें। फिर प्रतिमा का पूजन कर ब्राह्मण को दें॥ १७॥

एवं कृते विधाने च शीघ्रं पुत्रमवाप्नुयात्।
काकवन्ध्या पुनः पुत्रजनयित्री भवेद्ध्रुवम्॥ १८॥

भा० टी०—इस प्रकार से विधिपूर्वक करने से शीघ्र ही पुत्र की प्राप्ति होती है और काक-वन्ध्या भी फिर से श्रेष्ठपुत्र को पैदा करने वाली बन जाती है॥ १८॥

व्याधयो नाशमायान्ति तूलराशिर्यथाऽबले!। १९ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे मूलनक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम सप्तसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७७ ॥

भा० टी०—सभी व्याधियाँ नाश को प्राप्त होती हैं जैसे कि हे अबले! अग्नि में रुई का समूह शीघ्र ही नष्ट हो जाता है इसी प्रकार सब पाप नष्ट हो जाते हैं ॥ १९ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे मूलन० द्वि० प्रायश्चित्तकथनं नाम सप्तसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७७ ॥

॥ ७८ ॥

मूलनक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

शरय्वाश्चोत्तरे कूले मङ्गलं नाम वै पुरम्।
तत्र क्षत्र्यवसच्चैको मद्यमांसस्य भोगकृत्॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—शरयू नदी के उत्तर किनारे पर मंगल नाम वाला एक नगर था, वहाँ मदिरा और मांस का सेवन करने वाला भोगी क्षत्रिया निवास करता था॥ १ ॥

भावसेनश्च नाम्ना स तस्य पत्नी मनोहरा।
वेश्याद्यूतरतश्चासौ लुब्धश्चोरेषु सम्मतः॥ २ ॥

भा० टी०—उसका नाम भावसेन था और उसकी पत्नी का नाम था मनोहरा वह वेश्याओं के संग और जुए में रत रहता था तथा लोभ से युक्त होकर चोरी में लगा रहता था॥ २ ॥

प्रत्यहं चौरकर्मेण धनसंचयसंमुखः।
ततो बहुगते काले तस्य मृत्युरभूत्किल॥ ३ ॥

भा० टी०—और सर्वदा चौर-कर्म से द्रव्य-संचय करता था। इस प्रकार बहुत सा काल व्यतीत होने पर सर्प के काटने से उसकी मृत्यु हो गयी॥ ३ ॥

सर्पेणापि महादेवि यमदूतैर्यमाज्ञया।
रौरवे नरके क्षिप्तः षष्टिवर्षसहस्त्रकम्॥ ४ ॥

भा० टी०—हे महादेवि! यमराज की आज्ञा पाकर यमराज के दूतों ने उसे नरक में डाला और वह साठ हजार वर्षों तक नरक में रहा॥ ४ ॥

नरकान्निर्गतो देवि व्याघ्रयोनिं ततोऽलभत्।
मानुषत्वं ततो लेभे कुले महति पूजिते॥ ५ ॥

भा० टी०—फिर हे देवि! नरक से निकलकर वह बाघ की योनि को प्राप्त हुआ फिर वहाँ से अत्यन्त विशाल पूजित उत्तम कुल में मनुष्य योनि में उसका जन्म हुआ॥५ ॥

पूर्वजन्मनि भो देवि दीपदानकृतं यतः।
तत्फलेन महादेवि धनाढ्यत्वमजायत॥ ६॥

भा० टी०—हे देवि! पूर्व जन्म में उसने दीपक का दान किया, उसके फल के प्रभाव से वह इस जन्म में धनाढ्य होता गया॥ ६॥

मद्यपानफलाद्देवि नानाज्वरसमुद्भवः।
वेश्यासुरतसंयुक्तो यतोऽभूत्पूर्वजन्मनि॥ ७॥

भा० टी०—हे देवि! मद्यपान के कर्म फल के कारण नाना प्रकार के ज्वर की उत्पत्ति उसके शरीर में हुई और पूर्व जन्म में वेश्या से रमण करने के कारण॥ ७॥

तेन पापेन भो देवि पुत्राणां मरणं खलु।
मनस्युद्वेगता नित्यं जातो द्यूतरतः पुरा॥ ८॥

भा० टी०—उसके पुत्रों का निश्चय ही मरण हो गया और द्यूत कर्म में रत होने से उसके मन में उद्विग्नता रहती है॥ ८॥

अस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि सर्वपापविशुद्धये।
गृहवित्तषडंशेन पुण्यकार्यं च कारयेत्॥ ९॥

भा० टी०—अब पूर्वजन्म के पाप की शुद्धि के लिये उसकी शांति को कहता हूँ अपने द्रव्य में से छठे भाग का दान करें॥ ९॥

वापीकूपतडागांश्च पथि मध्ये च कारयेत्।
गायत्रीमूलमन्त्रेण लक्षजाप्यं वरानने!॥ १०॥

भा० टी०—हे वरानने! मार्ग के मध्य में बावड़ी, कूप, तालाब बनवायें और गायत्री के मूल मंत्र का एक लाख तक जप करायें॥ १०॥

दशांशं हवनं तद्वत्तर्पणं मार्जनं तथा।
दशवर्णां ततो दद्याद्वृषभेण समन्विताम्॥ ११॥

भा० टी०—और दशांश हवन, दशांश तर्पण तथा दशांश मार्जन करायें और बैल से युक्त दश वर्णों वाली गायों का दान करें॥ ११॥

एवं पापविशुद्धिः स्यान्नात्र कार्या विचारणा।
पुत्रश्च जायते देवि वन्ध्यात्वं च प्रणश्यति॥ १२॥

भा० टी०—इस प्रकार पाप की शुद्धि होती है, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं करना, हे देवि! पुत्र की प्राप्ति निश्चित होती है बाँझपन की भी शांति होती है॥ १२॥

मृतवत्सा लभेत्पुत्रं चिरञ्जीविनमुत्तमम्।
रोगा विनाशमायान्ति व्याधयश्च तथा शिवे!॥ १३॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे मूलनक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नामाऽष्टसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७८ ॥

भा० टी०—और हे शिवे! मृतवत्सा भी पुत्र को प्राप्त करती है तथा सब रोग तथा व्याधियाँ नाश को प्राप्त होते हैं॥ १३॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे मूलनक्षत्रस्य० तृतीयच० प्रायश्चित्तकथनं नामाऽष्टसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७८ ॥

॥ ७९ ॥

मूलनक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच॥

मध्येदेशे विशालाक्षि हिडम्बं नाम वै पुरम्।
लवणकारोवसत्तत्र भीमो गुणविचक्षणः॥ १॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे विशालाक्षि! मध्य देश में एक हिडंब नाम वाला पुर है वहाँ भीम नाम से विख्यात एक विचक्षण लवणकार निवास करता था॥१॥

प्रत्यहं लवणं कृत्वा विक्रयं चाकरोत्सदा।
तस्य भार्या पुण्यवती पुत्रत्रयमजीजनत्॥ २॥

भा० टी०—वह नित्य लवण को बनाकर बेचा करता था और उसकी भार्य्या पुण्यवती ने तीन पुत्रों को पैदा किया॥ २॥

धनधान्यवृषच्छागगोमहिष्यादिकं तथा।
बहूनि सञ्चितानि स्युर्लवणान्निलयं प्रिये!॥ ३॥

भा० टी०—हे प्रिये! उसके पास धन, धान्य, बैल, बकरी, गौ, महिषी इत्यादि बहुत मात्रा में थे तथा लवण का विशाल खजाना था॥ ३॥

तस्य ज्येष्ठः सुतो देवि वेश्यासुरततत्परः।
एकस्मिन्समये देवि लवणाब्धौ निशामुखे॥ ४॥

भा० टी०—और हे देवि! उसका जेष्ठ पुत्र वेश्याओं के संग मैथुन में रहता था एक समय रात्रि में लवण रूपी समुद्र में॥ ४॥

स्त्रिया सहाद्रितनये वृषभौ पतितौ तदा।
श्रुत्वा तत्र तदा देवि निशायां न गतोऽपि सः॥ ५॥

भा० टी०—हे अद्रितनये! हे देवि!! उसकी स्त्री सहित उसके दो वृषभ अर्थात् बैल लवण–सागर में गिर गए और वहाँ तब वह लवणकार नहीं गया॥ ५॥

त्रयाणां वै भवेन्मृत्युः स्वकाले ज्ञातिना सह।
भार्या निःसारिता तेन वृषभौ मृत्युसंयुतौ॥ ६॥

भा० टी०—वहाँ तीनों की मृत्यु हो गयी पश्चात् लवणकार ने अपने बन्धु-बान्धवों के साथ मिलकर अपनी मरी हुई स्त्री और दोनों बैलों को बाहर निकाल कर फेंक दिया।॥ ६ ॥

ततः सर्वं वयो जातं वृद्धे सति वरानने!
मरणं तस्य वै जातं लवणकारस्य पार्वति!॥ ७॥

भा० टी०—हे वरानने! हे पार्वति! वृद्ध होने पर उस लवणकार की सारी आयु बीतने पर उस की मृत्यु हो गयी॥ ७॥

यमदूतैर्महाघोरैर्नरके घोरसंज्ञके।
पातितस्तत्र देवेशि द्वाविंशतिसहस्रकम्॥ ८॥

भा० टी०—और हे देवि! यमराज की आज्ञा पाकर यम के दूतों नें उसे घोर नरक में डाला। तब बाईस हजार वर्ष पर्यंत उसने घोर नरक भोगा॥ ८॥

वर्षं सुभुज्यते देवि कृमिसूचिमुखैर्युतम्।
नरकान्निःसृतो देवि व्याघ्रयोनावजायत॥ ९॥

भा० टी०—हे देवि! सुई के समान मुख वाले जीवों से युक्त नरकों के दुःखों को भोगकर फिर नरक से निकलकर बाघ की योनि को प्राप्त होता हुआ॥ ९॥

पुनश्छागस्य वै योनिं बिडालस्य ततोऽगमत्।
मानुषत्वं ततो लेभे देशे पुण्यतमे शुभे॥ १०॥

भा० टी०—फिर हे शुभे! छाग की योनि को प्राप्त होकर वहाँ से बिडाल की योनि को प्राप्त हुआ, फिर शुभ युक्त देश में मनुष्य योनि को प्राप्त हुआ॥ १०॥

स्वकर्मवशगो नित्यं धनधान्यसमन्वितः।
गुणज्ञः सर्वविद्यानां कन्यापुत्रैश्च वर्जितः॥ ११॥

भा० टी०—और अपने पूर्व कर्मों के प्रताप से धनधान्य से युक्त, गुणज्ञ, सब विद्याओं में चतुर, कन्या और पुत्र से रहित है॥ ११॥

लवणकारस्य मरणं गङ्गायां पूर्वजन्मतः।
तत्फलेन महादेवि धनाढ्यत्वं प्रजायते॥ १२॥

भा० टी०—हे महादेवि! पूर्वजन्म में उस लवणकार का मरण गंगा के तट पर हुआ था, इससे वह धनाढ्य होता गया॥ १२॥

स्वभार्या पतिता देवि लवणकूपे निशामुखे।
नैव निःसारिता देवि ततः कन्या प्रजायते॥ १३॥

भा० टी०—हे देवि! रात्रि में उसकी अपनी भार्य्या लवण कूप में गिरी थी उसने उसे नहीं निकाला जिसके कारण उसकी कन्या हुई॥ १३॥

वृषभौ पतितौ कूपे पातितौ मृत्युभागतौ।
तेन दोषेण देवेशि पुत्रो नैव प्रजायते॥ १४॥

भा० टी०—और हे देवेशि! वृषभ जो कूप में पड़े थे और मृत्यु को प्राप्त हुए थे इस दोष से उसके पुत्र नहीं हुए॥ १४॥

परस्त्रीरतिसंयोगं यत्कृतं पूर्वजन्मनि।
तेन पापेन भो देवि शरीरे रोगसंभवः॥ १५॥

भा० टी०—और हे देवि! पूर्वजन्म में जो उसने परस्त्री से भोग किया, उससे उसके शरीर में रोगों की उत्पत्ति हो गयी॥ १५॥

अस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणु देवि सुशोभने!
गृहवित्ताष्टमं भागं ब्राह्मणाय समर्पयेत्॥ १६॥

भा० टी०—अब हे देवि! हे सुशोभने इसकी शांति को कहता हूँ, तुम ध्यान से सुनो अपने घर के द्रव्य में से आठवें भाग का दान कर ब्राह्मण को दें॥ १६॥

गायत्रीलक्षजाप्यं च विप्रद्वारा च कारयेत्।
हवनं तद्दशांशेन मार्जनं तर्पणं तथा॥ १७॥

भा० टी०—एक लाख तक गायत्री का जप ब्राह्मण के द्वारा करायें और उसका दशांश हवन, दशांश तर्पण और उसका दशांश मार्जन करवायें॥ १७॥

सुवर्णप्रतिमां कृत्वा लक्ष्म्याः पञ्चपलेन वै।
रौप्यस्यैव वरारोहे वृषभौ द्वौ सुनिर्मलौ॥ १८॥

भा० टी०—पांच पल, २० तोले प्रमाण की सुवर्ण की लक्ष्मीजी की मूर्ति बनवायें और हे वरारोहे! चांदी की पांच-पांच पल प्रमाण वाली अर्थात् दश पल की दो बैलों की निर्मल मूर्ति बनवायें॥ १८॥

पलैर्दशमितैः कुर्य्यात्पूजयित्वा यथाविधि।
मन्त्रेणानेन देवेशि स्वोपचारैः पृथक् पृथक्॥ १९॥

भा० टी०—तथा दश पल से मूर्ति बनायें और हे देवेशि! यथाविधि इस मंत्र से अपने उपचार से पृथक् पृथक् पूजन करायें॥ १९॥

ॐ लक्ष्मि देवि महालक्ष्मि कमले सर्वसिद्धिदे!
मम पूर्वकृतं पापं तत्क्षमस्व दयानिधे!॥ २०॥

भा० टी०—ॐ हे लक्ष्मि! हे देवि! हे महालक्ष्मि! हे कमले! हे सर्वसिद्धिदे! इस प्रकार मंत्र का उच्चारण करें 'मेरा पहले किया हुआ पाप, हे दयानिधे! दूर करो'॥२०॥

ॐ लक्ष्म्यै नमः पाद्यं समर्पयामि
ॐ लक्ष्म्यै नमः अर्घ्यं समर्पयामि
ॐ देव्यै नमः स्नानं समर्पयामि
ॐ कमलायै नमः गन्धं समर्पयामि
ॐ सर्वायै नमः धूपं समर्पयामि
ॐ सिद्धिदायै नमः दीपं समर्पयामि
ॐ पाद्यादिसर्वाणि दापयेत्॥

ॐ नन्दिकेश्वर भूतेश गणानामधिपो भवान्।
मम पूर्वकृतं पापं क्षम्यतां परमेश्वर!॥ २१॥

भा० टी०—**मंत्र०** ॐ लक्ष्म्यै नमः पाद्यं समर्पयामि ॐ लक्ष्म्यै नमः अर्घ्यं समर्पयामि ॐ देव्यै नमः स्नानं समर्पयामि ॐ कमलायै नमः गन्धं समर्पयामि ॐ सर्वायै नमः धूपं समर्पयामि ॐ सिद्धिदायै नमः दीपं समर्पयामि ॐ पाद्यादिसर्वाणि दापयेत्-ऐसे पाद्यादि सब देकर हे नंदिकेश्वर! हे भूतेश! हे परमेश्वर! तुम गणों के अधिष्ठाता हो। मेरे पहले किये हुए पाप दूर करो॥ २१॥

इति मन्त्रेण वृषभौ पूजितौ शुभ्ररूपिणौ।
पूजयित्वा यथान्यायं ब्राह्मणाय ददेत्ततः॥ २२॥

भा० टी०—इस मंत्र से श्वेत वर्ण के पवित्र रूप बैलों का पूजन कर विधि-विधान पूर्वक संकल्प कर ब्राह्मण को दान करें॥ २२॥

ततो गां कपिलां दद्यात् स्वर्णशृङ्गीं सुभूषिताम्।
एवं कृते वरारोहे यत्कृतं पूर्वजन्मनि॥ २३॥

भा० टी०—फिर पश्चात् कपिला गौ को स्वर्णश्रृंग से युक्त विभूषित करके दान करें ऐसा करने से हे वरारोहे! पहले जन्म का किया हुआ पाप॥ २३॥

तत्सर्वं नाशमायाति शीघ्रमेव न संशयः।
पुत्रोऽपि जायते देवि वन्ध्यात्वं च प्रशाम्यति॥ २४॥

भा० टी०—शीघ्र ही सब पाप नाश को प्राप्त होता है, इसमें संदेह नहीं है और हे देवि! पुत्र की प्राप्ति होती है तथा बांझपन दूर होता है॥ २४॥

रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति नात्र कार्या विचारणा।
मृतवत्सा लभेत्पुत्रं चिरञ्जीविनमुत्तमम्॥ २५॥

भा० टी०—और सब रोगों का नाश होता है इसमें कुछ भी सन्देह नहीं करना, मृत-वत्सा भी बहुत काल तक जीने वाले पुत्र को पैदा करती है॥ २५॥

काकबन्ध्या लभेत्पुत्रं पुनर्देवि न संशयः॥ २६॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे मूलनक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं नामैकोनाशीतितमोऽध्यायः॥ ७९॥

भा० टी०—और हे देवि! काक-वंध्या भी पुत्र को प्राप्त करती है इसमें संशय नहीं है॥ २६॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वती० मूलनक्ष० चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं नामैकोनाशीतितमोऽध्यायः॥ ७९॥

॥ ८० ॥

पूर्वाषाढानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

अयोध्यायां महादेवि वसिष्ठस्यैव चाश्रमे।
श्रीधनेश्वरशर्मेति ब्राह्मणो न्यवसत्प्रिये! ॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे महादेवि! हे प्रिये! अयोध्यापुरी में वसिष्ठजी के आश्रम में श्रीधनेश्वरशर्मा नाम वाला एक ब्राह्मण रहता था॥ १ ॥

स पण्डितो गुणज्ञश्च धनी मानी विचक्षणः।
स्त्री च पतिव्रता तस्य पतिसेवासु तत्परा॥ २ ॥

भा० टी०—वह पंडित, गुणज्ञ तथा धनवान् और मान से युक्त, विचक्षण अर्थात् विद्वान् था और उसकी स्त्री पतिव्रता और पति की सेवा में रत रहने वाली थी॥ २ ॥

पुत्रद्वयं तथा जातं विद्यावृत्तिर्बभूव सः।
भागिनेयस्ततो देवि तद्धनेश्वरशर्मणः॥ ३ ॥

भा० टी०—हे देवि! उसके दो पुत्र हुए तथा धनेश्वरशर्मा के स्थान पर उसका भागिनेय अर्थात् बहन का पुत्र आकर रहने लगा॥ ३ ॥

तत्र वासार्थमायातः सपत्नीको वरानने!
तीर्थयात्राप्रसङ्गेन गृहे तस्यावसद्द्विजः॥ ४ ॥

भा० टी०—हे वरानने! वह भागिनेय स्त्री सहित वहाँ वास करने के लिए आया और तीर्थ यात्रा के प्रसंग से उसके घर में रहने गया॥ ४ ॥

मासमेकं स्थितस्तत्र भागिनेयस्ततो मृतः।
दष्टः सर्पेण देवेशि कालपाशावृतो द्विजः॥ ५ ॥

भा० टी०—हे देवि! एक महीना वहाँ वास करके वह भागिनेय काल-पाश के वशीभूत सर्प के द्वारा डँसा गया और मृत्यु को प्राप्त हो गया॥ ५ ॥

वर्षमात्रे ततो जाते भागिनेयस्य या वधूः।
धनेश्वरे महाप्रीतिमकरोत्सा मम प्रिये! ॥ ६ ॥

भा० टी०—जब भागिनेय को एक वर्ष व्यतीत हो चुका, तब भागिनेय की स्त्री धनेश्वरशर्मा से महाप्रीति युक्त होकर उससे रमण करने लगी॥ ६॥

पुत्राणां मरणं देवि जातं तस्याघरूपिणः।
गृहे स्वर्णं च रौप्यं च सर्वं तस्यै न्यवेदयत्॥ ७॥

भा० टी०—और भागिनेय की स्त्री से रमण करने वाले उस पापी के पुत्रादि की मृत्यु हो गयी, तब सब द्रव्य धनेश्वरशर्मा ने उस भागिनेय की स्त्री को दे दिया॥ ७॥

ततो बहुगते काले तस्य मृत्युरभूत्किल।
यमदूतैर्महाघोरे नरके पातितः शिवे!॥ ८॥

भा० टी०—हे शिवे! तब काल के अत्यधिक व्यतीत होने पर धनेश्वरशर्मा भी मृत्यु को प्राप्त हो गया, तब यम के दूतों ने नरक में डाला॥ ८॥

यमाज्ञया वरारोहे षष्टिवर्षसहस्रकम्।
अन्यत्रापि कृतं पापं प्रयागे च विनश्यति॥ ९॥

भा० टी०—हे वरारोहे! साठ हजार वर्षों तक उसे नरक प्राप्त हुआ, अन्यत्र जगह किया हुआ पाप प्रयाग में नष्ट हो जाता है॥ ९॥

प्रयागे यत्कृतं पापं रामपुर्यां विनश्यति।
अयोध्यायां कृतं पापं वज्रलेपो भविष्यति॥ १०॥

भा० टी०—प्रयाग में किया हुआ पाप (रामपुरी) अयोध्या पुरी में नष्ट होता है और अयोध्या में किया हुआ पाप वज्रलेप अर्थात् कभी नष्ट ही नहीं होता है॥ १०॥

नरकान्निःसृतो देवि बकयोनावजायत।
पुनर्दर्दुरयोनिं वै काकयोनिं ततोऽगमत्॥ ११॥

भा० टी०—फिर हे देवि! नरक से निकलकर बगुला पक्षी की योनि को प्राप्त हुआ, फिर वह मेंढ़क की योनि को प्राप्त होकर काक की योनि को प्राप्त हुआ॥ ११॥

पुनर्मानुषयोन्यां वै धनधान्यसमन्वितः।
जातः पुण्यतमे देशे देवगन्धर्वसेविते॥ १२॥

भा० टी०—फिर गंधर्वों से सेवित पुण्यतम देश में धन-धान्य से युक्त होकर मनुष्य योनि को प्राप्त हुआ है॥ १२॥

सर्वविद्यासु विख्यातो गुणज्ञो रूपवांस्तथा।
पूर्वजन्मनि देवेशि भागिनेयवधूं प्रति॥ १३॥

भा० टी०—हे देवेशि! सब विद्याओं में गुणज्ञ, रूपवान् और विख्यात है। उसने पूर्व जन्म में भागिनेय की भार्या से प्रीति की॥ १३॥

संभोगं कृतवान् विप्रः कुक्षिपीडा ततः परम्।
वंशच्छेदो विशालाक्षि कन्या वै बहवस्तथा॥ १४॥

भा० टी०—हे विशालाक्षि! उससे संभोग किया जिससे उसकी कुक्षि में पीड़ा हुई और वंश नष्ट हुआ तथा बहुत सी कन्याएँ पैदा हुई॥ १४॥

भागिनेयस्य वै द्रव्यं भुक्तं पूर्वमनेन वै।
शरीरे बहुधा पीडा परस्त्रीगमनादनु॥ १५॥

भा० टी०—और भागिनेय (भानजे) के द्रव्य को पूर्व जन्म में इसने भोगा था, जिससे इसके शरीर में अनेक प्रकार की पीड़ा परस्त्री-गमनादि कर्म से हुई॥ १५॥

अस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणु त्वं मम वल्लभे!
गृहवित्तषडंशेन पुण्यकार्यं च कारयेत्॥ १६॥

भा० टी०—हे मेरी वल्लभे! अब इसकी शांति को कहता हूँ, तुम ध्यानपूर्वक सुनो, अपने घर के द्रव्य में से छठे भाग को पुण्य हेतु दान करें।॥ १६॥

गायत्री-जातवेदाभ्यां जपं वै कारयेत्ततः।
दशांशं हवनं कृत्वा तर्पणं मार्जनं तथा॥ १७॥

भा० टी०—गायत्री तथा जातवेद मंत्र का जप करायें और उसके दशांश का हवन उसके दशांश का तर्पण और उसके दशांश मार्जन करायें॥ १७॥

जीर्णोद्धारं वरारोहे कूपं चैव तडागकम्।
तद्वदेव च वै कुर्य्यात्षष्टिवृक्षप्ररोपणम्॥ १८॥

भा० टी०—और हे वरारोहे! जीर्ण-शीर्ण कुएँ, तालाबों का जीर्णोद्धार करें तथा साठ संख्या तक वृक्षों को लगायें॥ १८॥

प्रयागे माघमासे तु तुलादानं प्रयत्नतः।
धूम्रवर्णां तथा गां वै दद्याद्विप्राय सत्कृताम्॥ १९॥

भा० टी०—और यत्न पूर्वक माघ के महीने में प्रयाग का स्नान करें और धूम्र वर्ण वाली श्रेष्ठ गायों का दान किसी ब्राह्मण को दें॥ १९॥

एवं कृते वरारोहे पूर्वपापं विशुध्यति।
पुत्रोऽपि जायते देवि वन्ध्यत्वं च प्रशाम्यति॥ २०॥

भा० टी०—हे वरारोहे! ऐसा करने से पूर्वजन्म का पाप शुद्ध होता है और पुत्र की प्राप्ति होती है और बाँझपन की शांति होती है॥ २०॥

काकवन्ध्यत्वशान्त्यर्थं रवियुक्तां तु सप्तमीम्।
कृत्वा व्रतं वरारोहे सुवर्णं दानमाचरेत्॥ २१॥

भा० टी०—और काकवन्ध्यापन की शांति के लिये आदित्य-युक्त सप्तमी के दिन व्रत करके पश्चात् सुवर्ण का दान करें॥ २१॥

शय्यादानं ततो दद्यान्मृतवत्सा सुपुत्रिणी।
सर्वे रोगाः क्षयं यान्ति नात्र कार्या विचारणा॥ २२॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे पूर्वाषाढानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नामाऽशीतितमोऽध्यायः॥ ८०॥

भा० टी०—फिर शय्या का दान करें ऐसा करने से मृतवत्सा भी पुत्र को पैदा करती है और सब रोगों का नाश होता है, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं करना॥ २२॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां भाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे० पूर्वाषाढा० प्रथमच० प्रायश्चित्तकथनं नामाशीतितमोऽध्यायः॥ ८०॥

॥ ८१ ॥

पूर्वाषाढानक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

कर्णाटे वै ततो देवि पुरं च शिवसंज्ञकम्।
वसन्ति तत्र बहवो वैश्याः पण्योपजीविनः ॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे देवि! कर्नाटदेश में शिव नाम वाला नगर है, वहाँ पण्य अर्थात् दुकान से आजीविका युक्त बहुत से वैश्यजन निवास करते थे ॥ १ ॥

तन्मध्ये वैश्य एको हि धरणीकरविश्रुतः।
तस्य रूपवती भार्या सुन्दरी बहु संयुताः ॥ २ ॥

भा० टी०—उनमें से एक धरणीकर नामक वैश्य विख्यात होता गया और उसकी रूपवती स्त्री अत्यन्त सुन्दर थी ॥ २ ॥

व्यापारेण महादेवि धनं बहु च संचितम्।
ततो बहुदिने काले तस्य मित्रं द्विजोऽप्यभूत् ॥ ३ ॥

भा० टी०—हे महादेवि! उसने व्यापार से बहुत धन इकट्ठा किया, तब बहुत से दिन व्यतीत होने पर उसका एक ब्राह्मण मित्र बन गया ॥ ३ ॥

ब्राह्मणः सोऽपि वै भ्रष्टः कष्टं भुक्त्वा दिने दिने।
स्वर्णं शतपलं देवि हीरकं मौक्तिकं तथा ॥ ४ ॥

भा० टी०—ऐश्वर्य्य से भ्रष्ट हुआ वह ब्राह्मण भी प्रतिदिन कष्टों भोग कर सौ पल सुवर्ण, हीरा तथा मोती ॥ ४ ॥

स्थापितं ब्राह्मणद्रव्यं स्वगृहे मित्रकारणात्।
ततो वृद्धे तु संजाते वैश्यमृत्युरभूत्पुरा ॥ ५ ॥

भा० टी०—इसप्रकार उस वैश्य ने मित्रता के कारण उस ब्राह्मण के अपने घर में स्थापित किये फिर वृद्ध होने पर उस वैश्य की मृत्यु हो गयी ॥ ५ ॥

पश्चात्पत्नी मृता तस्य व्रतिनी गर्ववर्जिता।
वैश्यस्य चाभवत्स्वर्गं दिव्यवर्षसहस्रकम् ॥ ६ ॥

भा० टी०— तदनन्तर गर्व से वर्जित व्रत में रत रहने वाली उसकी पत्नी की भी मृत्यु हो गयी और उसको हजार वर्ष वाला दिव्य स्वर्गवास हुआ॥ ६॥

पत्न्या सह वरारोहे भुक्त्वा स्वर्गफलं ततः।
बकयोनिं ततो लेभे चक्रवाको ततोऽभवत्॥ ७॥

भा० टी०—हे वरारोहे! पत्नी सहित उस वैश्य ने स्वर्ग के फल को भोगा फिर बगुला पक्षी की योनि को प्राप्त हुआ फिर वहाँ से चक्रवाक की योनि को प्राप्त हुआ॥७॥

हंसयोन्यां ततो जातो मानुषत्वं ततोऽगमत्।
पूर्वसंबन्धतः पूर्वपुण्यात्पातिव्रतादपि॥ ८॥

भा० टी०—तत्पश्चात् हंस की योनि को प्राप्त हुआ, फिर पूर्व में किये हुए पुण्य के प्रभाव से तथा पातिव्रत्य धर्म वाली स्त्री के प्रभाव से मनुष्य योनि को प्राप्त हुआ॥८॥

पुनर्विवाहिता देवि ब्राह्मणस्वाऽपहारतः।
वन्ध्या जाता तु सा नारी दुःखिता चाप्यऽहर्निशम्॥ ९॥

भा० टी०—और वही स्त्री फिर उससे विवाही गयी, किन्तु पूर्वजन्म में ब्राह्मण का धन नहीं देने से उसकी वह स्त्री भी वंध्या और रात दिन अति दुखी होती गई॥ ९॥

तस्य देहेऽभवद्व्याधिः कफवातसमन्वितः।
धनाढ्यो बहुधा कन्या जायन्ते च पुनः पुनः॥ १०॥

भा० टी०—और उसके देह में व्याधि रहती है, कफवातादि रोगयुक्त है, धन से युक्त होन पर भी बार-बार उसकी कन्या जन्मती गयी॥ १०॥

अस्य निग्रहहेत्वर्थं शृणु सर्वं वरानने!
यद्गृहे वित्तमर्द्धं तद्ब्राह्मणाय समर्पयेत्॥ ११॥

भा० टी०—हे वरानने! इस पाप की शांति के लिए मैं उपाय बताता हूँ तुम ध्यान से सुनो अपने घर का आधा द्रव्य ब्राह्मण को संकल्प करके दान करें॥ ११॥

ॐ लक्ष्म्यै नमोऽथ मन्त्रेण दशायुतजपं ततः।
दशांशं हवनं तद्वत्तर्पणं मार्जनं तथा॥ १२॥

भा० टी०—"ॐ लक्ष्मै नम:" इस मंत्र का दश हजार जप करायें और उसके दशांश का हवन, और उसका दशांश तर्पण में उसका दशांश मार्जन करायें॥ १२॥

गामेकां कृष्णवर्णां वै स्वर्णयुक्तां सवत्सकाम्।
ब्राह्मणाय ततो दद्यान्मुक्तालाङ्गूलसंयुताम्॥ १३॥

भा० टी०—और एक कृष्णा वर्ण की गाय को सुवर्ण तथा वस्त्रादि से युक्त और मोतियों की पुच्छादि से युक्त कर ब्राह्मण को दान करें॥ १३॥

भोजनं कारयेत्पूज्यान् ब्राह्मणान्वेदपारगान्।
शतं वा द्विशतं देवि त्रिशतं वा विशेषतः॥ १४॥

भा० टी०—और हे देवि! पवित्र वेदपाठी सौ अथवा दो सौ अथवा तीन सौ ब्राह्मणों को विशेष शुद्धता से भोजन करायें॥ १४॥

पलैः शतैः सुवर्णस्य वेदीं कृत्वा विचक्षणः।
तन्मध्ये च द्विजस्यैव रौप्यस्यैव च चाकृतिम्॥ १५॥

भा० टी०—और सौ पल मात्रा की सुवर्ण की वेदी बनाकर उसके मध्य में चांदी की ब्राह्मण की मूर्त्ति स्थापित करें॥ १५॥

पूजयेच्छ्रद्धया देवि मन्त्रेणैव पुनः पुनः।
ब्रह्मंस्त्वं कपिलो विष्णुः सर्वसाक्षी जगन्मयः॥ १६॥

भा० टी०—हे देवि! श्रद्धा से इस मंत्र से उसका पूजन करें- हे ब्रह्मन्! तुम कपिल हो, विष्णु का रूप हो, सब के साक्षी हो, जगन्मय हो॥ १६॥

ममापराधं देवेश क्षम्यतां पूर्वजन्मनः।
द्रव्यं मित्रस्य भो देवि स्थापितं स्वगृहे मया॥ १७॥

भा० टी०—हे देवेश! मेरा अपराध क्षमा करो जोकि पूर्व जन्म में मैंने मित्र का द्रव्य स्थापित किया था॥ १७॥

न दत्तं वै मयाऽज्ञानात् क्षम्यतां परमेश्वर!
मन्त्रेणानेन देवेशि पूजनं विधिपूर्वकम्॥ १८॥

भा० टी०—हे देवेशि! अज्ञान से मैंने वह धन वापस नहीं दिया, हे परमेश्वर! तुम क्षमा करो इस मंत्र से विधिपूर्वक पूजन करें॥ १८॥

पूजयित्वा ततो देवि ब्राह्मणाय प्रदापयेत्।
एवं कृत्वा वरारोहे शीघ्रं पुत्रः प्रजायते॥ १९॥

भा० टी०—हे देवि! हे वरारोहे!! पूजन करके ब्राह्मण को दान करें। ऐसा करने से शीघ्र पुत्र की प्राप्ति होती है॥ १९॥

काकवन्ध्या पुनर्देवि कन्यकाजननी तथा।
पुत्रं प्रसूयते देवि न च कन्या प्रसूयते॥ २०॥

भा० टी०—हे देवि! काकवंध्या या कन्या को पैदा करने वाली स्त्री भी ऐसा करने से पुत्र को पैदा करती है और कन्या का जन्म नहीं होता है॥ २०॥

मृतवत्सा लभेत्पुत्रं चिरञ्जीविनमुत्तमम्।
व्याधयः संक्षयं यान्ति नात्र कार्या विचारणा॥ २१॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे पूर्वाषाढानक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नामैकाशीतितमोऽध्यायः॥ ८१॥

भा० टी०—और मृतवत्सा भी बहुत काल तक जीने वाले पुत्र को पैदा करती है तथा सभी व्याधियाँ नष्ट होती हैं इसमें कुछ भी सन्देह नहीं करना॥ २१॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पूर्वाषाढा० द्विती० प्रायश्चित्तकथनं नामैकाशीतितमोऽध्यायः॥ ८१॥

॥ ८२ ॥

पूर्वाषाढानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

अन्तर्वेदे विशालाक्षि लोध्रोवात्सीत्स पुण्यकृत्।
गन्धर्वाख्ये पुरे देवि विख्याते यमुनातटे ॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे विशालाक्षि! गंगा और यमुना के मध्य में गंधर्व नाम वाला प्रसिद्ध पुर है, उस पुर में यमुना तट पर पुण्यवान् एक लोधा निवास करता था ॥ १ ॥

सुभाग्यवान् गुणज्ञो हि बहुभृत्यैः सुपूजितः।
भूपतिस्तस्य देशस्य दाता भोक्ता विचक्षणः ॥ २ ॥

भा० टी०—वह सौभाग्यवान् तथा गुणज्ञ बहुत से नौकरों से युक्त और पूजित था, उस देश का भूपति अर्थात् राजा दानी और भोगों को भोगने वाला, विद्वान् अर्थात् पंडित था ॥ २ ॥

ब्राह्मणस्य हृता भूमिरज्ञानाद्वै सुरेश्वरि!
ब्राह्मणोऽपि विषं भुक्त्वा मृतस्तस्योपरि प्रिये! ॥ ३ ॥

भा० टी०—हे सुरेश्वरि! उसने अज्ञान से ब्राह्मण की भूमि छीन ली, फिर हे प्रिये! ब्राह्मण भी विषपान करके मृत्यु को प्राप्त हो गया ॥ ३ ॥

ततो बहुगते काले तस्य मृत्युरभूत्पुरा।
यमदूतैर्महाघोरे कुम्भीपाके निपातितः ॥ ४ ॥

भा० टी०—फिर बहुत सा काल बीतने पर उस लोधा की भी मृत्यु हुई और वह यमराज के दूतों द्वारा कुंभीपाक नरक में डाला गया ॥ ४ ॥

यमाज्ञया वरारोहे युगमेकं च पातितः।
महादुःखेन संतप्तो बहुकष्टं प्रलब्धवान् ॥ ५ ॥

भा० टी०—हे वरारोहे! यमराज ने उसे एक युग पर्यंत नरक में डालने की आज्ञा दी, वहाँ महादुःख से संतप्त होकर बहुत से कष्टों को प्राप्त हुआ ॥ ५ ॥

नरकान्निःसृतो देवि सूकरत्वं ह्यजायत।
ऋक्षयोनिं ततो भूत्वा शुकयोनिं ततोऽगमत्॥ ६॥

भा० टी०—हे देवि! फिर नरक से निकलकर शूकर की योनि को प्राप्त हुआ, फिर वहाँ से रीछ की योनि को प्राप्त होकर फिर तोते की योनि को प्राप्त हुआ॥ ६॥

पुनर्मानुषयोनिर्वै मध्यदेशे वरानने!
धनधान्यसमायुक्तो वंशहीनो वरानने!॥ ७॥

भा० टी०—हे वरानने! फिर मध्य देश में धनधान्य से युक्त होकर वंश से रहित मनुष्य योनि को प्राप्त हुआ॥ ७॥

पूर्वजन्मनि देवेशि ऋता भूमिर्वरानने!
ब्राह्मणो वै मृतः पूर्वं तदुद्देशेन वै शिवे!॥ ८॥

भा० टी०—हे देवेशि!! हे वरानने! पूर्व जन्म में जो उसने ब्राह्मण की भूमि छीनीं थी और उसके कारण विप्र की मृत्यु हुई थी॥ ८॥

अतः पुत्रविहीनोऽयं कन्यका बहु जायते।
महारोगेण संतप्तो मृतपुत्रः पुनः पुनः॥ ९॥

भा० टी०—इसके कारण पुत्र रहित हुआ है, कन्याएँ बहुत पैदा होती हैं, महारोग युक्त है। बार-बार पुत्रादि उसके नष्ट होते गये॥ ९॥

अस्य शान्तिमहं वक्ष्ये पूर्वपापस्य शान्तये।
गायत्रीजातवेदाभ्यां त्र्यम्बकेन वरानने!॥ १०॥

भा० टी०—अब हे वरानने! उसकी शांति को कहता हूँ तुम सुनो, पहले जन्म के पाप की शांति के लिये गायत्री, जातवेद, त्र्यंबक-इत्यादि मंत्र का जप करें॥ १०॥

दशायुतं जपः कार्यः प्रतिमन्त्रैः सुरेश्वरि!
दशांशं हवनं तद्वत् तर्पणं मार्जनं तथा॥ ११॥

भा० टी०—प्रत्येक मंत्र का एक लाख तक जाप और दशांश हवन उसके दशांश तर्पण तथा उसके दशांश मार्जन करायें॥ ११॥

दशवर्णा ततो दद्याच्छतब्राह्मणभोजनम्।
भूमिदानं ततः कुर्य्याच्छतविग्रहमानकम्॥ १२॥

भा० टी०—और दशवर्ण वाली गायों का दान करें सौ ब्राह्मणों को भोजन करायें और सौ बीघे प्रमाण वाली भूमि का दान दें॥ १२॥

पलपञ्चसुवर्णस्य ब्राह्मणस्य तथाऽऽकृतिम्।
पूजयित्वा यथान्यायं ब्राह्मणाय प्रदापयेत्॥ १३॥

भा० टी०—और पाँच पल सुवर्ण की, ब्राह्मण की मूर्ति बनवायें यथाविधि पूजन कर ब्राह्मण को दान करें॥ १३॥

प्रयागे मकरे मासि पत्न्या सह वरानने!
स्नानं कुर्याच्च देवेशि पूर्वपापस्य शुद्धये॥ १४॥

भा० टी०—हे वरानने! हे देवेशि!! मकर के महीने में स्त्री सहित प्रयाग में स्नान करने से पूर्वपाप नष्ट होते हैं॥ १४॥

एवं कृत्वा वरारोहे पुत्रोत्पत्तिर्भवेच्छिवे!
वन्ध्यत्वं नाशमायाति काकवन्ध्या च गर्भिणी॥ १५॥

भा० टी०—हे वरारोहे! ऐसा करने से शीघ्र ही पुत्र की उत्पत्ति होती है बाँझपन शांत होकर काकवंध्या भी गर्भिणी होती है॥ १५॥

मृतवत्सा लभेत्पुत्रं चिरञ्जीविनमुत्तमम्।
रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति नात्र कार्या विचारणा॥ १६॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे पूर्वाषाढानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नामद्व्यशीतितमोऽध्यायः॥ ८२॥

भा० टी०—और मृतवत्सा भी बहुत काल तक जीने वाले पुत्र को पैदा करती है, सब रोग नष्ट होते हैं, इसमें संदेह नहीं है॥ १६॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे पूर्वाषाढा० तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम द्व्यशीतितमोऽध्यायः॥ ८२॥

॥ ८३ ॥

पूर्वाषाढानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

अयोध्यायां विशालाक्षि मालाकारोऽवसत्पुरा।
साधुवृत्तिरतः श्रीमान् ब्राह्मणानां च सेवकः॥ १॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे विशालाक्षि! बहुत पहले अयोध्यापुरी में साधुवृत्ति में रत ब्राह्मणों की सेवा करने वाला लक्ष्मीवान् एक मालाकार (माली) निवास करता था॥ १॥

तस्य पत्नी महादुष्टा कुलटा व्यभिचारिणी।
माल्यं कृत्वा विशालाक्षि जीवयामास बान्धवान्॥ १॥

भा० टी०—हे विशालाक्षि! उसकी स्त्री महादुष्टा, कुलटा, जारकर्म में रत रहती थी। वह माला बनाकर बांधवों की आजीविका चलाता था॥ २॥

तस्य मित्रं द्विजोऽप्येकः स्वर्णं लक्षद्वयं तथा।
स्थापितं स्वगृहे तस्य गताश्च बहुवासराः॥ ३॥

भा० टी०—और उसका एक मित्र द्विज दो लाख सुवर्ण उसको देकर विदेश चला गया, तब उसको बहुत दिन बीत चुके॥ ३॥

याचितं तेन स्वं द्रव्यमर्धं प्राप्तं तदा प्रिये!।
तदर्धं च व्ययं जातं मालाकारस्य वै गृहे॥ ४॥

भा० टी०—फिर हे प्रिये! उस ब्राह्मण ने वापस आकर अपना द्रव्य मांगा तब उसने आधा द्रव्य दिया आधा द्रव्य मालकार ने खर्च दिया॥ ४॥

एवं बहुगते काले मालाकारो मृतः पुरा।
अयोध्यायां विशालाक्षि स्वर्गस्तस्याऽभवत्किल॥ ५॥

भा० टी०—इस प्रकार हे विशालाक्षि! काल व्यतीत होने पर मालाकार का मृत्यु हुई अयोध्या में मरने से उसको स्वर्गवास हुआ॥ ५॥

लक्षवर्षं वरारोहे भुक्तं स्वर्गफलं शुभम्।
ततः पुण्यक्षये जाते मानुषत्वेऽभवत्पुनः॥ ६॥

भा० टी०—हे वरारोहे! एक लाख वर्षों तक स्वर्ग के फल को भोगकर पुण्य क्षीण होने पर फिर मनुष्य योनि में उसका जन्म हुआ॥ ६॥

मध्यदेशे च देवेशि पुत्रकन्याविवर्जितः।
तस्य पत्नी पुनर्देवि या स्थिता पूर्वजन्मनि॥ ७॥

भा० टी०—हे देवेशि! वह मध्य देश में पुत्र तथा कन्या से रहित है और उसकी स्त्री जो पूर्वजन्म में थी, वही उससे विवाही गयी॥ ७॥

विवाहिता च सा देवि व्याधियुक्ता ज्वरातुरा।
अस्य शान्तिं वरारोहे शृणु मे परमेश्वरि!॥ ८॥

भा० टी०—हे देवि! विवाहित होने के बाद उसकी स्त्री व्याधि युक्त होकर ज्वर से पीड़ित होती गई। अब हे परमेश्वरि! हे वरारोहे! इसकी शांति को कहता हूँ, तुम सुनो॥ ८॥

षडङ्गं जापयेत् प्राज्ञैः शिवपूजनपूर्वकम्।
षडक्षरेण मन्त्रेण लक्षजाप्यं वरानने!॥ ९॥

भा० टी०—हे वरानने! पंडितों से षडंग का जप करायें, शिवपूजन पूर्वक षडक्षर मंत्र का एक लाख जप करायें॥ ९॥

हवनं तद्दशांशेन मार्जनं तर्पणं तथा।
श्रवणं मासमेकं तु चण्डिकाचरितत्रयम्॥ १०॥

भा० टी०—और उसका दशांश हवन, उसका दशांश मार्जन, उसका दशांश तर्पण करायें और एक मास पर्यंत चंडिका के तीनों चरित्रों (कथाओं) का पाठ और श्रवण करें॥ १०॥

ततः षडंशं देवेशि ब्राह्मणाय समर्पयेत्।
ततो गां कपिलां दद्यात्तिलधेनुं सुपूजिताम्॥ ११॥

भा० टी०—हे देवेशि! अपने द्रव्य का छठे भाग को दान करें फिर पूजन करके गौ का दान तथा तिलधेनु का दान करें॥ ११॥

अश्वं दद्याद्विशालाक्षि महिषीं दुग्धसंयुताम्।
सुवर्णस्य कृतं वृक्षं फलपुष्पसमन्वितम्॥ १२॥

भा० टी०—हे विशालाक्षि! घोड़े का दान अथवा दुध युक्त महिषी का दान करें और फल पुष्प युक्त सुवर्ण का एक वृक्ष बनवायें॥ १२॥

दद्याद्दशफलं देवि ततः पुत्रः प्रजायते।
मृतवत्सा च या नारी काकवन्ध्या च रोगिणी॥ १३॥

भा० टी०—हे देवि! दशपल का ऐसा वृक्ष बनवाकर दान करें इससे पुत्र की प्राप्ति होती है और जो मृतवत्सा काकवंध्या स्त्री और रोगिणी स्त्री है॥ १३॥

सर्वासां वाञ्छितं कार्यं जायते नात्र संशयः।

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे पूर्वाषाढानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम त्र्यशीतितमोऽध्यायः॥ ८३॥

भा० टी०—वह भी मनोरथ की सिद्धि को प्राप्त होती है, इसमें संशय नहीं है॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पूर्वाषाढानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम त्र्यशीतितमोऽध्यायः॥ ८३॥

॥ ८४ ॥

उत्तराषाढानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

श्वेतपर्वे महातीर्थे रामपुर्यां वरानने!
कान्यकुब्जोऽवसद्विप्रो व्यापारकरणे रतः ॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे वरानने! श्वेतपर्व नाम वाले महातीर्थ पर रामपुरी नामक नगर में एक कान्यकुब्ज ब्राह्मण व्यापार कर्म में रत रहते हुए निवास करता था ॥ १ ॥

अश्वादिकं वरारोहे वृषचर्माजिनाम्बरम्।
प्रत्यहं गृह्यते देवि विक्रयं क्रियते सदा ॥ २ ॥

भा० टी०—हे वरारोहे! वह घोड़ा, वृषादि के चर्म (चमड़े) को प्रतिदिन बेचा करता था ॥ २ ॥

द्यूतवेश्यारतो नित्यं परस्त्रीगमनं तथा।
प्राऽकरोच्च सुरापानं गुरुदेवाऽपमानकृत् ॥ ३ ॥

भा० टी०—और द्यूतकर्म (जुआ) वेश्या संग परस्त्रीगमन, दारु का पान इत्यादि कर्म करने वाला वह गुरु और देवता का अपमान किया करता था ॥ ३ ॥

एवं बहुगते काले मरणं प्रबभूव ह।
यमदूतैर्महाघोरे लब्ध्वा क्षिप्तः सुदारुणे ॥ ४ ॥

भा० टी०—इस प्रकार बहुत-सा काल व्यतीत होने पर उसकी मृत्यु हुई। यमराज के दूतों ने यम की आज्ञा पाकर उसे दारुण संज्ञक नरक में डाला ॥ ४ ॥

षष्टिवर्षसहस्राणि भुक्त्वा नरकयातनाम्।
नरकान्निःसृतो देवि वानरस्य गतिं गतः ॥ ५ ॥

भा० टी०—हे देवि! साठ हजार वर्षों तक नरक का दुःख को भोगकर फिर वहाँ से निकलकर वानर की योनि को प्राप्त हुआ ॥ ५ ॥

ततो रासभयोन्यां वै तुरगस्य ततोऽगमत्।
मानुषत्वं ततो लेभे पूर्वजन्मफलाच्च सः॥ ६॥

भा० टी०—फिर गधे की योनि को प्राप्त होकर तत्पश्चात्घोड़े की योनि को प्राप्त हुआ। फिर पहले जन्म के कर्म-भोग से मनुष्य योनि को प्राप्त हुआ है॥ ६॥

धनधान्यसमायुक्तो रोगयुक्तोऽप्युत्रकः।
कदाचिद्दैवयोगेन पुत्रो भवति भामिनि!॥ ७॥

भा० टी०—हे भामिनि! धन-धान्यादि से युक्त होकर भी वह रोग से युक्त है और कभी दैवयोग से पुत्र की भी प्राप्ति होती भी है तो (उसकी तुरन्त मृत्यु हो जाती है)॥ ७॥

मरणं तस्य वै शीघ्रं ततः कन्या प्रजायते।
अस्य शान्तिं श्रृणुष्वादौ यथा पापं निवर्तते॥ ८॥

भा० टी०—तो उसका मरण शीघ्र ही होता है। उसे कन्या की प्राप्ति होती गई, अब उसकी शांति को कहता हूँ, तुम सुनो॥ ८॥

गृहवित्तषडंशं च पुण्यकार्यं च कारयेत्।
पूर्वजन्मनि देवेशि कनिष्ठं भ्रातरं निजम्॥ ९॥

भा० टी०—हे देवेशि! अपने घर के द्रव्य में से छठे भाग का दान कर दें उसने पहले जन्म में अपने छोटे भाई को॥ ९॥

रात्रौ खड्गेन हतवान् तत्पापाच्च सुतक्षयः।
गायत्रीमूलमन्त्रेण पञ्च लक्षं वरानने!॥ १०॥

भा० टी०—तलवार से मारा था, हे वरानने! उस पाप से उसके पुत्र नष्ट हुए गायत्री के मूल मंत्र का पांच लाख जप करायें॥ १०॥

जपं वै कारयेत्प्राज्ञैर्नित्यं गोविन्दकीर्तनम्।
होमं वै कारयेत्कान्ते कुण्डे षट्कोणसंयुते॥ ११॥

भा० टी०—हे कान्ते! नित्य गोविंद का कीर्तन करें। षट्कोण कुंड के मध्य में हवन करवायें॥ ११॥

पायसेन विशालाक्षि तिलसर्पिर्युतेन च।
दशवर्णां ततो दद्याद्ब्राह्मणाय शिवात्मने!॥ १२॥

भा० टी०—हे विशालाक्षि! घृत, तिल, पायस अर्थात् खीर–इनसे हवन करायें और दशवर्णवाली (दश प्रकार के आभूषणों से सजायी हुई) गाय का दान दें॥ १२॥

भूमिदानं ततो दद्याच्छय्यादानं विशेषतः।
भ्रातुश्चैवाकृतिं कृत्वा रौप्येणैव वरानने!॥ १३॥

भा० टी०—भूमि का दान दें तथा शय्या का दान करें और चांदी की भाई की मूर्ति बनवायें॥ १३॥

पलसप्तप्रमाणेन पूजां कृत्वा प्रसन्नधीः।
देवदेव महादेव चर्मभस्मविभूषण!॥ १४॥

भा० टी०—सात पल प्रमाण की मूर्ति बनाकर और प्रसन्न बुद्धि वाला होकर पूजन कर हाथ को जोड़कर ऐसा कहैं कि हे देवदेव! हे महादेव!! हे चर्मभस्म-विभूषण!!!॥ १४॥

पूर्वजन्मनि देवेश भ्रातृनाशः कृतो मया।
तत्पापं क्षम्यतां देव प्रपद्ये शरणं तव॥ १५॥

भा० टी०—हे देवेश! पहले जन्म में मैनें अपने भाई का वध किया था, हे देव! उस पाप की शांति के लिए मैं तुम्हारी शरण को प्राप्त हुआ हूँ॥ १५॥

प्रतिमां पूजितां देवि! मन्त्रेणानेन वै शिवे!
दद्याद्विप्राय विदुषे श्रोत्रियाय द्विजात्मने॥ १६॥

भा० टी०—हे देवि! हे शिवे!! इस मंत्र से प्रतिमा का पूजन कर वेदपाठी विद्वान् ब्राह्मण को दान कर दें॥ १६॥

ततो वै भोजयेद्भक्त्या ब्राह्मणान्वेदपारगान्।
एकाधिकशतं देवि पायसैर्मोदकेन च॥ १७॥

भा० टी०—पूजन करने के बाद फिर भक्ति से युक्त होकर वेद का पाठ करने वाले एक सौ एक ब्राह्मणों को पायस, मोदक अर्थात् खीर, लड्डू आदि का भोजन करायें॥ १७॥

एवं कृत्वा वरारोहे पूर्वपापस्य संक्षयः।
वन्ध्यत्वं प्रशमं याति पुत्रः सत्यं प्रजायते॥ १८॥

भा० टी०—हे वरारोहे! ऐसा करने से पूर्व जन्म में किये हुए पाप नष्ट होते हैं। वन्ध्यापन की शांति होती है और पुत्र की प्राप्ति होती है॥ १८॥

काकवन्ध्या लभेत्पुत्रं मृतवत्सा सुपुत्रिणी।
व्याधयः संक्षयं यान्ति नात्र कार्या विचारणा॥ १९॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे उत्तराषाढानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम चतुरशीतितमोऽध्यायः॥८४॥

भा० टी०—काकवंध्या और मृतवत्सा स्त्री भी उत्तम पुत्र को प्राप्त होती है सर्व व्याधि नष्ट होते हैं इसमें कुछ विचार नहीं करना॥ १९॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे उत्तरा० प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम चतुरशीतितमोऽध्यायः॥८४॥

॥ ८५ ॥

उत्तराषाढानक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

सकेश्वरपुरे देव्यवात्सीच्चैको द्विजो वरः।
म्लेच्छवाणीं वदन्नित्यं म्लेच्छसेवारतः सदा॥ १॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे देवि! सकेश्वरपुर में एक श्रेष्ठ ब्राह्मण रहता था, वह म्लेच्छवाणी सदा कहता था और म्लेच्छों की ही सेवा करता था॥ १॥

अतिष्ठन् म्लेच्छनिकटे म्लेच्छविद्यासु पण्डितः।
मत्स्यं मांसं च मद्यं च भोजनं चाकरोत्सदा॥ २॥

भा० टी०—और म्लेच्छों के समीप रहने से म्लेच्छ विद्या ही में रत था, मत्स्य-मांस का भक्षण, मदिरा का पान अथवा भोजन किया करता था॥ २॥

एवं सर्वं वयो जातं धनं बहु सुसंचितम्।
तद्धनं भूमिमध्ये हि स्थापितं तु गृहे शुभे॥ ३॥

भा० टी०—इसी प्रकार हे शुभे! सब अवस्था व्यतीत होने पर उसके पास धन का संचय से युक्त था वह धन उसने भूमि के मध्य में अपने घर में स्थापित कर दिया॥३॥

एकस्मिन्समये देवि भ्रातुः पुत्रः समागतः।
रत्नव्यापारकरणे स दक्षश्चतुरस्तथा॥ ४॥

भा० टी०—हे देवि! एक समय उसके भाई का पुत्र वहाँ आया और वह रत्नों का व्यापार करने में बहुत ही चतुर था॥ ४॥

ततो गेहस्थितो नित्यं रत्नं बहुसुसंचितम्।
रत्नलोभेन भो देवि रात्रौ क्षुरिकया तदा॥ ५॥

भा० टी०—हे देवि! उसके घर में रहते हुए उसने बहुत सा रत्न संचित किया, रत्नों के लोभ से उसने रात्रि में घुरी से॥ ५॥

कृत्वा शिरश्छेदनं च सुप्तं निशि ममार तम्।
तत्सर्वं भूमिमध्ये तु स्थापितं रत्नसंचयम्॥ ६॥

भा० टी०—उसका शिरच्छेदन कर सोते हुए उसको मार दिया और जितना उसका धन था उसको भूमि के मध्य में गाड़ दिया॥ ६॥

भ्रातृजस्य धनं गृह्य व्ययं कृत्वा दिने दिने।
ततो बहुदिने याते द्विजः पूर्वं मृतः स च॥ ७॥

भा० टी०—भतीजे के धन को ग्रहण कर वह प्रतिदिन खर्च करता था, फिर वह द्विज अपनी पत्नी से पहले मर गया॥ ७॥

पश्चात्पत्नी मृता तस्य तौ गतौ नरकार्णवे।
षष्टिवर्षसहस्राणि महाकष्टेन पीडितौ॥ ८॥

भा० टी०—पश्चात् उसकी पत्नी भी मर गई। तब वे दोनों नरक रूपी (अर्णव) समुद्र में प्राप्त हुए। साठ हजार वर्षों तक उन्होंने महाकष्टों को भोगा॥ ८॥

नरकान्निःसृतौ द्वौ तु गजयोनी बभूवतुः।
पुनः कच्छपयोनिर्वै गोधायोनी बभूवतुः॥ ९॥

भा० टी०—और नरक से निकलकर दोनों हाथी हुए की योनि को प्राप्त हुए फिर कछुआ की योनि को प्राप्त होकर गोधा की योनि को प्राप्त हुए॥ ९॥

एवं योनित्रयं भुक्त्वा सरय्वा उत्तरे तटे।
मानुषत्वं ततो लेभे भाग्यवान् साधुसंज्ञितः॥ १०॥

भा० टी०—इस प्रकार तीन योनियों को भोगकर फिर शरयू के उत्तर किनारे पर मनुष्य योनि को प्राप्त होते हुए भाग्यवान् साधु सम्मति वाले बन गये॥ १०॥

सुशीलसुमतिर्दक्षः स्वल्पविद्यायुतो नरः।
अपुत्रो रोगवान् देवि भूपतिर्नरपूजितः॥ ११॥

भा० टी०—सुंदर, शील-स्वभाव, शुद्धमति, थोड़ी विद्या से युक्त, पुत्र से रहित भूपति अर्थात् राजा और नरों से पूजित इस प्रकार के हो गये॥ ११॥

पूर्वजन्मनि देवेशि भ्रातृपुत्रवधः कृतः।
निशायां च पुरा देवि तेन दोषेण नो सुतः॥ १२॥

भा० टी०—हे देवेशि! हे प्रिये! पूर्वजन्म में उसने रात में भतीजे का वध किया उस दोष से इसका पुत्र नहीं हुआ॥ १२॥

म्लेच्छस्य सेवनाद्देवि म्लेच्छस्याऽशुचिभाषणात्।
तेन पापेन भो देवि शरीरे रोगसंभवः॥ १३॥

भा० टी०—हे देवि! म्लेछ का सेवन करने से तथा म्लेछों से संभाषण करने से उसके शरीर में रोगों की उत्पत्ति हुई॥ १३॥

यत्तु दानं कृतं पूर्वं दत्ता शय्या सुरेश्वरि!
तत्फलेन महादेवि धनाढ्यत्वमजायत॥ १४॥

भा० टी०—और हे सुरेश्वरि! पूर्वजन्म में शय्या दान करने से वह धनाढ्य होता गया॥ १४॥

अनाचारः कृतः पूर्वं पुत्रदारयुतेन च।
तेन पापेन भो देवि नरः कन्याप्रजो भवेत्॥ १५॥

भा० टी०—और पुत्र-दारा-सहित अनाचार में रत रहने से उसकी कन्या की संतान हुई॥ १५॥

अथ शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणु देवि सुशोभने!
गायत्रीमूलमन्त्रेण पञ्चलक्षं वरानने!॥ १६॥

भा० टी०—अब हे देवि! हे वरानने!! हे सुशोभने!!! उसकी शांति को कहता हूँ, तुम सुनो। गायत्री के मूल मंत्र का पांच लाख जप करें॥ १६॥

जपं च कारयेद्देवि षडंशं दानमाचरेत्।
होमं च कारयेत्कान्ते कुण्डे चैव सुसंस्कृते॥ १७॥

भा० टी०—हे देवि! जप करवायें अपने घर के द्रव्य में से छठे भाग का दान करें और शुद्ध कुंड बनाकर हवन करवायें॥ १७॥

दशांशं तर्पणं देवि मार्जनं तद्दशांशतः।
भ्रातृपुत्रस्य प्रतिमां कारयेदद्रिनन्दिनि!॥ १८॥

भा० टी०—और उसका दशांश तर्पण, उसका दशांश मार्जन, करायें हे अद्रिनंदिनि! हे पार्वति! एक भाई के पुत्र की मूर्ति बनवायें॥ १८॥

पलं दश सुवर्णस्य विधिवत्पूजयेत्ततः।
मन्त्रेणानेन देवेशि गन्धधूपादिभिस्तथा॥ १९॥

भा० टी०—हे देवेशि! दशपल सुवर्ण की (प्रतिमा) बनाकर विधिवत्पूजन करें गंध, धूपादि से इस मंत्र से उसका पूजन करें॥ १९॥

गणाधिप सुराध्यक्ष सर्वसिद्धिप्रदायक!
मम पूर्वकृतं पापं तत्क्षमस्व दयानिधे!॥ २०॥

भा० टी०—हाथ जोड़कर इस प्रकार कहें कि, हे गणाधिप! हे सुराध्यक्ष! हे सर्वसिद्धि- प्रदायक! हे दयानिधे! मेरे द्वारा पूर्वजन्म में किये पापों को शांत करो॥२०॥

रौप्यपात्रे स्थितां तां तु प्रतिमां प्रार्थयेत्ततः।
अज्ञानाद्वा प्रमादाद्वा पाप मम पुरा कृतम्॥ २१॥

भा० टी०—और रूपे के पात्र में उस मूर्ति को स्थापित कर प्रार्थना करें, कहें अज्ञान से अथवा प्रमाद से मैंने जो पूर्वजन्म में पाप किया॥ २१॥

तत्सर्वं क्षम्यतां देव प्रपद्ये शरणं तव।

ॐ गणपतये नमः ॐ लक्ष्म्यै नमः ॐ सूर्याय नमः
ॐ शिवाय नमः ॐ विश्वयोनये नमः ॐ गरुडाय नमः
ॐ नन्दिकेश्वराय नमः॥

एभिर्मन्त्रैस्तु सर्वाणि वस्तूनि दापयेत्ततः।
कलशं पूजयेद्देवि गणाधिपस्वरूपिणम्॥ २२॥

भा० टी०—हे देव! उसको तुम शांत करो तुम्हारी शरण को प्राप्त हुआ हूँ ॐ गणपतये नमः १, ॐ लक्ष्म्यै नमः २, ॐ सूर्याय नमः ३, ॐ शिवाय नमः ४, ॐ विश्वयोनये नमः ५, ॐ गरुडाय नमः ६, ॐ नन्दिकेश्वराय नमः ७-इन मंत्रों से सब वस्तुओं का निवेदन कर फिर गणाधिपरूपी कलशका पूजन करें॥ २२॥

गन्धपुष्पैश्च ताम्बूलैर्वस्त्रैर्नानाविधैरपि।
प्रतिमां पूजितां देवि ब्राह्मणाय प्रदापयेत्॥ २३॥

भा० टी०—गंध पुष्प, तांबूल तथा नाना प्रकार के वस्त्रादि से पूजित प्रतिमा को ब्राह्मण को दान कर दें॥ २३॥

दशवर्णास्ततो दद्याद्वृषमेकं वरानने!
पञ्चपात्रं ततो दद्याद्ब्राह्मणान् भोजयेत्ततः॥ २४॥

भा० टी०—हे वरानने! दशवर्णों वाली गाय और एक बैल तथा पंच पात्र को ब्राह्मण को दान करें पश्चात् ब्राह्मणों को भोजन करायें॥ २४॥

रविवारेण संयुक्तसप्तम्यां विधिपूर्वकम्।
उपोषणं नियमतः पत्न्या सह वरानने!॥ २५॥

भा० टी०—हे वरानने! रविवार से युक्त सप्तमी के दिन विधिपूर्वक व्रत करें नियम से स्त्री सहित॥ २५॥

सप्तवत्सरपर्यन्तं प्रकुर्य्याद्वै सुरेश्वरि!
ततस्तूद्यापनं कुर्याद्यथाशक्ति सदाशिवे॥ २६॥

भा० टी०—हे सुरेश्वरि! सात वर्ष पर्यंत व्रत करें। हे सदाशिवे! फिर उद्यापन करें शक्ति के अनुसार (दक्षिणा दें)॥ २६॥

दद्याद्विप्राय विदुषे श्रोत्रियाय तपस्विने।
कूष्माण्डं नारिकेलं च पञ्चरत्नसमन्वितम्॥ २७॥

भा० टी०—वेद को पढ़ने वाले तपस्वी उत्तम ब्राह्मण को दान करें और पंचरत्नों से युक्त पेठे का दान करें॥ २७॥

गङ्गामध्ये प्रदातव्यं पूर्वपापविशुद्धये।
एवं कृते वरारोहे शीघ्रं पुत्रः प्रजायते॥ २८॥

भा० टी०—पूर्वपाप की शुद्धि के लिये गंगाजी के मध्य में विसर्जित करें। इस प्रकार हे वरारोहे! शीघ्र ही पुत्र की प्राप्ति होती है॥ २८॥

सर्वे रोगाः क्षयं यान्ति नीहारा भास्कराद्यथा॥ २९॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे उत्तराषाढानक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम पञ्चाऽशीतितमोऽध्यायः॥ ८५॥

भा० टी०—इस प्रकार सब रोग नाश को प्राप्त होते हैं। सूर्य्य के तेज से जैसे नीहार अर्थात् ओस के कण अथवा बर्फ नष्ट होते हैं ॥ २९॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां० उत्तराषाढा० द्वितीयचरण० प्रायश्चित्तकथनं नाम पंचाशीतितमोऽध्यायः॥ ८५॥

॥ ८६ ॥

उत्तराषाढानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

मध्यदेशे महादेवि ब्राह्मणो वेदपारगः।
जयदेवाभिधो विप्रो विख्यातश्चातिशीलवान्॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे महादेवि! मध्यदेश में जयदेव नामक विख्यात वेदों को जानने वाला अतिशील स्वभाव वाला ब्राह्मण रहता था॥ १ ॥

तस्य भार्या शीलवती सुशीला शीलरूपिणी।
तस्याः पुत्रत्रयं जातं गुणज्ञं वेदपारगम्॥ २ ॥

भा० टी०—उसकी स्त्री शीलस्वभाव वाली सुशीला नामक साक्षात् शील रूपिणी थी उसके तीन पुत्र गुणी और वेदों को जानने वाले हुए॥ २ ॥

पुत्राः सर्वे गुणज्ञाश्च वेदवेदाङ्गपारगाः।
ज्येष्ठपुत्रस्य चोद्वाहे स्वसा तस्य समागता॥ ३ ॥

भा० टी०—संपूर्ण पुत्र गुणज्ञ और वेद-वेदांगों के मर्मज्ञ थे, उनमें से ज्येष्ठपुत्र के विवाह में उस ब्राह्मण की भगिनी अर्थात् बहन आई थी॥ ३ ॥

भगिन्याश्चादरं कृत्वा बहुमानेन पार्वति!
विवाहे च समाप्ते तु ज्ञातयः स्वेषु वेश्मसु॥ ४ ॥

भा० टी०—हे पार्वति! उस ब्राह्मण ने बहुत सम्मानपूर्वक बहन का आदर किया, फिर विवाह समाप्त होने पर उसके भाई-बांधव सब अपने-अपने घरों को गये ॥४ ॥

गताः सर्वे विशालाक्ष्ययाचयद्भगिनी च सा।
ताटङ्कं स्वर्णरत्नाढ्यं भ्रातृपत्नीप्रकोपिता॥ ५ ॥

भा० टी०—हे विशाल नेत्रों वाली! तब उस ब्राह्मण की बहन ने अपने भाई से सुवर्ण रत्नों से जड़े हुए ताटंक नामक (दंड) आभूषण को माँगा, किन्तु उसकी स्त्री ने कहा कि नहीं देंगे। ऐसा कहते हुए भाई की स्त्री से प्रकुपित हुई॥ ५ ॥

श्रुत्वेर्ष्यया सवत्सा तु तदा याता स्ववेश्मनि।
स्त्रीस्वभावाच्च देवेशि मृता सा भगिनी गृहे॥ ६॥

भा० टी०—और ईर्ष्या युक्त का वचन को सुनकर वह अपने पुत्र सहित भी अपने घर को चली गयी और हे देवेशि! स्त्री-स्वभाव वश वह अपने घर में आकर मर गई॥ ६॥

तदुद्देशेन देवेशि शरीरं निशि साऽत्यजत्।
ततो बहुदिने याते तस्य मृत्युरभूत्तदा॥ ७॥

भा० टी०—हे देवेशि! उस क्रोध से अपने शरीर को उसने रात्रि में त्याग दिया। पश्चात् बहुत दिन व्यतीत होने पर उस ब्राह्मण की भी मृत्यु हो गई॥ ७॥

पत्नी तस्य सती जाता सत्यलोकमभूत्तदा।
वर्षं कोटित्रयं देवि सत्यलोकेऽवसत्पुनः॥ ८॥

भा० टी०—तब उसकी स्त्री सती हो गई तो फिर उसे सत्यलोक की प्राप्ति हुई, हे देवि! वह फिर तीन कोटि वर्षों तक सत्यलोक में वास करती रही॥ ८॥

मर्त्यलोके मनुष्यत्वं लब्धं पुण्यक्षये सति।
धनधान्यसमायुक्तो विद्यावान् शास्त्रपारगः॥ ९॥

भा० टी०—और पुण्य पूरे होने पर पश्चात् मृत्युलोक में मनुष्य शरीर को प्राप्त हुए वह धनधान्य से युक्त, विद्या से युक्त, शास्त्रों को जानने वाला अर्थात् पारंगत हुआ॥९॥

कृतं तेन पुरा पापं भगिन्या दारकारणात्।
पुत्रो न जायते देवि कन्योत्पन्ना विनश्यति॥ १०॥

भा० टी०—उसने अपनी स्त्री के वश होकर बहन मरण का पाप किया, हे देवि! इस कारण से उसका पुत्र नहीं जन्मता और कन्या जन्म होने के बाद नष्ट होती है॥ १०॥

शरीरे सततं दुःखं मध्ये तस्य प्रजायते।
काकवन्ध्या भवेद्भार्या मृतवत्सा सुदुःखिता॥ ११॥

भा० टी०—उसके शरीर में सदा दुःख रहता है और उसकी स्त्री काकवन्ध्या अर्थात् एक ही संतान जन्मने वाली होती है अथवा संतान हो-होकर मरती है और दुःखी रहती है॥ ११॥

अस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि तत्सर्वं शृणु पार्वति!
गृहवित्तषडंशेन पुण्यकार्यं च कारयेत्॥ १२॥

भा० टी०—हे पार्वति! अब इसकी शांति को कहता हूँ तुम ध्यान से सुनो घर में जो धन हो, उसके छठे भाग का पुण्य हेतु दान करें॥ १२॥

वापीकूपतडागानां जीर्णोद्धारं प्रयत्नतः।
वाटिकां मार्गमध्ये तु सहितां शीतवारिणा॥ १३॥

भा० टी०—बावड़ी, कुआँ, तालाब जीर्णोद्धार अर्थात् खंडित को सुधरवायें मार्ग में गमन करने वाले मनुष्यों का हित करने वाली शीतल जल से युक्त बगीची बनवायें॥१३॥

गायत्रीजातवेदाभ्यां जपं वै कारयेत्ततः।
लक्षद्वयं विशालाक्षि हवनं तद्दशांशतः॥ १४॥

भा० टी०—हे विशालाक्षि! गायत्री और जातवेद० मंत्रों से दो लाख तक जप करायें पश्चात् उसके दशांश का हवन करायें॥ १४॥

तर्पणं मार्जनं तद्वद्गोदानं विधिवत्ततः।
एवं कृते वरारोहे तस्य पुत्रः प्रजायते॥ १५॥

भा० टी०—तर्पण और मार्जन उसी प्रकार गोदान विधिपूर्वक करायें। हे वरारोहे! ऐसा करने से उसके पुत्र उत्पन्न होता है॥ १५॥

गुणज्ञः सर्ववस्तूनां साधूनां संमतस्तथा।
स्वर्णदानं विशालाक्षि पलपञ्चमितं तथा॥ १६॥

भा० टी०—उसका पुत्र संपूर्ण वस्तुओं के गुणों को जानने वाला और सज्जनों में सम्मानित होता है। हे विशालाक्षि! पांच पल सुवर्ण का दान करें॥ १६॥

ब्राह्मणाय ततो दद्यात्पूजयेद्युवतिं ततः।
वस्त्रालंकारसिन्दूरैर्गन्धाद्यैः सुमनोहरैः॥ १७॥

भा० टी०—दान ब्राह्मण को दें और पश्चात् युवती स्त्री का पूजन करें वस्त्र, आभूषण, सिंदूर, गंध आदि मनोहर वस्तुओं से॥ १७॥

ताटङ्कैर्मुद्रिकाभिश्च गन्धमाल्यैस्तथैव च।
सर्वपापं क्षयं याति व्याधिनाशो भवेद्ध्रुवम्॥ १८॥

भा० टी०—ताटंक आभूषणों से, मुद्रिकाओं से, गंधमालाओं से पूजन करें तो संपूर्ण पापों का नाश होता है और व्याधि भी नष्ट होती है॥ १८॥

ब्राह्मणीं पार्वतीरूपां ब्राह्मणं शिवरूपिणम्।
भोजयेद्विविधैश्चान्नैर्मोदकैः शतसंख्यकैः॥ १९॥

भा० टी०—ब्राह्मणी को पार्वती के रूपवाली समझकर और ब्राह्मण को शिव रूप समझकर लड्डुओं से भोजन करायें अन्य और भी सेकड़ों विधि से पदार्थों से तृप्त करें॥ १९॥

काकवन्ध्या लभेत्पुत्रं मृतवत्सा च पुत्रिणी।
कन्यकाजननी या तु पुत्रवत्यपि जायते॥ २०॥

भा० टी०—ऐसा करने से काकवंध्या स्त्री के गर्भ से पुत्र जन्मता है, मृतवत्सा भी पुत्र वाली होती है और कन्या जन्मने वाली स्त्री भी पुत्र वाली होती है॥ २०॥

एवं न जायते चेत्तु सप्तजन्मस्वपुत्रकः॥ २१॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे उत्तराषाढानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम षडशीतितमोऽध्यायः॥ ८६॥

भा० टी०—ऐसा नहीं करने से सात जन्म तक भी वह अपुत्र रहता है॥ २१॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे उत्तराषाढानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम षडशीतितमोऽध्यायः॥ ८६॥

॥ ८७ ॥

उत्तराषाढानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

गुर्जरे नगरे देवि न्यवसज्ज्ञानवान् द्विजः।
बलभद्रः समाख्यातो वेदानां पाठकः सुधीः॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे देवि! गुर्जर नामक नगर में एक ज्ञानवान् ब्राह्मण वास करता था, बलभद्र नाम से विख्यात वह वेदों का पाठ करने वाला सुंदर बुद्धि वाला था॥ १ ॥

ऋग्वेदं च यजुर्वेदं सामवेदमथर्वणम्।
पठितं चैव कुरुते चतुर्वेदी द्विजोत्तमः॥ २ ॥

भा० टी०—ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद-इन सबका पाठ करता था, ऐसा वह चार वेद युक्त सभी ब्राह्मणों में उत्तम हुआ॥ २ ॥

एकस्मिन् दिवसे देवि देशे कश्चिन्मृतः खलु।
भोजनं तेन संस्कारं विना तत्र कृतं प्रिये!॥ ३ ॥

भा० टी०—हे देवि! एक दिन उस देश में कोई मनुष्य मृत्यु को प्राप्त हुआ, वहां हे प्रिये! संस्कार किये विना उस ब्राह्मण ने भोजन कर लिया॥ ३ ॥

म्लेच्छद्रव्यं गृहीतं च भुक्तं पुत्रयुतेन च।
पत्न्या सह वरारोहे ततो वृद्धवयो गतः॥ ४ ॥

भा० टी०—म्लेच्छ के धन को दान में ले लिया और पुत्र सहित भोगता गया हे वरारोहे! पश्चात् वृद्ध अवस्था को प्राप्त हुआ॥ ४ ॥

मरणं तस्य वै जातं शंकेश्वरपुरे यदा।
यमाज्ञया तदा देवि यमदूतैरितस्ततः॥ ५ ॥

नरके पातितं पश्चान्मर्त्यलोके ततोऽगमत्।
कुक्कुटत्वं विशालाक्षि काकं पारावतं ततः॥ ६ ॥

भा० टी०—फिर शंकेश्वरपुर में वह मृत्यु को प्राप्त हुआ, हे देवि! तब धर्मराज की आज्ञा से धर्मराज के दूतों ने उसे भटकाते हुए नरकों में गिराया फिर मुर्गा, कौआ, कबूतर-इन शरीरों को प्राप्त हुआ॥ ५ ॥ ६॥

मानुषत्वं पुनर्लेभे शुभे देवि कुले महत्।
स पण्डितो महाविद्वान् ज्ञातिधर्मविचक्षणः॥ ७॥

भा० टी०—हे देवि! पश्चात् मनुष्य शरीर को प्राप्त हुआ, बड़े सुंदर कुल में जन्म लेकर महाविद्वान् पण्डित और ज्ञातिधर्म को जानने वाला है॥ ७॥

पूर्वजन्मनि देवेशि म्लेच्छान्नभोजनं कृतम्।
तेन पापेन भो देवि पुत्रः कन्या न जायते॥ ८॥

भा० टी०—हे देवेशि! पूर्व जन्म में उसने म्लेच्छ के अन्न का भोजन किया, हे देवि! उस पाप से उसके पुत्र, कन्या का जन्म नहीं होता॥ ८॥

प्रेतान्नभोजनं कृत्वा संस्कारो न कृतः पुरा।
तेन पापेन भो देवि शरीरे रोगसंभवः॥ ९॥

भा० टी०—और पूर्व जन्म में प्रेत के अन्न का भोजन करके संस्कार नहीं किया। हे देवि! उस पाप से उसके शरीर में रोग सदा रहता है॥ ९॥

अस्य शान्तिं शृणुष्वादौ पूर्वपापप्रणाशिनीम्।
गृहवित्ताष्टमं भागं ब्राह्मणाय प्रकल्पयेत्॥ १०॥

भा० टी०—अब पूर्वजन्म के पूर्वपाप को नाश करने वाली इसकी शांति को कहता हूँ, तुम ध्यान से सुनो, घर में जो धन हो, उसके अष्टम भाग को ब्राह्मण को श्रद्धापूर्वक दान कर दें॥ १०॥

गायत्रीमूलमन्त्रेण दशायुतजपं ततः।
हवनं तद्दशांशेन मार्जनं तर्पणं तथा॥ ११॥

भा० टी०—और गायत्री के मूल मंत्र का एक लाख तक जप करायें और उसके दशांश का हवन तथा तर्पण और मार्जन करायें॥ ११॥

दशवर्णा ततो दद्याच्छय्यादानं विशेषतः।
कूष्माण्डं नारिकेरं च पञ्चरत्नसमन्वितम्॥ १२॥

भा० टी०—दशवर्ण की गायों का दान तथा विशेष करके शय्या का दान करें पेठा, नारियल इनमें पंचरत्न भरकर तैयार करें॥ १२॥

गङ्गामध्ये प्रदातव्यं पूर्वपापप्रणाशनम्।
एवं कृते वरारोहे शीघ्रं पुत्रः प्रजायते॥ १३॥

भा० टी०—इनका गंगाजी के मध्य में दान करने से पूर्वपापों का नाश होता है, हे वरारोहे! ऐसा करने से शीघ्र ही पुत्र जन्मता है॥ १३॥

व्याधयः संक्षयं यान्ति काकवन्ध्या लभेत्सुतम्॥ १४॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे उत्तराषाढानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम सप्ताऽशीतितमोऽध्यायः॥८७॥

भा० टी०—और उसकी व्याधि नष्ट होती है, काकवंध्या स्त्री भी पुत्र को प्राप्त करती है॥ १४॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां भाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे उत्तराषाढानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम सप्ताशीतितमोऽध्यायः॥८७॥

॥ ८८ ॥

श्रवणनक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

पवनस्य महादेशे मारुते नगरे शुभे।
गौतमो नाम विख्यातो ब्राह्मणो वेदपारगः ॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—पवन के विशाल देश में मारुत नामक सुंदर नगर में गौतम नाम से विख्यात वेद को जानने वाला ब्राह्मण रहता था॥ १ ॥

तस्य भार्या विशालाक्षि मालिनी मातृपालिनी।
धनं च बहु संगृह्य म्लेच्छसेवारतो हि सः ॥ २ ॥

भा० टी०—हे विशालाक्षि! उसकी स्त्री मालिनी नाम वाली माता की सेवा करने वाली थी, वह ब्राह्मण बदले में धन लेकर म्लेच्छों की सेवा में रत रहता था॥ २ ॥

तस्य मित्रो द्विजः कश्चित् तपस्वी सत्यवाक् शुचिः।
आगतस्तस्य निकटे प्रेम्णा तत्र तपोऽकरोत्॥ ३ ॥

भा० टी०—उसका मित्र कोई ब्राह्मण तपस्वी, सत्य बोलने वाला तथा पवित्र मन वाला था, वह उसके समीप आकर प्रेम से वहाँ तप करने लगा॥ ३ ॥

अब्दे चैके ततो जाते पुनः काश्यां गतोऽपि सः।
स्वर्णरत्नं महादेवि गौतमाय समर्पितम्॥ ४॥

भा० टी०—एक वर्ष पश्चात्, हे महादेवि! सुवर्ण रत्न गौतम को समर्पण करके वह काशी को गया॥ ४॥

रक्षार्थं तेन द्रव्यं च गृहीतं गौतमेन च।
वाराणस्यां ततो गत्वा तपस्वी प्राणमत्यजत्॥ ५ ॥

भा० टी०—उसने कहा कि द्रव्य की रक्षा करना, तब गौतम ने रक्षा के निमित्त वह द्रव्य ग्रहण किया, फिर वह तपस्वी काशी में जाकर मर गया॥ ५ ॥

गौतमेन तु स्वद्रव्यं स्थापितं भूमिमध्यके।
तद्द्रव्यं ब्राह्मणस्यैव पुत्रदारयुतेन च॥ ६ ॥

भा० टी०—और गौतम ने अपना धन तो भूमि में गाड़ दिया, उस ब्राह्मण के धन को स्त्री-पुत्र से युक्त होकर भोगता रहा॥ ६॥

भक्षितं तेन विक्रीय बहुवर्षे गते शिवे!
गौतमस्य ततो मृत्युर्वृद्धे जाते वरानने!॥ ७॥

भा० टी०—हे शिवे! उस स्वर्ण रत्न को बेचकर उसने बहुत वर्ष व्यतीत किये पश्चात् वृद्ध होने पर गौतम की मृत्यु हुई॥ ७॥

गन्धर्वस्य ततो लोकं विंशतिर्वै सहस्रकम्।
तेन भुक्तं विशालाक्षि गन्धर्वैः सह किन्नरैः॥ ८॥

भा० टी०—फिर हे विशालाक्षि! बीस हजार वर्षों तक गंधर्व लोक को गंधर्व किन्नरों के साथ भोगता रहा॥ ८॥

ततः पुण्यक्षये जाते हंसयोनि ततोऽगमत्।
मृगयोनिं ततो भुक्त्वा मानुषत्वं ततोऽगमत्॥ ९॥

भा० टी०—पुण्य पुरा होने पर वह हंस योनि में जन्मा, पश्चात् मृगयोनि में जन्मा, वह उन योनियों को भोग कर मनुष्य शरीर में पैदा हुआ॥ ९॥

स भाग्यवान् महाधीरः पुण्याचारे सदा मतिः।
पूर्वजन्मनि देवेशि मित्रद्रव्यविनाशनम्॥ १०॥

भा० टी०—वह बड़े भाग्य वाला, महाधीर, पुण्य कर्म में सदा मति रखने वाला है। हे देवेशि! इसने पूर्वजन्म में मित्र के धन का नाश किया था॥ १०॥

अदत्तं यद्विशालाक्षि तेन पापेन तत्प्रिया।
वन्ध्या भवति वै नारी काकवन्ध्या च जायते॥ ११॥

भा० टी०—हे विशालाक्षि! जो इसने मित्र का धन उसको नहीं दिया था उस पाप से इसकी स्त्री काकवंध्या हुई॥ ११॥

रोगयुक्तोऽभवद्देहो ज्वराश्च विविधास्तथा।
अस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणु देवि सुशोभने!॥ १२॥

भा० टी०—हे देवि! उसकी देह रोग से युक्त है। उसके शरीर में नाना प्रकार के ज्वर रहते हैं, अब इसकी शांति को कहता हूँ। सुनो॥ १२॥

गृहवित्तषडंशेन पुण्यकार्यं च कारयेत्।
वापीकूपतडागानि जीर्णोद्धारं च कारयेत्॥ १३॥

भा० टी०—घर के षडांश धन को पुण्य हेतु दान करें बावड़ी, कूआँ, तालाबों का जीर्णोद्धार करें॥ १३॥

गायत्रीमूलमन्त्रेण दशायुतजपं ततः।
हवनं तद्दशांशेन पुण्यकार्यं च कारयेत्॥ १४॥

भा० टी०—गायत्री के मूल मंत्र का एक लाख तक जप करायें उसके दशांश का हवन करायें ऐसे पुण्यकर्म करायें॥ १४॥

गामेकां तरुणीं शुभ्रां कांस्यदोहां सवत्सकाम्।
सतीं सवस्त्रां विप्राय दद्याद्वेदविदे ततः॥ १५॥

भा० टी०—एक युवा, सुंदर रूप वाली, सवत्सा कांस के दोहन पात्र युक्त सुंदर जरीवनी पीठ वस्त्र उठा कर वेद को जानने वाले ब्राह्मण को दान करें॥ १५॥

ब्राह्मणान्भोजयेद्दत्वा यथा शक्त्या तु दक्षिणाम्।
ज्ञातिभिः सह भुञ्जीत ततो नृत्यं तु कारयेत्॥ १६॥

भा० टी०—दान देकर ब्राह्मणों को भोजन करायें और अपनी शक्ति के अनुसार दक्षिणा दें और अपने भाइयों के संग भोजन करें पश्चात् नृत्य करायें॥ १६॥

पुराणश्रवणं देवि चण्डिकाचरणार्चनम्।
अन्नदानं च भो देवि घृतदानं विशेषतः॥ १७॥

भा० टी०—हे देवि! पुराणों का श्रवण करें और देवी के चरणों का पूजन करें हे देवि! अन्न का दान और घृत का दान विशेष करके करायें॥ १७॥

एवं कृते न संदेहो वंशवृद्धिर्भविष्यति।
रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति सुखानि विविधानि च॥ १८॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे श्रवणनक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नामाऽष्टाशीतितमोऽध्यायः॥ ८८॥

भा० टी०—ऐसा करने से वंश की वृद्धि होती है, इसमें संदेह नहीं करना। रोग सब नष्ट होते हैं अनेक प्रकार के सुख प्राप्त होते हैं॥ १८॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे श्रवणनक्षत्र० प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नामाऽष्टाशीतितमोऽध्यायः॥ ८८॥

॥ ८९ ॥

श्रवणनक्षत्रस्य द्वितीचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

गान्धारदेशे वै शुभ्रे गान्धारस्य पुरे शुभे।
वसन्ति तत्र बहवो जनाः पुण्योपजीविनः॥ १॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—अत्यन्त गांधार देश में सुंदर गांधार नामक पुर है, वहाँ पुण्योपजीवी जन अर्थात् पुण्य से जीने वाले नागरिकजन निवास करते हैं॥ १॥

तन्मध्ये ब्राह्मणोऽप्येको लक्ष्मीवान् गुणवर्जितः।
यवनानां महन्मित्रं सार्द्धं म्लेच्छेन तिष्ठति॥ २॥

भा० टी०—उन के मध्य एक लक्ष्मी (धन) से युक्त गुणहीन ब्राह्मण म्लेच्छों के संग स्थित रहता था॥ २॥

ऊर्णादिकं वरारोहे विक्रयं कुरुते सदा।
म्लेच्छान्नं भुज्यते नित्यं म्लेच्छभार्याविहारकृत्॥ ३॥

भा० टी०—हे वरारोहे! वह ब्राह्मण ऊन का सदा विक्रय करता था और नित्य म्लेच्छों के अन्न का भोजन करता था और म्लेच्छों की स्त्रियों से प्रेमपूर्वक विहार करता था॥ ३॥

एवं बहु वयो जातं ततो वै मरणं खलु।
यमदूतैर्महाघोरैर्नरकेऽत्यन्तदारुणे॥ ४॥

भा० टी०—ऐसा करते हुए बहुत अवस्था व्यतीत हो गई, वृद्ध होकर पश्चात् मृत्यु को प्राप्त हुआ, तब धर्मराज के महाघोर दूतों ने उसे दारुण नरक में डाल दिया॥४॥

निक्षिप्तं तेन वै देवि षष्टिवर्षसहस्त्रकम्।
भुक्तं सुदुःसहं कर्म विविधं नरके फलम्॥ ५॥

भा० टी०—तब वहाँ उसने साठ हजार वर्षों तक अपने दुःसहकर्म के कारण हे देवि! नाना प्रकार के नरकों के फल को भोगा॥ ५॥

नरकान्निःसृतो देवि वृकयोनिरभूत्पुरा।
रासभस्य ततो योनिमृक्षत्वेऽभूत्पुनः प्रिये!॥ ६॥

भा० टी०—हे देवि! नरक से निकल कर बाघ की योनि में जन्मा, पश्चात् गधे की योनि में जन्मा, फिर हे प्रिय! रीछ की योनि में जन्म लिया॥ ६॥

मानुषत्वं पुनर्लेभे मध्यदेशे सुरेश्वरि!
पूर्वजन्मनि म्लेच्छान्नं भुक्तं पुत्रेण वै शिवे!॥ ७॥

भा० टी०—हे सुरेश्वरि! फिर मध्य देश में मनुष्य शरीर को प्राप्त हुआ, हे शिवे! पूर्वजन्म में उसने अपने पुत्र व स्त्री सहित म्लेच्छों के अन्न का भोजन किया था॥ ७॥

अतो वंशस्य विच्छेदो व्याधीनां चोद्भवस्तथा।
अस्य दोषस्य वै शान्तिं शृणु मे परमेश्वरि!॥ ८॥

भा० टी०—इस प्रकार पूर्वजन्म कर्मफल से उसके वंश का विच्छेदन और उसके शरीर में अनेक व्याधियों की उत्पत्ति होती है। हे परमेश्वरि! इस पूर्वजन्म के दोष की शांति को मुझसे सुनो॥ ८॥

गायत्रीमूलमन्त्रेण लक्षजाप्यं वरानने!
हवनं तद्दशांशेन तर्पणं मार्जनं तथा॥ ९॥

भा० टी०—हे वरानने! गायत्री मंत्र का एक लाख तक जप करायें उसके दशांश हवन, तर्पण, मार्जन करायें॥ ९॥

सवृषं पञ्चगोदानं वस्त्रदानं विशेषतः।
सहस्त्रघटदानं च गोदानं च सुरेश्वरि!॥ १०॥

भा० टी०—हे सुरेश्वरि! वृषभ (बैल) सहित पाँच गायों का दान करें तथा विशेष करके वस्त्रों का दान करें हजार घटों का दान और गोदान—ये सब श्रद्धा सहित कराये॥ १०॥

एवं कृते न संदेहो वंशवृद्धिर्भविष्यति।
रोगा विनाशमायान्ति नात्र कार्या विचारणा॥ ११॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे श्रवणनक्षत्रस्य द्वितीचरणप्रायश्चित्तकथनं नामैकोननवतितमोऽध्यायः॥ ८९॥

भा० टी०—ऐसा करने से वंश की वृद्धि होती है इसमें संदेह नहीं है और सम्पूर्ण रोग नष्ट होते हैं इसमें कुछ भी सन्देह नहीं करना॥ ११॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे श्रवणनक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नामैकोननवतितमोऽध्यायः॥ ८९॥

॥ ९० ॥

श्रवणनक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

काश्मीरनगरे देवि ब्राह्मणोऽध्यवसत्पुरा।
खण्डशर्मेति विख्यातो गङ्गाख्या स्त्री तु कर्कशा ॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे देवि! काश्मीर नगर में बहुत पहले एक ब्राह्मण वास करता था, वह खंडशर्मा नाम की विख्यात था और गंगा नाम की उसकी स्त्री बड़ी कर्कशा थी ॥ १ ॥

पतिवाक्यं न साकार्षीद्विक्रयं कुरुते सदा।
घृततैलं च देवेशि दधि तक्रं पुनर्गुडम् ॥ २ ॥

भा० टी०—हे देवेशि! वह पति के वचन को सहन नहीं करती थी सदा घृत, तेल, दधि, तक्र तथा गुड को बेचा करती थी ॥ २ ॥

अश्वं च वृषभं चैव चामरं धातुवस्तु च।
प्रत्यहं विक्रयं कर्त्री व्ययकर्त्री दिने दिने ॥ ३ ॥

भा० टी०—घोड़ा, वृषभ, चमर, धातुमय वस्तु—इन सब को नित्य बेचती थी ॥३ ॥

एवं सर्वं वयो जातं वृद्धे सति वरानने!
मरणं तस्य वै जातं ब्राह्मणस्य तदा शिवे! ॥ ४ ॥

भा० टी०—इसप्रकार संपूर्ण अवस्था व्यतीत हो गई, तब उसके वृद्ध होने पर हे वरानने! उस ब्राह्मण की मृत्यु हो गयी ॥ ४ ॥

धर्मराजाज्ञया दूतैर्नरके कर्दमे तथा।
निक्षिप्तः षष्टिसाहस्त्रं भुक्त्वा वै यातना तथा ॥ ५ ॥

भा० टी०—धर्मराज की आज्ञा से दूतों ने कर्दम नामक नरक में साठ हजार वर्षों तक उसे पटका, वहाँ पीड़ा को भोग कर ॥ ५ ॥

नरकान्निःसृतो देवि वृकयोनिस्ततोऽभवत्।
रासभस्य पुनर्योनिर्मेषयोनिस्ततोऽभवत् ॥ ६ ॥

भा० टी०—नरक से निकल कर वह भेड़ की योनि को प्राप्त हुआ, फिर गधे को योनि फिर मेंढा की योनि प्राप्त हुआ ६॥

मानुषत्वं पुनर्लेभे मध्यदेशे वरानने!
धनधान्यसमायुक्तः पुत्रकन्याविवर्जितः॥ ७॥

भा० टी०—हे वरानने! पश्चात् वह मध्य देश में मनुष्य योनि को प्राप्त हुआ धनधान्य से युक्त और पुत्र-कन्या से हीन है॥ ७॥

पुनर्विवाहिता सा तु पूर्वजन्मफलाच्छुभे!
शरीरे सततं रोगा वायोः संजायते शिवे!॥ ८॥

भा० टी०—हे शुभे! पूर्वजन्म के फल से वही स्त्री उससे विवाही गई और इसके शरीर में निरंतर वायु के रोग रहते हैं॥ ८॥

ब्राह्मणस्य स्वयं धर्मं यतस्त्यक्तं पुरा शुभे!
अतः पुत्रविहीनेयं मृतवत्सात्वमाप्नुयात्॥ ९॥

भा० टी०—हे शुभे! क्योंकि पूर्वजन्म में इसने ब्राह्मण के धर्म त्याग दिये थे, इसलिये यह पुत्र-हीन है तथा उसकी स्त्री मृतवत्सा है॥ ९॥

अस्य शान्तिमहं वक्ष्ये शृणु देवि सुशोभने!
गृहवित्तषडंशं च ब्राह्मणाय समर्पयेत्॥ १०॥

भा० टी०—अब इसकी शांति कहता हूँ हे देवि! ध्यान से सुनो, घर के धन में से छठे द्रव्य भाग को ब्राह्मण को दान करें॥ १०॥

गायत्रीं चायुतं जप्त्वा मूलमन्त्रं शिवस्य तु।
षडक्षरं सप्रणवं लक्षमेकं वरानने!॥ ११॥

भा० टी०—और दश हजार गायत्री मंत्र का जप करवा कर हे वरानने! शिव के मूल मंत्र (ॐ नमः शिवाय) इस छह अक्षरों के मंत्र एक लाख जप करवायें॥ ११॥

हवनं तद्दशांशेन मार्जनं तर्पणं तथा।
ब्राह्मणान्भोजयेद्भक्त्या हविषा पायसेन च॥ १२॥

भा० टी०—उसका दशांश हवन, तर्पण तथा मार्जन करायें, फिर भक्ति सहित घृत, खीर आदि के भोजन से॥ १२॥

पञ्चाशत्संख्यया देवि यथाशक्त्या तु दक्षिणाम्।
प्रयागे माघमासे तु स्नानं भार्यासमन्वितः॥ १३॥

भा० टी०—पचास ब्राह्मणों को भोजन करायें, हे देवि! शक्ति के अनुसार दक्षिणा दें, माघ महीनें में स्त्री सहित होकर प्रयागजी में स्नान करें॥ १३॥

कूष्माण्डं नारिकेरं च पञ्चरत्नसमन्वितम्।
गङ्गामध्ये प्रदातव्यं विधिपूर्वं वरानने!॥ १४॥

भा० टी०—हे वरानने पेठे और नारियल को पाँच रत्न से भरके विधिपूर्वक गंगाजी के मध्य में दान करें॥ १४॥

एवं कृते न संदेहो वंशवृद्धिर्भवेदनु।
रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति वन्ध्या भवति पुत्रिणी॥ १५॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे श्रवणनक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम नवतितमोऽध्यायः॥ ९०॥

भा० टी०—ऐसा करनें से वंश की वृद्धि होती है, इसमें संदेह नहीं है और संपूर्ण रोग नष्ट होते हैं और वंध्या स्त्री पुत्र वाली होती है॥ १५॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां श्रवणन० तृतीयच० प्रायश्चित्तकथनं नाम नवतितमोऽध्यायः॥ ९०॥

॥ ९१ ॥

श्रवणनक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

अट्टकस्य प्रतीच्यां तु यादवं नाम वै पुरम्।
वसन्ति बहवो देवि जनाः कर्मविचक्षणाः ॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—अटक देश के पश्चिम की तरफ यादव नाम वाला पुर है, वहाँ बहुत से जन अपने-अपने कर्मों में निपुण होकर द्वह्ववास करते हैं ॥ १ ॥

तन्मध्ये ब्राह्मणोऽप्येकः सिद्धलाल इति श्रुतः।
तस्य भार्या विशालाक्षि देवीनाम्नी सदाशिवे! ॥ २ ॥

भा० टी०—उनके मध्य में एक सिद्धलाल नाम वाला ब्राह्मण रहता था, हे विशालाक्षि! उसकी स्त्री का नाम देवी थी ॥ २ ॥

पतिव्रता गुणोपेता मिष्टवाक्यप्रवादिनी।
सिद्धलालो महाचौरश्चौर्य्यवृत्तिरतः सदा ॥ ३ ॥

भा० टी०—वह पतिव्रता, गुणों से युक्त और मिष्ट वचन बोलने वाली थी और वह सद्धिलाल महाचोर था, सदा चोरी की वृत्ति किया करता था ॥ ३ ॥

दारपुत्रादिभृत्यानां चौर्येण पोषणं कृतम्।
एवं सर्वं वयो जातं ततो मृत्युमुपागमत् ॥ ४ ॥

भा० टी०—स्त्री, पुत्र, भृत्य आदि का पोषण (पालन), चोरी वृत्ति से ही वह किया करता था, ऐसे उसकी संपूर्ण अवस्था व्यतीत हो चुकी, तब वह मृत्यु को प्राप्त हुआ ॥ ४ ॥

तस्य भार्या सती जाता तत्प्रभावाद्गतो द्विजः।
सत्यलोके वरारोहे सततं विविधं सुखम् ॥ ५ ॥

भा० टी०— उसके मरने पर उसकी स्त्री सती हो गई। हे वरारोहे! उसके प्रभाव से वह ब्राह्मण सत्यलोक को प्राप्त हो गया और वहाँ वह अनेक प्रकार के सुखों को भोगता गया ॥ ५ ॥

भुक्तं पुर्वकृतात्पुण्यात्ततः पुण्यक्षये सति।
मानुषत्वे पुनर्जन्म दुर्लभं सर्वदेहिनाम्॥ ६॥

भा० टी०—पूर्वपुण्य के प्रभाव से उसने सब फल भोगे, पश्चात् पुण्य क्षीण होने पर सब देहधारियों को जो दुर्लभ है, ऐसे मनुष्य शरीर को प्राप्त किया॥ ६॥

धनधान्येन संयुक्तः कन्यापुत्रविवर्जितः।
ब्राह्मण्यं च यतस्त्यक्त्वा शूद्रकर्म समाचरत्॥ ७॥

भा० टी०—वह धनधान्य से युक्त है और पुत्र-कन्या से रहित है। इसने पूर्वजन्म में ब्राह्मण के कर्म को त्यागकर शूद्र भाव को प्राप्त किया था॥ ७॥

परद्रव्यं हृतं देवि तस्माद्व्याधिरजायत।
तस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि यत्कृतं पूर्वजन्मनि॥ ८॥

भा० टी०—और हे देवि! पराया द्रव्य हरा था, इसलिये इसके शरीर में रोग हैं। अब इसके पूर्वपापों की शांति कहता हूँ॥ ८॥

गृहवित्ताष्टमं भागं पुण्यकार्यं च कारयेत्।
दशवर्णाप्रदानं च पूर्वपापविशुद्धये॥ ९॥

भा० टी०—घर के धन में से आठवें भाग को पुण्य-कार्य में खर्च करें और दश वर्ण वाली गायों का दान पूर्वपाप की शुद्धि के लिये करना चाहिए॥ ९॥

शय्यादानं ततः कुर्यादेकादश्यां व्रतं शुभम्।
गायत्रीमूलमन्त्रेण विष्णुमन्त्रेण सुन्दरि!॥ १०॥

भा० टी०—फिर शय्या का दान करें पश्चात् उत्तम एकादशी का व्रत करें। हे सुदंरि! गायत्री के मूल मंत्र से अथवा विष्णु के मंत्र से॥ १०॥

लक्षजाप्यं प्रयत्नेनाऽश्वत्थबिल्वतलेऽबले!
दशांशहवनं कुर्यात्तर्पणं मार्जनं तथा॥ ११॥

भा० टी०—प्रयत्नपर्वक एक लाख तक जप करायें, हे अबले! पीपल अथवा बेल के वृक्ष के नीचे उसका दशांश हवन, उसका दशांश तर्पण और उतना ही मार्जन करायें॥ ११॥

विप्राणां भोजनं देवि घटदानं विशेषतः।
एवं कृते न संदेहो वंशो भवति नान्यथा॥ १२॥

भा० टी०—हे देवि! ब्राह्मणों को भोजन कराकर, घट-दान करें। ऐसा करने से वंश बढ़ता है, इसमें कुछ भी अन्यथा नहीं है॥ १२॥

व्याधयः संक्षयं यान्ति मम वाक्यं न चान्यथा॥ १३॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे श्रवणनक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं नामैकनवतितमोऽध्यायः॥ ९१॥

भा० टी०—संपूर्ण व्याधि नष्ट होती है, यह मेरा वचन अन्यथा नहीं है॥ १३॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहर० श्रवणनक्षत्र० चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं नामैकनवतितमोऽध्यायः॥ ९१॥

॥ ९२ ॥

धनिष्ठानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

देशे पञ्चनदे देवि गङ्गानाम्नी पुरी शुभा।
वसन्ति सर्वे वै वर्णा ब्राह्मणाः क्षत्रिया विशः ॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे देवि! पंचनद देश में गंगा नाम वाली पुरी थी उसमें ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य आदि सब जन निवास करते थे॥ १ ॥

स्वकर्मनिरताः सर्वे वर्णाचारसमाश्रिताः।
तन्मध्ये ब्राह्मणोऽप्येकः कृषिकर्मरतः सदा॥ २ ॥

भा० टी०—वर्ण और आचार में युक्त वे सभी अपने-अपने कर्मों में युक्त थे, जिन में एक ब्राह्मण कृषि कर्म में रत रहता था॥ २ ॥

एकस्मिन्समये तदीयभगिनीपुत्रो गृहे भिक्षुकः
प्राप्तस्तस्य बुभुक्षितो निशि तदा यष्ट्याऽहनत्तं खलः।
प्राप्तः कालकरालदन्तदलनं पुत्रः स्वसुस्तस्य
तत्पापात्सत्वरमाजगाम मरणं दुष्टः स्वयं चान्धधीः॥ ३ ॥

भा० टी०—एक समय उसकी बहन का पुत्र घर में भिक्षा लेने पहुँचा और वह भूख से पीड़ित था, तब रात्रि में उस कृषिकार ब्राह्मण ने अपना भानजा मार दिया और वह बहन का पुत्र कालकराल दंत दलन को प्राप्त हुआ, पश्चात् अंधबुद्धि वाला वह ब्राह्मण भी अपने आप ही काल को प्राप्त हुए॥ ३ ॥

यमदूतैर्महादेवि निक्षिप्तो नरकार्णवे।
अष्टाशीतिसहस्राणि वर्षाणि च तदा शिवे!॥ ४॥

भा० टी०— हे शिवे! तब यमराज के दूतों ने यमराज की आज्ञा पाकर समुद्र रूपी नरक में डाला, वहाँ अट्ठासी हजार वर्षों तक वास किया॥ ४॥

भुज्यते विविधं कष्टं नरकं चैव दारुणम्।
नरकान्निःसृतो देवि मार्जारत्वे भवेत्किल॥ ५ ॥

भा० टी०—हे शिवे! हे देवि! बहुत प्रकार के कष्टों को भोग कर नरक से निकल कर वह मार्जार की योनि को प्राप्त हुआ॥ ५॥

व्याघ्रस्य च पुनर्योनिं कुक्कुटत्वं ततोऽभवत्।
पुनर्मानुषयोनिं च धनधान्यसमन्वितम्॥ ६॥

भा० टी०—फिर बाघ की योनि को प्राप्त होकर मुरगे की योनि को प्राप्त हुआ, फिर मनुष्य-योनि को प्राप्त होकर धनधान्य से युक्त हुआ॥ ६॥

स प्रवीणो महावक्ता कुलाचाररतः सदा।
पूर्वजन्मनि भो देवि भागिनेयस्य वै वधः॥ ७॥

भा० टी०—हे देवि! बहुत चतुर था, अत्यन्त कथन करने वाला अपने कुल के आचार में रत रहता था और उसने पूर्वजन्म में भगिनी के पुत्र का वध किया था॥ ७॥

कृतो वै मन्दमतिना तत्पापेनेह दुःखभुक्।
पुत्रो न जायते देवि व्याधिश्चैव पुनः पुनः॥ ८॥

भा० टी०—इसप्रकार मंद बुद्धि वाला वह उस पाप से महाकष्ट को भोगता गया और उसके पुत्र की संतान नहीं हुई, बार-बार व्याधि से पीड़ित होता गया॥ ८॥

अस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणु मत्तो वरानने!
गृहवित्तषडंशेन पुण्यकार्यं च कारयेत्॥ ९॥

भा० टी०—अब हे वरानने! उसकी शांति को कहता हूँ, तुम ध्यान से सुनो अपने घर के द्रव्य में से छठे भाग का पुण्य कर दें॥ ९॥

गायत्रीत्र्यम्बकाभ्यां च द्यौः शान्तीति मनुत्रयम्।
लक्षत्रयं वरारोहे जपं वै कारयेत्सुधीः॥ १०॥

भा० टी०—गायत्री तथा त्र्यंबक मंत्र का जप, द्यौः शांतिः मनुत्रय का पाठ तथा तीन लाख तक जप करवायें॥ १०॥

दशांशहवनं देवि तर्पणं मार्जनं तथा।
ब्राह्मणान्भोजयेद्भक्त्या पञ्चाशच्च वरानने!॥ ११॥

भा० टी०—हे देवि! दशांश हवन उससे दशांश तर्पण उससे दशांश मार्जन करायें, हे वरानने! पचास ब्राह्मणों को भोजन करवायें॥ ११॥

हविषा पायसेनापि खण्डेन मोदकेन वै।
दशवर्णां ततो दानं तिलधेनुं प्रदापयेत्॥ १२॥

भा० टी०—साकल्य और क्षीर तथा खांड तथा मोदक से भोजन करायें और दशवर्ण वाली गायों का दान करें तिल धेनु का दान दें॥ १२॥

पञ्चपात्रं च संदाय पिण्डदानं च कारयेत्।
भागिनेयस्य वै मूर्तिः सुवर्णरजतान्विता॥ १३॥

भा० टी०—पाँच पात्रों का दान, पिंड-दान और भागिनेय की मूर्ति सुवर्ण तथा चांदी की बनवायें॥ १३॥

दशपलसुवर्णेन सवत्सां पीठसंयुताम्।
पूजयामास विधिवन्मन्त्रेणानेन वै शिवे!॥ १४॥

भा० टी०—दशपल प्रमाण से युक्त सवत्सा (बच्चे सहित) सिंहासन से युक्त सोने की मूर्ति बनवायें, हे शिवे! इस मंत्र से विधिवत्पूजन करें॥ १४॥

सुराराध्य जगत्स्वामिन् चराचरगुरो हरे!
मम पूर्वं कृतं पापं तत्क्षमस्व दयानिधे!॥ १५॥

भा० टी०—और हाथ जोड़ इसप्रकार कहें कि हे सुराराध्य! हे जगत् स्वामिन्! हे चराचरगुरो! हे हरे! हे दयानिधे! मेरे पहले किये हुए पापों को क्षमा करो॥ १५॥

अज्ञानाद्वा प्रमादाद्वा भागिनेयवधः कृतः।
तत् क्षमस्व दयापूर्ण त्र्यम्बक त्रिपुरान्तक!॥ १६॥

भा० टी०—हे दयापूर्ण! हे त्र्यंबक! हे त्रिपुरान्तक! अज्ञान से अथवा जानबूझकर से मैंने भागिनेय का वध किया था, इसलिए आप मुझे क्षमा करो॥ १६॥

ततो वै पूजयामास लोकपालान् पृथक् पृथक्।
पश्चान्माषबलिं दद्यात्प्रतिमां दापयेत्ततः॥ १७॥

भा० टी०—फिर लोक-पालों का पूजन कर, पृथक्-पृथक् पश्चात् माषबलि दें फिर मूर्ति का दान करें॥ १७॥

ब्राह्मणाय तदा देवि पूर्वपापविशुद्धये।
एवं कृते वरारोहे पुत्रः संजायते खलु॥ १८॥

भा० टी०—हे देवि! हे वरारोहे! ब्राह्मण को दान करें, पूर्वपाप की शुद्धि के लिये ऐसा करने से पुत्र निश्चय ही होता है॥ १८॥

व्याधयः संक्षयं यान्ति न कन्या जायते खलु।
यदा न क्रियते देवि सप्तजन्मस्वपुत्रकः॥ १९॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे धनिष्ठानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम द्विनवतितमोऽध्यायः ॥ ९२ ॥

भा० टी०—और हे देवि! व्याधि नाश को प्राप्त होती है, कन्या की संतान नहीं होती है और जो ऐसा नहीं करें तो सात जन्म पर्य्यंत पुत्र की प्राप्ति नहीं होती है ॥ १९ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे धनिष्ठान० प्रथमच० प्रायश्चित्तकथनं नाम द्विनवतितमोऽध्यायः ॥ ९२ ॥

॥ ९३ ॥

धनिष्ठानक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

पश्चिमायां महादेवि यवनस्य पुरं महत्।
महानन्द इति ख्यातः सर्वदेशे सुरेश्वरि!॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे देवि! हे सुरेश्वरि!! पश्चिम दिशा में यवन का पुर महानंद नाम से विख्यात था॥ १ ॥

वसन्ति बहवो म्लेच्छाः स्वविद्यायां विचक्षणाः।
ब्राह्मणास्तत्र वै देवि विद्यायां निपुणास्तथा॥ २ ॥

भा० टी०—हे देवि! उसमें बहुत से म्लेच्छ तथा म्लेच्छ-विद्या में निपुणजन वास करते थे और वहाँ ब्राह्मण भी विद्या में निपुण हुए और बहुत से लोग वास करते थे॥ २ ॥

तिष्ठत्यशङ्कया नित्यं म्लेच्छान्नं भुज्यते सदा।
स संध्यारहितो विप्रः पिशुनो दुर्मतिः शठः॥ ३ ॥

भा० टी०—और वहाँ एक ब्राह्मण शंका से रहित नित्य म्लेच्छान्न का भोजन करने वाला, संध्या से रहित, चुगली करने वाला, दुर्मति तथा शठ स्वभाव का था॥ ३ ॥

संचितं बहु साहस्त्रं स्वर्णरत्नगजादिकम्।
ततो बहुदिने जाते तस्य मृत्युरभूत्पुरा॥ ४ ॥

भा० टी०—सुवर्ण, रत्न, गज आदि उसने संचित किये। ऐसे बहुत सा समय व्यतीत होने पर उसकी मृत्यु हो गयी॥ ४ ॥

सर्पेण दष्टो देवेशि पञ्चके निर्जलेऽपि वा।
यमदूतैर्महादेवि यमाज्ञां गृह्य वै द्विजम्॥ ५ ॥

भा० टी०—हे देवेशि! वह ब्राह्मण निर्जल देश में सर्प से दंशित हुआ, अर्थात् सर्प के डँसने से पंचकों में वह मृत्यु को प्राप्त हुआ और उसे यमराज के दूतों ने यमराज की आज्ञा पाकर नरक में डाला॥ ५ ॥

रौरवे क्षिप्तवाञ्छीघ्रं महाकष्टं प्रभुज्यते।
षष्टिवर्षसहस्राणि भुक्त्वा नरकयातनाम्॥ ६॥

भा० टी०—रौरव नामक नरक में शीघ्र प्राप्त होकर महाकष्टों को भोगता गया और वहाँ साठ हजार वर्षों तक नरक के दु:खों को भोगता गया॥ ६॥

नरकान्निःसृतो देवि ग्राहयोनिरभूत्पुरा।
पुनः कच्छपयोनिश्च मानुषत्वं ततोऽभवत्॥ ७॥

भा० टी०—फिर हे देवि! नरक से निकल कर ग्राह की योनि को प्राप्त हुआ, फिर कछुए की योनि को प्राप्त होकर मनुष्य की योनि को प्राप्त हुआ॥ ७॥

पूर्वजन्मनि भो देवि ब्राह्मणत्वं यतोऽत्यजत्।
अपुत्रत्वं ततो देवि कन्यका नैव जायते॥ ८॥

भा० टी०—हे देवि! पूर्व जन्म में उसने ब्राह्मणवृत्ति को त्यागा। जिससे पुत्र रहित हुआ और उसकी कन्या भी नहीं हुई॥ ८॥

म्लेच्छान्नं भुज्यते देवि संध्यां च तर्पणं विना।
अतो व्याधियुतो नित्यं न सुखं लभते क्वचित्॥ ९॥

भा० टी०—हे देवि! उसने म्लेछ के अन्न भक्षण किया, संध्या, तर्पणादि से रहित रहा, इससे नित्य व्याधि युक्त हुआ तथा उसे सुख की किंचित् प्राप्ति भी नहीं हुई॥ ९॥

शान्तिं शृणु वरारोहे पूर्वपापप्रणाशिनीम्।
गृहं शुभ्रं वरारोहे धनधान्यसमन्वितम्॥ १०॥

भा० टी०—हे वरारोहे! पूर्व पाप का नाश करने वाली शांति को कहता हूँ। शुभ और शुभ घर को धनधान्य से युक्तकर॥ १०॥

संचितान्नं वरारोहे ब्राह्मणाय प्रदापयेत्।
गायत्रीमूलमन्त्रेण लक्षजाप्यं च कारयेत्॥ ११॥

भा० टी०—हे वरारोहे! संचित किए हुए अन्न सहित घर को ब्राह्मण को दान करें गायत्री के मूल मन्त्र का एक लाख तक जप करवायें॥ ११॥

हवनं तद्दशांशेन मार्जनं तर्पणं तथा।
त्रैमासिकव्रतं कुर्यात् व्रतं च रविसप्तमी॥ १२॥

भा० टी०—और उसका दशांश हवनादि करायें तथा त्रैमासिक व्रत निरंतर तीन महिनों तक समाप्त होने वाला व्रत करें और रवि से युक्त सप्तमी का व्रत करें॥ १२॥

जातवेदेति मन्त्रेण लक्षजाप्यं तु कारयेत्।
ततो गां कपिलां देवि स्वर्णवस्त्रविभूषिताम्॥ १३॥

भा० टी०—हे देवि! 'जातवेद'—मंत्र का एक लाख तक जप करवायें और कपिला गौ का दान विधिपूर्वक ब्राह्मण दें और स्वर्ण से भूषित वस्त्र युक्त कपिला गौ का दान करें॥ १३॥

दद्यात्सवस्त्रां विधिवद्ब्राह्मणाय शिवात्मने।
अश्वदानं च कर्तव्यं चामरं छत्रमेव च॥ १४॥

भा० टी०—और शिव स्वरूपी ब्राह्मण को अश्व का दान दें और चमर तथा छत्र का दान दें॥ १४॥

एवं कृते न संदेहो व्याधिनाशो भवेद्ध्रुवम्।
पुत्रोऽपि जायते देवि वन्ध्यत्वं च प्रशाम्यति॥ १५॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे धनिष्ठानक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम त्रिनवतितमोऽध्यायः॥ ९३॥

भा० टी०—हे देवि! ऐसा करने से व्याधि का नाश होता है और पुत्र की प्राप्ति होती है तथा वंध्यापन नष्ट होता है॥ १५॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां भाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे धनिष्ठानक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम त्रिनवतितमोऽध्यायः॥ ९३॥

॥ ९४ ॥

धनिष्ठानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

यत्किञ्चित्क्रियते कर्म वैदिकं चाप्यलौकिकम्।
तत्तत्कर्म फलं भोग्यमिह लोके परत्र च॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—जो कुछ वैदिक अथवा लौकिक कर्म इस संसार में किये जाते हैं उन उन कर्मों का फल इस लोक तथा परलोक में भोगा जाता है॥ १ ॥

सौराष्ट्रनगरे देवि क्षत्रियो वसति प्रिये!
क्षत्रधर्मरतो नित्यं मृगपक्षिप्रहारकः॥ २ ॥

भा० टी०—हे देवि! हे प्रिये!! सौराष्ट्र नामक नगर में एक क्षत्रिय वास करता था, वह क्षत्र धर्म में नित्य रत रहता हुआ मृग तथा पक्षियों को मारता था॥ २ ॥

एकस्मिन् समये काले वनं यातः सुदुर्मतिः।
मृगीं सगर्भां हतवान् बालकद्वयसंयुताम्॥ ३ ॥

भा० टी०—ऐसा करते हुए एक समय उस दुर्मति ने वन में जाकर सगर्भा मृगी को मारा वह मृगी दो बालकों से युक्त थी॥ ३ ॥

पुत्रेण भार्यया सार्द्धं भुक्तं तेन दुरात्मना।
ततो वृद्धे तु संजाते तस्य मृत्युरभूत् किल॥ ४ ॥

भा० टी०—और उस दुरात्मा ने पुत्र तथा भार्या से युक्त होकर मृगी का मांस भोगा, फिर वृद्ध होने पर उसकी मृत्यु हुई॥ ४ ॥

यमदूतैर्महादेवि नरके क्षिप्त एव सः।
षष्टिवर्षसहस्राणि भुक्त्वा नरकयातनाम्॥ ५ ॥

भा० टी०—हे देवि! तब उसे यमराज के दूतों ने यम की आज्ञा पाकर नरक में डाला, वहाँ साठ हजार वर्षों तक उसने नरक को भोगा॥ ५ ॥

नरकान्निःसृतो देवि महिषो जायते खलु।
वराहत्वं पुनर्जातं मानुषत्वं पुनर्भवेत्॥ ६ ॥

भा० टी०—हे देवि! नरक से निकलकर वह महिष योनि को प्राप्त हुआ, फिर वराह की योनि को प्राप्त होकर वहाँ से मनुष्य योनि को प्राप्त हुआ॥ ६॥

देशे पुण्यतमे देवि धनधान्यसमन्वितः।
विद्यावान् गुणवान् वक्ता राजसेवासु तत्परः॥ ७॥

भा० टी०—हे देवि! वह पवित्र देश में जन्मा है। धनधान्य से युक्त, विद्यावान् गुणवान् बहुत अच्छा कथन करने वाला, राज सेवा में तत्पर रहने वाला व्यक्ति है॥ ७॥

पूर्वजन्मनि देवेशि हत्वा मृगगणान्बहून्।
प्रसवोन्मुखीं मृगीं हत्वा मृगवृन्दसमन्विताम्॥ ८॥

भा० टी०—हे देवेशि! पूर्वजन्म में उसने मृगों के समूह को मार कर सगर्भा मृगी को उसके बच्चों सहित मार दिया था॥ ८॥

तत्पापेन महादेवि मृतवत्सत्वमाप्नुयात्।
शरीरे बहवो रोगा ज्वराश्चातुर्थिकास्तथा॥ ९॥

भा० टी०—उस पाप से हे महादेवि! इस जन्म में वह मृतवत्सता को प्राप्त हुआ। अर्थात् उसकी कोई संतान नहीं जीती है और उसके शरीर में बहुत से रोग हैं, चातुर्थिक नामक ज्वर से पीड़ित रहता है॥ ९॥

शान्तिं शृणु वरारोहे मृतवत्सत्वशान्तये।
गृहवित्तामष्टमं भागं पुण्यकार्ये च कारयेत्॥ १०॥

भा० टी०—हे वरारोहे! मृतवत्सत्व की शांति के लिये उसके प्रायश्चित को कहता हूँ—अपने घर के द्रव्य में से छठे भाग का दान करें॥ १०॥

गायत्रीमूलमन्त्रेण लक्षजाप्यं तु कारयेत्।
हवनं तद्दशांशेन मार्जनं तर्पणं ततः॥ ११॥

भा० टी०—गायत्री मूल के मंत्र का एक लाख तक जप करायें और उससे दशांश हवन और तर्पण तथा मार्जन करायें॥ ११॥

पलपञ्चसुवर्णस्य मृगीं वत्ससमन्विताम्।
कृत्वा समर्पयामास ब्राह्मणाय शिवात्मने॥ १२॥

भा० टी०—और पांच पल सुवर्ण की गर्भ से युक्त और बच्चे से युक्त मृगी की मूर्ति बनवायें और उसको संकल्प कर शिवस्वरूपी ब्राह्मण को दान करें॥ १२॥

दशवर्णां ततो दद्याच्छय्यादानं विशेषतः।
वाटिकारोपणं कुर्यात् पथि कूपं तथा शिवे!॥ १३॥

भा० टी०—हे शिवे! दश वर्ण वाली गायों का दान करें और विशेषता पूर्वक शय्या का दान करें मार्ग में धर्म-स्थान बनवायें तथा कूप का निर्माण करायें॥ १३॥

ब्राह्माणन् भोजयामास शतसंख्यान्स मोदकैः।
एवं कृते वरारोहे पुत्रः संजायते खलु॥ १४॥

भा० टी०—हे वरारोहे! सौ ब्राह्मणों को मोदकों का भोजन करायें ऐसा करने निश्चय ही पुत्र की प्राप्ति होती है॥ १४॥

व्याधयः संक्षयं यान्ति वन्ध्यात्वं च प्रशाम्यति।
मृतवत्सा तु या नारी सुतं सानुग्रहं लभेत्॥ १५॥

भा० टी०—व्याधि नाश को प्राप्त होकर बाँझपन की शांति होती है और मृतवत्सा स्त्री भी उत्तम पुत्र को प्राप्त करती है॥ १५॥

काकवन्ध्या पुनः पुत्रं लभते नात्र संशयः॥ १६॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे धनिष्ठानक्षत्रस्य
तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम चतुर्नवतितमोऽध्यायः॥ ९४॥

भा० टी०—और काकवंध्या स्त्री भी फिर पुत्र को प्राप्त करती है इसमें लेशमात्र भी संशय नहीं है॥ १६॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे धनिष्ठान०
तृतीचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम चतुर्नवतितमोऽध्यायः॥ ९४॥

॥ ९५ ॥

धनिष्ठानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच॥

मथुरादक्षिणे भागे योजने वै त्रयोपरि।
पुरं सिद्धमिति ख्यातं वसन्ति बहवो जनाः॥ १॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—मथुरा के दक्षिण भाग में तीन योजन पर सिद्धपुर नामक विख्यात नगर है वहाँ बहुत से जन वास करते थे॥ १॥

क्षिपकारो वसत्येको धनधान्यसमन्वितः।
बलभद्र इति ख्यातो वैष्णवो ज्ञानवल्लभः॥ २॥

भा० टी०—वहाँ एक क्षिपकार अर्थात् छिंपी वास करता था, वह धनधान्य से युक्त और बलभद्रनाम से प्रसिद्ध था, वह विष्णु भक्तज्ञान से प्रेम करने वाला था॥ २॥

तस्य पुत्रत्रयं जातं कनीयांस्तस्य चादरः।
नादरो ज्येष्ठपुत्रस्य मध्यमस्य तथैव च॥ ३॥

भा० टी०—इसप्रकार उसके तीन पुत्र हुए, जिन में कनिष्ठ का अर्थात् छोटे का आदर और ज्येष्ठ तथा मध्यम पुत्र का आदर नहीं करता था॥ ३॥

धनं च संचितं तेन महाशूद्रेण चानघे!
भ्रातृणां विग्रहो जातो विभागार्थं धनस्य तु॥ ४॥

भा० टी०—हे अनघे! उस महाशूद्र नें बहुत-सा धन संचित किया और भाइयों का धन के विभाग के लिए विग्रह अर्थात् लड़ाई होने लगी॥ ४॥

ब्राह्मणस्तस्य वै मित्रं विग्रहस्तेन वै श्रुतः।
आगतस्तस्य निकटे क्षिपकारस्य वै शिवे!॥ ५॥

भा० टी०—हे शिवे! उसका मित्र एक ब्राह्मण के युद्ध को सुनकर उस छींपी के समीप अर्थात् उसके घर आया॥ ५॥

ब्राह्मणस्य वधो जातः शूद्राणां विग्रहे सति।
सर्वं द्रव्यं कनिष्ठाय क्षीपकारो ददौ स्वयम्॥ ६॥

भा० टी०—उन शूद्रों के युद्ध में उस विप्र की मृत्यु हो गयी, सब द्रव्य उस शूद्र ने छोटे बेटे को दे दिया॥ ६॥

एवं बहुगते काले शूद्रस्य मरणं भवेत्।
रौरवं नरकं जातं क्षीपकाराय वै स्वयम्॥ ७॥

भा० टी०—इसप्रकार बहुत समय व्यतीत होने पर उस शूद्र की मृत्यु हुई, तब क्षिपकार को रौरव संज्ञक नरक की प्राप्ति हुई॥ ७॥

लक्षवर्षं वरारोहे भुक्त्वा नरकयातनाम्।
नरकान्निःसृतो देवि व्याघ्रयोनिस्ततोऽभवत्॥ ८॥

भा० टी०—हे वरारोहे! एक लाख वर्ष पर्यंत नरक के दु:खों को भोग कर फिर नरक से निकल कर बाघ की योनि को प्राप्त हुआ॥ ८॥

भुक्त्वा व्याघ्रस्य योनिं स काकयोनिस्ततोऽभवत्।
मानुषत्वं पुनर्जातं मध्यदेशे सुरेश्वरि!॥ ९॥

भा० टी०—हे सुरेश्वरि! फिर वहाँ से गधे की योनि को प्राप्त होकर काकयोनि को प्राप्त हुआ, फिर मध्य देश में मनुष्य योनि को प्राप्त हुआ॥ ९॥

धनधान्यसमायुक्तो रोगवान् पुत्रवर्जितः।
अस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणु मे परमेश्वरि!॥ १०॥

भा० टी०—हे परमेश्वरि! वह धनधान्य से युक्त है, किन्तु उसके शरीर में रोग हैं और पुत्र से रहित है। अब इसकी शांति को कहता हूँ, तुम ध्यान से सुनो॥ १०॥

गृहवित्तषडंशेन पुण्यकार्यं च कारयेत्।
पूर्वपापविशुद्ध्यर्थं दशवर्णां ददेत्ततः॥ ११॥

भा० टी०—अपनें घर के द्रव्य में से छठे भाग को पुण्य हेतु पूर्व पाप की शुद्धि के लिये दश वर्णों वाली गौओं का दान करें॥ ११॥

गायत्रीसूर्यमन्त्रेण लक्षजाप्यं वरानने!
दशांशहवनं देवि मार्जनं तर्पणं तथा॥ १२॥

भा० टी०—हे वरानने! गायत्री तथा सूर्य के मंत्र का एक लाख जप करवायें और उससे दशांश हवन, तर्पण तथा मार्जन करवायें॥ १२॥

दशांशं भोजयेद्विप्रान् ब्राह्मणान्वेदपारगान्।
कूष्माण्डं नारिकेरं च पञ्चरत्नसमन्वितम्॥ १३॥

भा० टी०—और उससे दशांश वेद का पारायण करने वाले ब्राह्मणों को भोजन करवायें और पंचरत्न से युक्त पेठे और नारियल का दान करें॥ १३॥

गङ्गामध्ये प्रदातव्यं देवि सत्यव्रताय च।
एवं कृते वरारोहे सर्वरोगक्षयो भवेत्॥ १४॥

भा० टी०—सत्य बोलने वाले ब्राह्मण को गंगा के मध्य में दान करें ऐसा करने से सारे रोगों का क्षय होता है॥ १४॥

वंशवृद्धिर्भवेत्तस्य नात्र कार्या विचारणा॥ १५॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे धनिष्ठानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम पञ्चनवतितमोऽध्यायः॥ ९५॥

भा० टी०—उसके वंश की वृद्धि होती है इसमें कुछ भी सन्देह नहीं करना॥१५॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां धनिष्ठानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम पञ्चनवतितमोऽध्यायः॥ ९५॥

॥ ९६ ॥

शतभिषानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच॥

मथुरायां विशालाक्षि आभीरस्तत्र तिष्ठति।
गोपालेति समाख्यातो सदा गोधनजीवितः॥ १॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—मथुरा नगर में एक आभीर संज्ञक जाति वाला गोपाल नाम से विख्यात गोधन से जीविका करने वाला व्यक्ति वास करता था॥ १॥

तस्य भार्या विशालाक्षी सती नामातिसुन्दरी।
गोधनं बहुसाहस्त्रं गोपालस्य सुरेश्वरि!॥ २॥

भा० टी०—हे सुरेश्वरि! उसकी भार्य्या सुन्दर नेत्रों वाली सती नाम से विख्यात थी, हे सुरेश्वरि! उस गोपाल के पास बहुत हजार गायों का धन था॥ २॥

वत्सानां वृषभानां च पालनं क्रियते सदा।
शीतकाले महादेवि वृष्टिर्जाता वरानने!॥ ३॥

भा० टी०—वह गौ-वत्सों का तथा वृषभों का पालन किया करता था, एक समय शीतकाल में महा वर्षा हो गयी॥ ३॥

गौः सवत्सा महादेवि पीडिता भोजनं विना।
गृहाऽभावे मृता बाह्ये वत्सेनैव च संयुता॥ ४॥

भा० टी०—हे महादेवि! गौ और बछड़े भोजन के बिना पीड़ित होते हुए घर के बिना खुले आकाश के नीचे अपने बछड़ों सहित गाएँ मृत्यु को प्राप्त हुईं॥ ४॥

ततो बहुगते काले गोपालस्य मृतिस्तदा।
यमदूतैर्महाघोरे नरके नाम कर्दमे॥ ५॥

भा० टी०—फिर बहुत-सा काल व्यतीत होने पर उस गोपाल की मृत्यु हुई और उसे यमराज के दूतों ने कर्दम संज्ञक महाघोर नरक में डाला॥ ५॥

क्षिप्तं यमाज्ञया देवि षष्टिवर्षसहस्त्रकम्।
नरकान्निःसृतो देवि भेकयोनिस्ततोऽभवत्॥ ६॥

भा० टी०—हे देवि! साठ हजार वर्षों तक नरक में रहकर फिर नरक से निकल कर मेंढक की योनि को प्राप्त हुआ॥ ६॥

सरटस्य ततो देवि मानुषत्वं ततोऽभवत्।
धनधान्यसमायुक्तो व्याधिना पीडितः सदा॥ ७॥

भा० टी०—हे देवि! फिर छिपकली की योनि को प्राप्त होकर पश्चात् धनधान्य से युक्त मनुष्य योनि को प्राप्त हुआ किन्तु सदा व्याधि से पीड़ित रहता है॥ ७॥

अपुत्रत्वं ततो लेभे कन्यका जायते खलु।
तस्य शान्तिमहं वक्ष्ये शृणु देवि सुशोभने!॥ ८॥

भा० टी०—हे देवि! हे सुशोभने! वह पुत्र से रहित है, उसे कन्या की प्राप्ति हुई, अब उसकी शांति कहता हूँ तुम ध्यान से सुने॥ ८॥

निर्बीजं वृषभं तेन कृतं योगेन वै शिवे!
तेन पापेन भो देवि गर्भपातः पुनः पुनः॥ ९॥

भा० टी०—हे शिवे! उसने पूर्वजन्म में वृषभ को निर्बीज किया था, अब (बैलवधिया) दैवयोग से उस पाप से उसकी पत्नी का बार-बार गर्भपात हुआ॥ ९॥

वसन्ते मासि वै कुर्य्याद् घटदानं सहस्त्रशः।
एकादशीव्रतं नित्यं वेण्याः स्नानं समाचरेत्॥ १०॥

भा० टी०—वसंत के महीने में एक हजार घटों का दान करें, एकादशी का नित्य व्रत करें, त्रिवेणी में स्नान करें॥ १०॥

दशवर्णगवां दानं शय्यादानं तथैव च।
आकृष्णेति जपं कुर्य्याल्लक्षसंख्यं वरानने!॥ ११॥

भा० टी०—हे वरानने! दश वर्णों वाली गायों का दान करें तथा शय्या-दान तथा आकृष्णे० इस मंत्र का एक लाख तक जप करायें॥ ११॥

दशांशं हवनं तद्वन्मार्जनं तर्पणं तथा।
भोजयेद्विविधैश्चान्नैर्ब्राह्मणान् श्रोत्रियान् शतम्॥ १२॥

भा० टी०—तथा उससे दशांश हवन, तर्पण और मार्जन भी दशांश करायें तथा सौ ब्राह्मणों को अनेक प्रकार के अन्नों से भोजन करायें॥ १२॥

पायसान्नेन खण्डेन घृतेन दधिना तथा।
एवं कृते न संदेहो ज्वरमोक्षः प्रजायते॥ १३॥

भा० टी०—खीर, खांड, दही, घृत—इनका भोजन करायें ऐसा करने से निश्चय ही ज्वर से छुटकारा मिलता है॥ १३॥

वंशवृद्धिर्भवेत्तस्य मृतवत्सा च पुत्रिणी।
काकवन्ध्या पुनः पुत्रं लभते नात्र संशयः॥ १४॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे शतभिषानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम षण्णवतितमोऽध्यायः॥ ९६॥

भा० टी०—उसके वंश की वृद्धि होती है मृतवत्सा स्त्री भी पुत्र को प्राप्त करती है काकवंध्या पुनः पुत्र को प्राप्त करती है इसमें थोड़ा भी संदेह नहीं है॥ १४॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे शतभिषानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम षण्णवतितमोऽध्यायः॥ ९६॥

॥ ९७ ॥

शतभिषानक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

मध्यदेशे महेशानि लुब्धको वसति प्रिये!
मृगारिर्नाम विख्यातो मृगमांसेन जीवति ॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे महेशानि! हे प्रिये!! मध्य देश में एक लुब्धक वास करता था वह मृगारि नाम से विख्यात था, मृगमांस से जीविका चलाता था ॥ १ ॥

प्रत्यहं मृगयां याति पक्षिणां मारणे रतः।
मासक्रयं च कुरुते कलत्रं पोषयेत्सदा ॥ २ ॥

भा० टी०—प्रतिदिन जंगल में शिकार पर जाकर पक्षियों को मारने में रत रहता था और मांस को बेचकर स्त्री आदि कुटुंब का पोषण किया करता था ॥ २ ॥

एवं वयो गतं सर्वं वृद्धे सति वरानने!
मरणं तस्य वै जातं यमदूतैर्यमाज्ञया ॥ ३ ॥

भा० टी०—हे वरानने! इसप्रकार उसकी सारी अवस्था व्यतीत होने पर बुढ़ापे में उसका मरण हुआ, तब उसे यमराज के दूतों ने यम की आज्ञा पाकर ॥ ३ ॥

रौरवे नरके क्षिप्तं तत्र कष्टं मुहुर्मुहुः।
सप्ततिर्वै सहस्राणि नरके परिपच्यते ॥ ४ ॥

भा० टी०—रौरव संज्ञक नरक में डाला, वहाँ बार-बार कष्टों को भोग कर सत्तर हजार वर्षों नरक में पकाया गया ॥ ४ ॥

नरकान्निःसृतो देवि श्येनयोनिं प्रजायते।
उष्ट्रस्य च पुनर्योनिं शृगालत्वं ततः पुनः ॥ ५ ॥

भा० टी०—फिर हे देवि! नरक से निकलकर बाज पक्षी की योनि को प्राप्त हुआ, तत्पश्चात् उष्ट्र की योनि को प्राप्त होकर गीदड़ की योनि को प्राप्त हुआ ॥ ५ ॥

मानुषत्वं ततो जातं धनधान्येन संयुतः।
पूर्वजन्मनि देवेशि पक्षिणो बहवो हताः ॥ ६ ॥

भा० टी०—फिर वहाँ से मनुष्य योनि को प्राप्त हुआ और धनधान्य से युक्त हुआ, पूर्वजन्म में उसने बहुत से पक्षी मारे थे॥ ६॥

तेन पापेन भो देवि व्याधिना पीडितो हि सः।
मृगं हत्वा वरारोहे हतं च मृगशावकम्॥ ७॥

भा० टी०—हे देवि! हे वरारोहे!! उस पाप के कारण यह व्याधि से पीड़ित हुआ, मृग तथा मृगों के बच्चों को मारने के कारण॥ ७॥

एतद्दोषेण भो देवि पुत्राणां मरणं खलु।
काकवन्ध्या भवेन्नारी कन्यका जायते सदा॥ ८॥

भा० टी०—हे देवि! इस दोष से निश्चय ही उसके पुत्रों का मरण होता है और उसकी पत्नी काकवन्ध्या स्त्री अथवा सदा कन्या को जन्म देने वाली स्त्री होती गई॥३८॥

वन्ध्या भवति वै नारी शान्तिं शृणु वरानने!
गृहवित्तषडंशेन पुण्यकार्यं च कारयेत्॥ ९॥

भा० टी०—हे वरानने! उसकी नारी वंध्या होती गई, अब इसकी शांति को कहता हूँ, तुम ध्यान से सुनो अपने घर के द्रव्य से छठे भाग का दान करें॥ ९॥

गायत्रीजातवेदाभ्यां लक्षजाप्यं वरानने!
दशांशं हवनं तद्वत्तर्पणं मार्जनं तथा॥ १०॥

भा० टी०—हे वरानने! गायत्री तथा जातवेद० इन मंत्रों का एक लाख तक जप करायें और उसका दशांश हवन, तर्पण, मार्जन आदि करायें॥ १०॥

दश धेनुस्ततो दद्यात्स्वर्णदानं विशेषतः।
हरिवंशश्रुतिं देवि व्रतं च हरिवासरम्॥ ११॥

भा० टी०—और हे देवि! दश गायों का तथा सुवर्ण का दान विशेषता पूर्वक करें हरिवंश का श्रवण करें और एकादशी का व्रत करें॥ ११॥

ब्राह्मणान् भोजयामास यथाशक्ति तु दक्षिणा।
एवं कृते वरारोहे वंशस्तस्य भविष्यति॥ १२॥

भा० टी०—हे वरारोहे! ब्राह्मणों को भोजन कराकर यथाशक्ति दक्षिणा दें, ऐसा करने से वंश की वृद्धि होती है॥ १२॥

वन्ध्यात्वं प्रशमं याति काकवन्ध्या पुनः सुतम्।
मृतवत्सा सुतं लेभे चिरञ्जीविनमुत्तमम्॥ १३॥

भा० टी०—बाँझपन की शांति होती है, काकवंध्या फिर पुत्र को प्राप्त करती है, मृतवत्सा स्त्री बहुत काल तक जीने वाले पुत्र को जन्म देती है॥ १३॥

व्याधयः संक्षयं यान्ति ज्ञानं च लभते क्वचित्॥ १४॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे शतभिषानक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम सप्तनवतितमोऽध्यायः॥ ९७॥

भा० टी०—और सभी व्याधियाँ दूर होकर उसे ज्ञान की प्राप्ति होती है॥ १४॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे शतभिषान० द्वितीय-चरणप्रायश्चित्तकथनं नाम सप्तनवतितमोऽध्यायः॥ ९७॥

॥ ९८ ॥

शतभिषानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

गोमतीनिकटे देवि पुरमस्ति धुरंधरम्।
वसन्ति बहवो देवि जना धर्मविचक्षणाः॥ १॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे देवि! गोमती के निकट धुरंधर नाम वाली पुरी है, वहाँ बहुत से जन धर्म में विचक्षण हो कर वास करते हैं॥ १॥

तन्मध्ये ब्राह्मणोऽप्येको ब्रह्मकर्मविवर्जितः।
द्यूतकर्मरतः सोऽपि वेश्यासुरततत्परः॥ २॥

भा० टी०—उनके मध्य में एक ब्राह्मण ब्रह्म कर्म से रहित, द्यूतकर्म में रत और वेश्याओं के संग रमण करता रहता था॥ २॥

मद्यपानरतो नित्यं वेदशास्त्रविनिन्दकः।
ततो बहुदिने देवि तस्य मृत्युरभूत्पुरा॥ ३॥

भा० टी०—नित्य मद्यपान करने वाला, वेदशास्त्र की निंदा करने वाला, इसप्रकार उसको बहुत दिन व्यतीत हुए तब उसकी मृत्यु हो गयी॥ ३॥

यमदूतैर्महाघोरैर्नरके तु निपातितः।
क्षिप्तस्सन्नरके घोरे लक्षवर्षं महेश्वरि!॥ ४॥

भा० टी०—हे महेश्वरि! उसे यमराज के दूतों ने घोर नरक में डाला, वहाँ एक लाख वर्ष पर्यंत उस घोर नरक में रहकर ॥ ४॥

नरकान्निःसृतो देवि वृकयोनिरभूत्पुरा।
वराहस्य पुनर्योनिनिर्गर्दभत्वं ततोऽभवत्॥ ५॥

भा० टी०—फिर हे देवि! नरक से निकलकर भेड़िये की योनि को प्राप्त हुआ, फिर शूकर की योनि को प्राप्त होकर बाद में गर्दभ की योनि को प्राप्त हुआ॥ ५॥

मानुषत्वं ततो लेभे देशे पुण्यतमे शुभे।
पूर्वजन्मनि देवेशि मद्यपानरतः सदा॥ ६॥

भा० टी०—फिर हे शुभे! हे देवेशि!! पुण्यतम देश में मनुष्य योनि को प्राप्त हो

गया है। दे देवेशि! यह पूर्वजन्म में मदिरापान करने में रत रहता था इसलिये रोग से युक्त उसका शरीर रहता है॥ ६॥

तेन पापेन भो देवि शरीरे रोगसंभवः।
द्यूतवेश्यारतो नित्यं यत्कृतं पूर्वजन्मनि॥ ७॥

भा० टी०—हे देवि! पूर्वजन्म में जो वह जुआ खेलने में और वैश्याओं के संग रमण करने में रत रहता था उस पाप से उसके शरीर में रोग हो गये हैं॥ ७॥

तत्पापेन महादेवि वंशच्छेदश्च जायते।
शान्तिं शृणु वरारोहे पूर्वपापप्रणाशिनीम्॥ ८॥

भा० टी०—हे महादेवि! उस पाप उसका वंश नष्ट होता है। हे वरारोहे! उस पाप की शांति को कहता हूँ पूर्व पाप के नाश के लिये॥ ८॥

गृहवित्तषडंशेन पुण्यकार्यं च कारयेत्।
विष्णोरराटमन्त्रेण लक्षजाप्यं वरानने!॥ ९॥

भा० टी०—अपने घर के द्रव्य में से छठे भाग को पुण्य हेतु दें और विष्णोरराट० इस मंत्र का एक लाख जप करायें॥ ९॥

दशांशं हवनं तद्वन्मार्जनं तर्पणं तथा।
ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चात्पञ्चाशच्च वरानने!॥ १०॥

भा० टी०—और उससे दशांश का हवन, तर्पण और मार्जन करवायें पश्चात् पंचाशत् (पचास) ब्राह्मणों को भोजन करवायें॥ १०॥

ततो गां कृष्णवर्णां च स्वर्णशृङ्गीं विभूषिताम्।
युक्तां वस्त्रसवत्सां च दद्याद्द्विजवराय च॥ ११॥

भा० टी०—फिर कृष्णा गौ को स्वर्ण शृंग युक्त तथा सवत्सा और वस्त्रादि से युक्त करके दान दें॥ ११॥

प्रतिमां तु ततः कुर्यात् विष्णोः साम्बस्य वा शिवे!
पलं दश सुवर्णस्य विष्णोर्मुक्ताविभूषिताम्॥ १२॥

भा० टी०—हे शिवे! तत्पश्चात् विष्णु भगवान् की मूर्ति और शिव की मूर्ति बनायें। विष्णु की मूर्ति को दश पल सुवर्ण की बनवा कर उसे मुक्ता आदि से विभूषित करें॥ १२॥

तद्वदेव शिवस्यैव रजतस्य वरानने!
नानावस्त्रैरलंकारैः पूजयित्वा यथाविधि॥ १३॥

भा० टी०—हे वरानने! इसीप्रकार चांदी की शिव की मूर्ति भी बनवायें और अनेक प्रकार के शिवजी को पहनाये जाने वाले अर्थात् बाघाम्बर, भस्म सर्प आदि वस्त्र-अलंकारादि से युक्त कर यथाविधि पूजन करें॥ १३॥

मन्त्रेणानेन देवेशि तद्वद्देवगणं नमेत्।
गरुडध्वज देवेश भूतनाथ दयानिधे!॥ १४॥

भा० टी०—इस मंत्र से गणों का पूजन करें, हाथ जोड़कर यह कहें कि, हे गरुडध्वज! हे देवेश! हे भूतनाथ! हे दयानिधे! इसप्रकार कहकर सब गणों का पूजन करें॥ १४॥

मम पूर्वकृतं पापं तत्क्षमस्व दयानिधे!
ॐ सुदर्शनाय नमः। ॐ त्रिशूलाय नमः। ॐ गरुडाय नमः।
ॐ भैरवाय नमः। ॐ जयाय नमः। ॐ विजयाय नमः।
ॐ बटुकाय नमः। ॐ कालभैरवाय नमः।
गन्धधूपादिभिर्देवि पूजयित्वा पृथक् पृथक्॥ १५

भा० टी०—हे दयानिधे! पूर्व जन्म में किये हुए मेरे पापों को क्षमा करो। ॐ सुदर्शनाय नमः १, ॐ त्रिशूलाय नमः २, ॐ गरुडाय नमः३, ॐ भैरवाय नमः४, ॐ जयाय नमः५, ॐ विजयाय नमः६, ॐ बटुकाय नमः ७, ॐ कालभैरवाय नमः८॥ हे देवि! ऐसे इनको पृथक्-पृथक् गंध, धूप, दीप—आदि समर्पित करें और उनकी यथाविधि पूजा करें॥ १५॥

प्रतिमां पूजितां तां तु विप्राय प्रददौ स्वयम्।
ततो विष्णुं नमस्कृत्य शिवं सर्वसुखप्रदम्॥ १६॥

भा० टी०—तत्पश्चात् उस मूर्ति को ब्राह्मण को दान देकर फिर भक्तिपूर्वक विष्णु भगवान् को और सर्वसुख-प्रदाता शिव को नमस्कार करें॥ १६॥

एवं कृते न संदेहः सर्वपापक्षयो भवेत्।
वंशवृद्धिर्भवेत्तस्य व्याधिनाशस्तथैव च॥ १७॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे शतभिषानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नामाऽष्टनवतितमोऽध्यायः॥ ९८॥

भा० टी०—ऐसा करने से निस्संदेह संपूर्ण पाप नष्ट होते हैं और सभी व्याधियाँ नष्ट होती हैं। आराधक के वंश की वृद्धि होती है॥ १७॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे शतभिषान० तृ० प्रायश्चित्तकथनं नामाष्टनवतितमोऽध्यायः॥ ९८॥

॥ ९९ ॥

शतभिषानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

पञ्चक्रोशमिते देवि मथुरा उत्तरे तथा।
हेमन्तपुरसद्ग्रामे वसन्ति बहवो जनाः ॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे देवि! मथुरा से उत्तर दिशा में पाँच कोश पर हेमंत पुर नामक उत्तम ग्राम है, उसमें बहुत से जन निवास करते हैं ॥ १ ॥

तन्मध्ये वैश्य एको हि क्रयविक्रयतत्परः।
स सुकर्मा इति ख्यातो धनं च बहुसंचितम् ॥ २ ॥

भा० टी०—उस नगर में खरीदने बेचने का व्यवहार करने वाला एक सुकर्मा नाम वाला वैश्य रहता था, उसने बहुत-सा धन संचित किया ॥ २ ॥

तस्य स्त्री पार्वती नाम रूपयौवनसंयुता।
वैश्यश्चैव महादेवि प्रौढिं यातः सुरेश्वरि! ॥ ३ ॥

भा० टी०—उसकी स्त्री पार्वती नाम वाली रूप और यौवन से सम्पन्न थी, हे देवि! जब वह वैश्य वृद्ध हो गया, तब ॥ ३ ॥

दरिद्रत्वं भवेद्देवि दरिद्रत्वात्सुपीडितः।
शतं पञ्च ऋणं नीतं ब्राह्मणस्य सुरेश्वरि! ॥ ४ ॥

भा० टी०—वह वैश्य दरिद्री हो गया। हे सुरेश्वरि! तब दरिद्रपन से पीड़ित होकर ब्राह्मण से पांच सौ रुपये ग्रहण किये ॥ ४ ॥

व्यापारार्थं विशालाक्षि न दत्तं ब्राह्मणाय वै।
सर्वं भुक्तं महादेवि बहुकाले गते सति ॥ ५ ॥

भा० टी०—हे देवि! व्यापार के लिये उसने वे रुपये लिए थे, किन्तु फिर ब्राह्मण को वापस नहीं दिये, ऐसा बहुत काल व्यतीत हो चुका ॥ ५ ॥

वैश्यस्यैव भवेन्मृत्युः सभार्यस्य वरानने!
मथुरायां विशालाक्षि लब्धं स्वर्गं वरं शुभम् ॥ ६ ॥

भा० टी०—तब वैश्य की मृत्यु हो गई। हे वरानने! मथुराजी में स्त्री-सहित वह वैश्य मरा, इसलिये उसको उत्तम स्वर्गलोक प्राप्त हुआ॥ ६॥

दशलक्षमितं स्वर्गं फलं भुक्त्वा वरानने!
ततः सह कलत्रेण पुनः पुण्यक्षये सति॥ ७॥

भा० टी०—दश लाख वर्षों तक स्वर्गवास भोग कर फिर वहाँ से पुण्य क्षीण होने पर तब वह स्त्री सहित॥ ७॥

मानुषत्वं पुनर्लेभे देशे शुभ्रे मनोहरे।
धनधान्यसमायुक्तो जायते वै सुरेश्वरि!॥ ८॥

भा० टी०—सुंदर मनोहर देश में मनुष्य योनि को प्राप्त हुआ है। हे सुरेश्वरि! वह धनधान्य से युक्त है॥ ८॥

पूर्वजन्मनि देवेशि ब्राह्मणस्य धनं हृतम्।
न दत्तं वै ततो देवि ततः पुत्रो न जायते॥ ९॥

भा० टी०—हे देवि! उसने पूर्वजन्म में ब्राह्मण का धन लिया था और बाद में वापस नहीं दिया इसलिये इसका पुत्र नहीं होता है॥ ९॥

ततः शान्तिं प्रवक्ष्यामि यतः पापस्य संक्षयः।
गृहवित्तषडंशेन पुण्यकार्यं च कारयेत्॥ १०॥

भा० टी०—अब इसकी वह शांति को कहता हूँ कि जिससे पूर्व पाप नष्ट हों घर के द्रव्य में से छठे भाग को पुण्य के कार्य में खर्च करें॥ १०॥

आकृष्णेति ततो मन्त्रलक्षजाप्यं च कारयेत्।
दशांशं हवनं कुर्याद्दशांशं तर्पणं तथा॥ ११॥

भा० टी०—'आकृष्णेनरज०'—इस मंत्र का एक लाख जप करवायें दशांश हवन, दशांश तर्पण और मार्जन करायें॥ ११॥

हरिवंशश्रुतिं देवि चण्डीपाठं शिवार्चनम्।
विधिवत्कारयामास ब्राह्मणानां च भोजनम्॥ १२॥

भा० टी०—हरिवंश को सुनें, विधिपूर्वक दुर्गा का पाठ और शिव का पूजन करवाकर ब्राह्मणों को भोजन करवायें॥ १२॥

दशवर्णा तु गौर्देया शय्यादानं विशेषतः।
एवं कृते वरारोहे वंशो भवति नान्यथा।
व्याधिनाशः समायाति मम वाक्यामृतं भवेत्॥ १३॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे शतभिषानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं नामैकोनशततमोऽध्यायः ॥ ९९ ॥

भा० टी०—दश प्रकार के वर्ण वाली गायों का दान और शय्या का दान करें, हे वरारोहे! ऐसा करने से वंश बढ़ता है, इसमें अन्यथा नहीं है और व्याधि नष्ट होती है, यह मेरा वचन सत्य है॥ १३॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे शतभिषानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं नामैकोनशततमोऽध्यायः ॥ ९९ ॥

॥ १०० ॥

पूर्वाभाद्रपदानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

मथुरापुरीमध्ये तु शूद्र एको हि तिष्ठति।
शाकादीनां च सततं विक्रयं तु सदाऽकरोत्॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—मथुरापुरी में एक शूद्र रहता था, वह निरंतर सदा शाक आदि को बेचा करता था॥ १ ॥

विष्णुभक्तिरतः शान्तः पुण्यात्मा साधुसंमतः।
सेवादास इतिख्यातस्तस्य पत्नी तु राधिका॥ २ ॥

भा० टी०—वह विष्णु का भक्त, शांत और पुण्यात्मा, साधुजनों द्वारा मान्य सेवादास नाम वाला व्यक्ति था, उसकी स्त्री राधिका नाम वाली थी॥ २ ॥

कुलाचारे रतः साधुर्द्विजसेवासु तत्परः।
वाणिज्यं कुरुते साधुः पुरोहितधनेन च॥ ३ ॥

भा० टी०—वह साधुजन अपने कुल के आचार में तथा साधुजनों की सेवा में तत्पर रहता था, वह पुरोहित के धन से वणिज कार्य किया करता था॥ ३ ॥

बहुवर्षे गते देवि ब्राह्मणोऽपि तदागतः।
आदरं बहुधा कृत्वा कलत्रेण तदा शिवे!॥ ४॥

भा० टी०—बहुत से वर्ष व्यतीत हो चुके, तब वह ब्राह्मण उसके घर पर आया, तब बहुत-सा आदर करके उसकी स्त्री ने॥ ४॥

विषं दत्तं चतुर्थेऽह्नि भोजनान्तर्विधानतः।
न जानाति तदा साधुस्तद्वृत्तं ब्राह्मणस्य तु॥ ५ ॥

भा० टी०—चौथे दिन भोजन के समय में उस ब्राह्मण को विष दे दिया, तब उस ब्राह्मण के वृत्तांत को वह साधु शूद्र तो नही जान पाया था॥ ५ ॥

मरणं वै ततो जातं ब्राह्मणस्य सुरेश्वरि!।
ब्राह्मणस्य वधे जाते हाहाकारो गृहे गृहे॥ ६ ॥

भा० टी०—हे सुरेश्वरि! जब ब्राह्मण की मृत्यु हो गयी तो तब ब्रह्मवध होने से उस घर में हाहाकार हो गया॥ ६॥

श्रुत्वा तच्च पुरीं त्यक्त्वा प्रयागे साधुरागतः।
देहं त्यक्त्वा तदा साधुर्हठं कृत्वा वरानने!॥ ७॥

भा० टी०—उस वार्त्ता को सुनकर वह साधु शूद्र अपनी पुरी को त्याग कर प्रयागजी में आकर हे वरानने! हठ पूर्वक अपनी देह का त्याग कर गया॥ ७॥

पश्चात्तत्रैव सा गत्वा पत्नी प्राणांस्ततोऽत्यजत्।
प्रयागे मथुरां त्यक्त्वा तदुद्देशेन शोभने!॥ ८॥

भा० टी०—हे शोभने! पश्चात् वह उस साधु की स्त्री भी मथुरापुरी को त्याग कर प्रयागजी में अपने पति के पास प्राणों को त्याग कर मर गयी॥ ८॥

बहुवर्षसहस्राणां स्वर्गवासस्ततोऽभवत्।
ततः पुण्यक्षये जाते मानुषत्वं ततोऽभवत्॥ ९॥

भा० टी०—फिर उनको बहुत हजार वर्षों तक स्वर्ग का वास हुआ, तब पुण्य क्षीण होने पर उन्हें मनुष्य योनि प्राप्त हुई है॥ ९॥

शूद्रयोनिं विशालाक्षि देहजस्य कुले तदा।
पुनर्विवाहिता पत्नी पूर्वजन्मप्रपञ्चतः॥ १०॥

भा० टी०—हे विशालाक्षि! अपने पुत्र के ही कुल में शुद्र-योनि में जन्मा है और पूर्व जन्म के प्रसंग से वही स्त्री फिर विवाही गयी है॥ १०॥

धनधान्यसमायुक्तो विद्यावान् कुलपूजितः।
गौराङ्गो नीचजातीनां मतज्ञो लब्धवान् स्वयम्॥ ११॥

भा० टी०—वह धनधान्य से युक्त है, विद्यावान् और कुल में पूजित है, गौरवर्ण वाला और नीच जातियों के मत को अपने आप ही जानता है॥ ११॥

पूर्वजन्मनि भो देवि ब्राह्मणाय विषं ददौ।
भार्या तस्य विशालाक्षि तत्पापेनैव पातकी॥ १२॥

भा० टी०—हे देवि! पूर्वजन्म में उसकी स्त्री ने ब्राह्मण को विष दिया था, उस पाप से उसकी स्त्री पातक वाली (पाप करने वाली) है॥ १२॥

मासि पुष्पं ततस्तस्याः संतानं नैव जायते।
अस्य पापस्य वै शान्तिं शृणु देवि सुशोभने!॥ १३॥

भा० टी०—जिससे वह प्रत्येक महीने रजस्वला होती है, परंतु संतान नहीं ठहरती हे देवि! हे शोभने!! इसकी शांति को सुन॥ १३॥

गृहवित्ताष्टमं भागं पुण्यकार्यं च कारयेत्।
गायत्रीजातवेदाभ्यां त्र्यम्बकेन वरानने!॥ १४॥

भा० टी०—घर के धन में से आठवें भाग को पुण्यकार्य में खर्च करें। हे वरानने! गायत्री और जातवेदसे० तथा त्र्यंबकं यजामहे०—इन मंत्रों से॥ १४॥

लक्षत्रयं जपं देवि कारयामास यत्नतः।
हरिवंशश्रुतिं देवि भार्यया सहितस्तदा॥ १५॥

भा० टी०—हे देवि! तीन लाख तक जप यत्न पूर्वक करायें और हे देवि! हरिवंश को अपनी स्त्री के संग बैठकर ध्यान पूर्वक सुनें॥ १५॥

होमं वै कारयामास कुण्डे शुद्धे सुदारुणे।
चतुष्कोणे विशालाक्षि योनिपल्लवशोभिते॥ १६॥

भा० टी०—हे विशालाक्षि! योनिपल्लवों से शोभित करके चतुष्कोण युक्त सुंदर और पवित्र कुंड में हवन करायें॥ १६॥

दशांशं विधिवद्देवि तर्पणं मार्जनं ततः।
ब्राह्मणस्य ततो मूर्तिं दशपञ्चपलात्मिकाम्॥ १७॥

भा० टी०—हे देवि! विधि पूर्वक उसके दशांश का तर्पण और मार्जन करायें पश्चात् पंदरह पल सुवर्ण की ब्राह्मण की मूर्ति बनवायें॥ १७॥

विधिवत्कारयेद्देवि पूजयेच्चैव बुद्धिमान्।
वस्त्रालंकारशय्याभिर्भूषणैर्विविधैस्तथा॥ १८॥

भा० टी०—शास्त्रोक्त विधि पूर्वक मूर्ति बनवायें और बुद्धिमान् पुरुष वस्त्र, अलंकार अर्थात् आभूषण, शय्या और नाना प्रकार के आभूषणों द्वारा उन मूर्तियों का पूजन करें॥ १८॥

मन्त्रेणानेन देवेशि गन्धपुष्पैः पृथक् पृथक्।
सर्वकारणकर्ता त्वं साक्षीभूतो जगत्त्रये॥ १९॥

भा० टी०—हे देवेशि! इस निम्नलिखित मंत्र से गंध, पुष्पों से अलग-अलग मूर्तियों का पृथक्-पृथक् पूजन करें (कहें कि) तुम सबके कारण के कर्त्ता हो, तुम त्रिलोकी के साक्षी हो॥ १९॥

पापं ब्रह्मवधं घोरं हर मे भुवनाधिप!।
ॐ चक्रधराय नमः। ॐ त्र्यम्बकाय नमः।
ॐ शङ्खहस्ताय नमः। ॐ सनकसनत्कुमार-
सनन्दनसनातनेभ्यो नमः॥ २०॥

भा० टी०—हे भुवनाधिप! ब्रह्म-वध के मेरे घोर पाप को हरो, ॐ चक्रधराय नमः१, ॐ त्र्यंबकाय नमः२, ॐ शङ्खहस्ताय नमः३, ॐ सनकसनत्कुमारसनन्दनसना-तनेभ्यो नमः॥ २०॥

पूजयामास विविधैर्मोदकैश्च फलैरपि।
प्रतिमां पूजितां तां तु सुविप्राय प्रदापयेत्॥ २१॥

भा० टी०—अनेक प्रकार के मोदक तथा फलों से पूजन करें, फिर पूजित की हुई उस प्रतिमा को उत्तम ब्राह्मण को दान करें॥ २१॥

दशवर्णां सवृषभां पट्टवस्त्रविभूषिताम्।
दद्याद्विप्राय विदुषे श्रोत्रियाय तपस्विने॥ २२॥

भा० टी०—पट्ट वस्त्र से विभूषित की हुई तथा एक वृषभ से युक्त दश प्रकार के वर्णों वाली गायों को वेद पढे हुए विद्वान् तपस्वी ब्राह्मण को दान करें॥ २२॥

सप्तम्यां रविवारे च व्रतं कुर्याद्विधानतः।
एवं करोति देवेशि पुत्रयुग्मं प्रजायते॥ २३॥

भा० टी०—रविवारीय सप्तमी को विधि विधानपूर्वक व्रत करें हे देवेशि! ऐसा करें तो दो पुत्र उत्पन्न होते हैं॥ २३॥

कन्या नैव वरारोहे रोगं सर्वं विनश्यति॥ २४॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे पूर्वाभाद्रपदानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम शततमोऽध्यायः॥ १००॥

भा० टी०—और कन्या उत्पन्न नहीं होती है, हे वरारोहे! ऐसा करने से संपूर्ण रोग नष्ट होते हैं॥ २४॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे पूर्वाभाद्र० नक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम शततमोऽध्यायः॥ १००॥

॥ १०१ ॥

पूर्वाभाद्रपदानक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

धर्मेण जायते पुत्रो धर्मेण लभते श्रियम्।
धर्मेण व्याधिनाशः स्यात्तस्माद्धर्मपरोऽभवत् ॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—धर्म से पुत्र उत्पन्न होता है, धर्म से लक्ष्मी प्राप्त होती है, धर्म से व्याधि नष्ट होती है, इसलिए धर्म पालन करने योग्य है ॥ १ ॥

कापिल्ये नगरे देवि ब्राह्मणस्तत्र तिष्ठति।
स वेदपाठनिरतो धनाढ्यश्च बहूद्यमी ॥ २ ॥

भा० टी०—हे देवि! कपिलनगर में एक वेदपाठी ब्राह्मण रहता था, वह धनाढ्य और बहुत उद्यम करने वाला था ॥ २ ॥

तस्य पत्नी वरारोहे पतिसेवासु तत्परा।
एकदा चागता कन्या ब्राह्मणस्य किलानघे! ॥ ३ ॥

भा० टी०—हे वरारोहे! उसकी स्त्री पति की सेवा में तत्पर रहती थी, हे अनघे! एक समय उसके घर में उस ब्राह्मण की कन्या आयी ॥ ३ ॥

पुत्रेण सह देवेशि चादरस्तेन वै कृतः।
ततो बहुदिने जाते तस्य स्वर्णं च चोरितम् ॥ ४ ॥

भा० टी०—हे देवि! वह पुत्र सहित आयी, तब उसने उसका बहुत-सा आदर किया। बहुत से दिन व्यतीत हो चुके। तब उस ब्राह्मण का सुवर्ण (धन) चोरी हो गया ॥ ४ ॥

कन्यापुत्रेण स्वर्णं हि हृतं चेति तदा शिवे!
वदन्ति बहवस्तत्र जनास्तु ब्राह्मणं प्रति ॥ ५ ॥

भा० टी०—हे शिवे! तब बहुत से जन उस ब्राह्मण को ऐसा कहने लगे कि, इस कन्या के पुत्र ने यह धन चोरा है ॥ ५ ॥

ततो रोषपरीतात्मा पौत्रो भवति वै शिवे!
विषं भुक्तं तदा तेन बहुरोषाकुलेन तु ॥ ६ ॥

भा० टी०—तब हे शिवे! उस ब्राह्मण का पोता अत्यन्त क्रोधित हुआ और बहुत रोष (क्रोध) से आकुल होकर उस पौत्र ने विष भक्षण किया॥ ६॥

मरणं तस्य वै जातं पौत्रस्यैव वरानने!
ततो बहुदिने जाते ब्राह्मणस्य तदा मृतिः॥ ७॥

भा० टी०— हे वरानने! तब उसके पौत्र की मृत्यु हो गयी, फिर बहुत दिन व्यतीत हुए पश्चात् उस ब्राह्मण की भी मृत्यु हो गई॥ ७॥

तस्य पत्नी सती जाता सत्यलोकेऽवसत्तदा।
ततः पुण्यक्षये जाते मर्त्यलोके सुरेश्वरि!॥ ८॥

भा० टी०—तब उसकी स्त्री सती हो गयी, उसकाइसलिये सत्यलोक में वास हुआ, हे सुरेश्वरि! तब पुण्य क्षीण हो गया, तब मृत्युलोक में॥ ८॥

मानुषत्वं ततो जातमयोध्यानगरे शिवे!
धनधान्यसमायुक्तो राजमन्त्री विचक्षणः॥ ९॥

पौत्रस्तस्य मृतो देवि तदुद्देशेन भो शिवे!॥ १०॥

भा० टी०—वह मनुष्य योनि में उत्पन्न हुआ। हे शिवे! अयोध्या नगरी में उसने जन्म लिया है, धनधान्य से युक्त है, राजा का मंत्री और पंडित है। हे शिवे! उसके कारण उसके (पौत्र) पोते की मृत्यु हो गई थी॥ ९॥ १०॥

अतः पुत्रो न जायेत कन्या चैव प्रजायते।
शरीरे सततं चोग्रो ज्वरो जातः सुदारुणः॥ ११॥

भा० टी०—इसलिये इसके पुत्र नहीं जन्म होता है, केवल कन्या ही जन्मती है और इसके शरीर में निरंतर उग्र दारुण ज्वर रहता है॥ ११॥

शत्रवो बहवः सन्ति न सौख्यं लभते क्वचित्।
पुण्यं शृणु वरारोहे पूर्वपापस्य संक्षयः॥ १२॥

भा० टी०—और बहुत से शत्रु हैं, कभी भी सुख नहीं मिलता है, हे वरारोहे! इसके प्रायश्चित के लिए पुण्य को सुनो, जिससे पूर्वपाप का क्षय होता है॥ १२॥

गृहवित्तषडंशेन पुण्यकार्यं च कारयेत्।
गायत्रीत्र्यम्बकं चेति श्रीश्च ते इति ऋक्त्रयम्॥ १३॥

भा० टी०—घर के वित्त में से छठे भाग को पुण्य के कार्य में खर्च करें हे देवि! गायत्री, त्र्यम्बकं यजामेंहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम् श्रीश्चते लक्ष्मी०—इन तीन मंत्रों को॥१३॥

प्रतिमन्त्रं जपेल्लक्षं दशांशं हवनं ततः।
दशांशतर्पणं देवि मार्जनं तद्दशांशतः॥ १४॥

भा० टी०—फिर अलग-अलग एक-एक लाख तक जप करें, फिर दशांश हवन, दशांश तपर्ण तथा दशांश मार्जन करायें॥ १४॥

गोदानं तद्दशांशं च तद्दशांशं च भोजयेत्।
ब्राह्मणान् चैव देवेशि श्रद्धाभक्तिसमन्वितः॥ १५॥

भा० टी०—उसके दशांश का गोदान करें, उससे दशांश का ब्राह्मणों को भोजन करायें और श्रद्धाभक्ति से युक्त रहें॥ १५॥

कूष्माण्डं नारिकेरं च पञ्चरत्नसमन्वितम्।
गङ्गामध्ये प्रदातव्यं पूर्वपापविशुद्धये॥ १६॥

भा० टी—और कोहले तथा नारियल को पंचरत्न से युक्त करके पूर्वजन्म में किये हुए पाप की शुद्धि के लिए गंगाजी के मध्य में दान करें॥ १६॥

वृषभस्तरुणः शुभ्रो घण्टाचामरशोभितः।
ब्राह्मणाय प्रदातव्यः शय्यादानं विशेषतः॥ १७॥

भा० टी०—तत्पश्चात् घंटा और चामर से युक्त किये हुए श्वेतवर्ण वाले बैल का दान ब्राह्मण को दें विशेष करके शय्या का दान करें॥ १७॥

एवं कृते वरारोहे शीघ्रं पुत्रः प्रजायते।
रोगस्यैव निवृत्तिः स्याज्ज्वरस्तस्य न जायते॥ १८॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे पूर्वाभाद्रपदानक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नामैकाधिशततमोऽध्यायः॥ १०१॥

भा० टी०—हे वरारोहे! ऐसा करने से शीघ्र ही पुत्र उत्पन्न होता है और सभी प्रकार के रोगों की निवृत्ति हो उसके शरीर में ज्वर कभी भी नहीं होता है॥ १८॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे पूर्वाभाद्र० नक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नामैकाधिकशततमोऽध्यायः॥ १०१॥

॥ १०२ ॥

पूर्वाभाद्रापदानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

गान्धारनगरे देवि ब्राह्मणो वसति प्रिये!
दयाशर्म इति ख्यातो मद्यपानरतः सदा॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे देवि! गान्धार नगर में दया शर्मा नाम वाला एक ब्राह्मण रहता था, वह सदा मदिरापान करने में तत्पर रहता था॥ १ ॥

वेश्यासुरतसंतृप्तश्चौरकर्मरतः सदा।
म्लेच्छाचाररतः सोऽपि म्लेच्छान्नं भुज्यते सदा॥ २ ॥

भा० टी०—वेश्या के साथ संभोग में सदा तत्पर रहने वाला वह सर्वदा चौर कर्म में रत और म्लेच्छों के आचार को करता था तथा सदा म्लेच्छों के ही अन्न का भोजन किया करता था॥ २ ॥

धनं तु संचितं तेन म्लेच्छभार्यासु तत्परः।
श्राद्धकर्मविहीनश्च पितुर्मातुश्च निन्दकः॥ ३ ॥

भा० टी०—इसने बहुत-सा धन संचित किया और सदा म्लेच्छों की स्त्रियों से रमण किया, श्राद्ध के कर्म से हीन और माता-पिता की निंदा करने वाला था॥ ३ ॥

एवं बहुगते काले मरणं तस्य जायते।
महारौद्रं च नामानं नरकं नाम दारुणम्॥ ४ ॥

भा० टी०—ऐसे बहुत सी अवस्था बीत चुकी थी तब उसकी मृत्यु हुई तदनन्तर उसे महारौद्र नाम वाले दारुण घोर नरक में डाला गया॥ ४ ॥

निक्षिप्तः शृङ्खलैर्बद्ध्वा यमदूतैर्यमाज्ञया।
षष्टिवर्षसहस्राणि भुक्त्वा नरकयातनाम्॥ ५ ॥

भा० टी०—धर्मराज के दूतों ने यम की आज्ञा पाकर बेड़ियों से बांध कर (वहाँ नरक में) उसे पटका। साठ हजार वर्षों तक नरक की पीड़ा को भाग कर॥ ५ ॥

नरकान्निःसृतो देवि गोधायोनिरभूत्पुरा।
सरटस्य पुनर्योनिं चटकत्वं ततोऽभवत्॥ ६ ॥

भा० टी०—फिर नरक से निकलकर वह गोह की योनि को प्राप्त हुआ, पश्चात् छिपकली की योनि, फिर चिड़की योनि को प्राप्त हुआ॥ ६॥

मानुषत्वं ततो लेभे मध्यदेशे वरानने!
धनधान्यसमायुक्तो वंशहीनो महेश्वरि॥ ७॥

भा० टी०—पश्चात् उसे मनुष्य योनि प्राप्त हुई। हे वरानने! हे महेश्वरि!! यह मध्य देश में धनधान्य से युक्त है, किन्तु उसकी संतान नहीं है॥ ७॥

पूर्वजन्मनि देवेशि ब्राह्मणत्वं यतोऽत्यजत्।
तत्पापेनैव भो देवि पुत्रस्य मरणं मुहुः॥ ८॥

भा० टी०—हे देवेशि! इसने पूर्वजन्म में ब्राह्मणत्व का त्याग किया था, उस पाप से इसके पुत्र बार-बार मरते हैं॥ ८॥

अनेन पितरौ वृद्धौ त्यक्तौ दुर्मतिना यतः।
अतः शरीरे वै रोगः काकवन्ध्या सहव्रणा॥ ९॥

भा० टी०—क्योंकि इस दुष्ट बुद्धि वाले ने अपने वृद्ध माता-पिता का त्याग किया था, इसलिये इसके शरीर में रोग होता है और इसकी स्त्री काकवंध्या है और व्रणों वाली है॥ ९॥

शान्तिं शृणु वरारोहे यतः पुत्रो हि जायते।
गृहवित्ताष्टमं भागं पुण्यकार्ये च कारयेत्॥ १०॥

भा० टी०—हे वरारोहे! जिससे इसके पुत्र हों, उस शांति कर्म को सुनों, घर के वित्त के आठवें भाग धन को पुण्य कार्य में खर्च करें॥ १०॥

पलपञ्चसुवर्णस्य गणाध्यक्षस्य चाकृतिम्।
कृत्वा वै पूजयेद्देवि मन्त्रेणानेन सुव्रते!॥ ११॥

भा० टी०—हे देवि! हे सुव्रते!! पंद्रह पल सुवर्ण की शिवजी की मूर्ति बनाकर इस मंत्र से उसका पूजन करें॥ ११॥

गणाध्यक्ष सुरेशान सर्वोपद्रवनाशन!
मम पूर्वकृतं पापं हर दुःखनिवारण!॥ १२॥

भा० टी०—हे गणाध्यक्ष! सुरेश! सब उपद्रवों को नष्ट करने वाले हे दुःखनिवारण! पूर्वजन्म के मेरे पापों को हरो॥ १२॥

एवं कृत्वा विधानं च ब्राह्मणाय समर्पयेत्।
ततो भवति वंशश्च व्याधिनाशश्च जायते॥ १३॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे पूर्वाभाद्रापदानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम द्व्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १०२ ॥

भा० टी०—इसप्रकार संपूर्ण विधिविधान करके पश्चात् (मूर्ति आदि को) ब्राह्मण को दे दें तब वंश बढ़ता है और व्याधि नष्ट होती है ॥ १३ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वती० पूर्वाभाद्र० तृतीयच० प्रायश्चित्तकथनं नाम द्व्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १०२ ॥

॥ १०३ ॥

पूर्वाभाद्रपदानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

वैदण्डे च पुरे देवि लुब्धको वसति प्रिये!
सेमानाम्ना स विख्यातस्तस्य भार्यातिनिष्ठुरा ॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे प्रिये! वैदंड नामक पुर में एक लुब्धक (व्याध) वसता था, वह सेमा नाम से विख्यात था, उसकी स्त्री अत्यंत कठोर थी ॥ १ ॥

प्रत्यहं मृगमांसेन व्ययं कुर्य्याद्दिने दिने।
एवं सर्वं वयो जातं लुब्धकस्य तदा प्रिये! ॥ २ ॥

भा० टी०—वह प्रतिदिन मृगमांस से अपने खर्च को चलाता था, इसप्रकार लुब्धक की जब संपूर्ण अवस्था बीत चुकी, तब ॥ २ ॥

मरणं तस्य वै जातं यमदूतैर्यमाज्ञया।
निक्षिप्तो नरके घोरे षष्टिवर्षसहस्रकम् ॥ ३ ॥

भा० टी०—उसका मरण हो गया, उस समय धर्मराज के दूतों ने यम की आज्ञा पाकर उसे साठ हजार वर्षों तक घोर नरक में पटका ॥ ३ ॥

भुक्तं च विविधं दुःखं कृमिसूचिमुखैर्युतम्।
मानुषत्वं ततो जातं धनधान्यसमन्वितम् ॥ ४ ॥

भा० टी०—वहाँ अनेक प्रकार के दुःखों को सूचिमुख आदि कृमियों के द्वारा पीडित वह बाद में मनुष्य हुआ है, वह धनधान्य से युक्त है ॥ ४ ॥

पुत्राणां मरणं देवि जायते हि विपाकतः।
पलपञ्चसुवर्णस्य माल्यं मेरुयुतं तु वै ॥ ५ ॥

भा० टी०—हे देवि! पूर्वकर्मविपाक से इसके पुत्रों की मृत्यु होती है, पाँच पल सुवर्ण की माला बनवायें, उसके बीच में सुमेरु बनवायें ॥ ५ ॥

ब्राह्मणाय ततो दद्याच्छय्यादानं विशेषतः।
एवं कृते वरारोहे पुत्रस्तस्य च जीवति ॥ ६ ॥

भा० टी०—पश्चात् उसको ब्राह्मण को दान करें, शय्यादान विशेष करके दें हे वरारोहे! ऐसा करने से पुत्र जीवित रहता है॥ ६॥

व्याधयः संक्षयं यान्ति काकवन्ध्या लभेत्सुतम्॥ ७॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे पूर्वाभाद्रपदानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम त्र्यधिकशततमोऽध्यायः॥ १०३॥

भा० टी०—संपूर्ण व्याधि नष्ट होती है और काकवंध्या स्त्री पुत्र को प्राप्त करती है॥ ७॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे पूर्वाभाद्रापदानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम त्र्यधिकशततमोऽध्यायः॥ १०३॥

॥ १०४ ॥

उत्तराभाद्रपदानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

श्रीपुरे नगरे देवि द्विज एकोऽवसत्पुरा।
एकदा तस्य वै गेहे गुरुपुत्रः समागतः ॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे देवि! पहले श्रीपुर नगर में एक ब्राह्मण वसता था, एक समय उसके घर में उसके गुरु का पुत्र आया॥ १ ॥

आदरं बहुधा कृत्वा मासमेकं तदा खलु।
गुरुपुत्रस्य घातं हि कृत्वा द्रव्यस्य लोभतः ॥ २ ॥

भा० टी०—एक महीने तक वहाँ उसे बहुत आदर के साथ रखकर पश्चात् द्रव्य के लोभ से उसने गुरु के पुत्र का घात (हत्या) किया॥ २ ॥

तेन पापेन भो देवि महापापयुतो नरः।
पुत्रहीनश्च देवेशि जायते धनवर्जितः ॥ ३ ॥

भा० टी०—हे देवि! उस पाप से वह मनुष्य महापापी है, इसलिये इसके पुत्र नहीं होता है और वह धनहीन है॥ ३ ॥

वंशगोपालमन्त्रं वै गायत्रीमन्त्रमेव च।
हरिवंशश्रवणं देवि कुर्याच्च विधिपूर्वकम् ॥ ४ ॥

भा० टी०—हे देवि! विधिपूर्वक संतानगोपाल का मंत्र, गायत्रीमंत्र का जप करवायें और हरिवंशपुराण को सुनें॥ ४ ॥

तुलसीवाटिकां कृत्वा तन्मूले विष्णुपूजनम्।
दशवर्णां ततो दद्यात्पूर्वपापप्रणाशिनीम् ॥ ५ ॥

भा० टी०—तुलसी की वाटिका बनाकर उसके जड़ में विष्णु का पूजन करें और पूर्वजन्म के पाप को नष्ट करने वाली दश प्रकार के वर्णों वाली गायों का दान करें॥ ५ ॥

स्वर्णनिष्कस्ततो दद्याद्दशगोदानमेव च।
एवं कृते वरारोहे वंशो भवति नान्यथा ॥ ६ ॥

भा० टी०—निष्क अर्थात् एक तोला प्रमाण सुवर्ण का दान और दश गायों का दान करें, हे वरारोहे! ऐसा करने से निश्चय ही वंश बढ़ता है॥ ६॥

व्याधिनाशो भवेद्देवि सत्यं सत्यं न संशयः॥ ७॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे उत्तराभाद्रपदानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नामचतुरधिकशततमोऽध्यायः॥ १०४॥

भा० टी०—हे देवि! सभी व्याधियाँ नष्ट होती हैं, यह मेरा वचन सत्य है। इसमें संशय नहीं॥ ७॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीह० उत्तरानक्ष० प्रथमच० प्रायश्चित्तकथनं नाम चतुरधिकशततमोऽध्यायः॥ १०४॥

॥ १०५ ॥

उत्तराभाद्रपदानक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

मणिकाख्यपुरे रम्ये वसन्ति बहवो जनाः।
लवणकारो वसत्येको नित्यं लवणविक्रयी॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे देवि! रमणीक मणिपुर में बहुत से जन वास करते थे, वहाँ एक लवणकार (नमक बनाने वाला) भी रहता था, वह नित्य लवण बेचा करता था॥ १ ॥

ब्राह्मणीगमनं तेन कृतं शूद्रेण वै शिवे!
तेन पापेन भो देवि वंशहीनश्च जायते॥ २ ॥

भा० टी०—हे शिवे! उस शूद्र ने ब्राह्मणी के साथ संभोग किया था, हे देवि! उस पाप से वह वंशहीन है॥ २ ॥

व्याधियुक्तो महेशानि पीडा चाङ्गेषु जायते।
शान्तिं शृणु महेशानि येन पापनिवर्तनम्॥ ३ ॥

भा० टी०—हे महेशानि! वर्तमान में वह बीमारी से युक्त है और उसके अंगों में बहुत-सी पीड़ा रहती है। हे महादेवि! जिससे उसकेपूर्व पापों की निवृत्ति हो, उसके लिए शांतिविधान को सुनो॥ ३ ॥

गृहवित्ताष्टमैर्भागैर्ब्राह्मणं तोषयेद्यदि।
हरिवंशश्रवं देवि विधिवद्यदि पार्वति!॥ ४ ॥

भा० टी०—घर के वित्त में से आठवें भाग को दान करके विद्वान् और वेदपाठी ब्राह्मण को प्रसन्न करें और हे पार्वति! हरिवंश पुराण को विधिविधानपूर्वक भक्तिभाव से सुनें॥ ४ ॥

ब्राह्मणान्भोजयेद्देवि कूष्माण्डं चैव दापयेत्।
एवं कृते वरारोहे पुत्रो भवति नान्यथा॥ ५ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे उत्तराभाद्रपदानक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम पञ्चाधिकशततमोऽध्यायः ॥ १०५ ॥

भा० टी०—हे देवि! ब्राह्मणों को भोजन करवायें और पेठे का दान करें। हे वरारोहे! इसप्रकार से शान्तिकर्म करने से पुत्र की उत्पत्ति होती है, इसमें अन्यथा कुछ भी नहीं है॥ ५॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे उत्तराभाद्रानक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम पञ्चाधिकशततमोऽध्यायः ॥ १०५ ॥

॥ १०६ ॥

उत्तराभाद्रपदानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

अलर्काख्यपुरे देवि क्षत्रियो वसति प्रिये!
चन्द्रवर्मेति विख्यातो भार्या देवीतिसंज्ञिका ॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे प्रिये! अलर्का नामक नगर में एक क्षत्रिय रहता था, उसका नाम चन्द्रवर्मा था और उसकी स्त्री का नामदेवी था ॥ १ ॥

क्षत्रधर्मरतो नित्यं धनाढ्यः शूरसंमतः।
कृष्णदास इति ख्यातो विप्रस्तस्य पुरोहितः ॥ २ ॥

भा० टी०—वह नित्यप्रति क्षत्रिय के धर्म में तत्पर रहता था और शूरवीरों में मान्य था उसका नाम कृष्णदास था उसका एक पुरोहित ब्राह्मण था ॥ २ ॥

क्रोधतो क्षत्रियस्यापि बभूव मरणं यतः।
पुरोहितस्य विप्रस्य सप्ताहाच्च सुतक्षयः ॥ ३ ॥

भा० टी०—उस क्षत्रिय के क्रोधित होने से उस कलह में उस पुरोहित ब्राह्मण की मृत्यु हो गयी और सात दिनों के भीतर उस ब्राह्मण का पुत्र भी मर गया ॥ ३ ॥

व्याधिपीडागुल्मजालैः पीड्यते सततं हि सः।
गायत्रीमूलमन्त्रेण पञ्चलक्षजपं चरेत् ॥ ४ ॥

भा० टी०—उस पाप से उत्पन्न हुई व्याधि, पीड़ा, गुल्मजालों से वह सदा पीड़ित रहता है इसकी शान्ति के लिए गायत्री के मूलमंत्र का पाँच लाख तक जप करायें ॥ ४ ॥

गृहवित्तषडंशेन पुण्यकार्यं च कारयेत्।
ब्राह्मणस्य ततो देवि प्रतिमां कारयेद्बुधः ॥ ५ ॥

भा० टी०—घर में स्थित वित्त में से छठे भाग को पुण्य कर्म में व्यय करायें। हे देवि! फिर वह बुद्धिमान् पुरुष ब्राह्मण की मूर्ति बनवाये ॥ ५ ॥

पूजयित्वा ब्राह्मणाय दत्त्वा पापनिवृत्तये।
पलपञ्चसुवर्णस्य दद्याद्वै ब्राह्मणाय च ॥ ६ ॥

भा० टी०—और उस मूर्ति का पूजन करके पूर्व पाप दूर करने के लिए ब्राह्मण को देकर पाँच पल सुवर्ण भी ब्राह्मण को दान कर दें॥ ६॥

काकवन्ध्या लभेत्पुत्रं मृतवत्सा सुपुत्रका॥ ७॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे उत्तराभाद्रपदानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम षडधिकशततमोऽध्यायः॥ १०६॥

भा० टी०—ऐसा करने से काकवंध्या स्त्री का भी पुत्र जन्मता है, मृतवत्सा भी सुंदर पुत्र वाली होती है॥ ७॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे उत्तराभाद्रपदानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम षडधिकशततमोऽध्यायः॥ १०६॥

॥ १०७ ॥

उत्तराभाद्रपदानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

अयोध्यानिकटे देवि विप्र एकोऽवसत्पुरा।
वैष्णवोक्तप्रकारेण दीक्षां प्राप्तो हि गर्वितः ॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे देवि! अयोध्यापुरी के समीप एक ब्राह्मण रहता था, वह वैष्णव मत के अनुसार दीक्षा को प्राप्त करके अत्यधिक अभिमान से युक्त था॥ १ ॥

वेदनिन्दारतो साधुः श्राद्धादिविधिवर्जितः।
शिवभक्तिरतानां च नाभिवादं समाचरेत्॥ २ ॥

भा० टी०—वह ब्राह्मण वेद की निंदा करने वाला, श्राद्धादिकों की विधि विधान से रहित था और जो शिवजी की भक्ति में तत्पर रहने वालों को नमस्कार अथवा प्रणाम भी नहीं करता था॥ २ ॥

विप्रद्रोहरतश्चैव हरिमन्दिरशोभितः।
एकदा तस्य गेहे तु चागतः पथिकः प्रिये!॥ ३ ॥

भा० टी०—वह ब्राह्मणों से द्रोह करने वाला था, हरि मंदिर से सुशोभित था। हे प्रिये! एक समय उसके घर पर एक पथिक आ गया॥ ३ ॥

रुद्राक्षालंकृतो दान्तस्तस्मै क्रूरमभाषत।
विषमाहारपानादौ दत्तं तेन द्विजन्मने॥ ४ ॥

भा० टी०—वह पथिक रुद्राक्ष की माला धारण किये हुए था तथा जितेंद्रिय था, उसको इस ब्राह्मण ने क्रूर वचन कहे और आहार पान आदि में उस ब्राह्मण ने पथिक को विष दे दिया॥ ४ ॥

रात्रौ तद्द्रव्यलोभेन घटं कृत्वा त्वपाहरत्।
कूपमध्ये तु तं विप्रं पायीयान् वैष्णवाधमः॥ ५ ॥

भा० टी०—रात्रि समय में उसके द्रव्य के लोभ से उस ब्राह्मण पथिक को पापी अधम वैष्णव ने कूएँ में घट की तरह बनाकर डुबोता रहा, जिससे वह मर गया॥ ५ ॥

कालान्तरे मृतिर्जाता तस्य साधोर्दुरात्मनः।
विष्णुनाम स्मरेन्नित्युं वैकुण्ठे वासमाप्तवान्॥ ६॥

भा० टी०—फिर कालांतर में उस दुरात्मा साधुनामक ब्राह्मण की भी मृत्यु हुई यह प्रतिदिन विष्णु भगवान् के नाम का स्मरण किया करता था इसलिये उसको वैकुंठ-वास हो गया॥ ६॥

क्षीणे पुण्ये ततो देवि विट्भक्षो ग्रामसूकरः।
ततो मनुष्ययोनिश्च दृश्यते पुत्रवर्जितः॥ ७॥

भा० टी०—हे देवि! पश्चात् पुण्य क्षीण होने के बाद पूर्वजन्म के कर्मफल से वह विष्ठा को भक्षण करने वाला ग्राम का सूकर हुआ तत्पश्चात् मुनष्य योनि को प्राप्त हुआ है और पुत्ररहित है॥ ७॥

रोगवानल्पकीर्तिश्च स एव सुरसुन्दरि!
अतः शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणुष्व हरवल्लभे!॥ ८॥

भा० टी०— वह रोगवान् और अत्यधिक स्वल्प कीर्ति वाला है। हे हरवल्लभे! अब इसकी शांति को कहता हूँ, ध्यान से सुनो॥ ८॥

लक्षमुद्रां ब्राह्मणाय दत्त्वा काश्यास्तु सेवनम्।
ब्रह्मचर्यरतो नित्यं ततो मुच्येत पातकात्॥ ९॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे उत्तराभाद्रापदानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम सप्ताधिकशततमोऽध्यायः॥ १०७॥

भा० टी०—ब्राह्मण को एक लाख मुद्रा रुपयों का दान देकर काशजी का सेवन करें और ब्रह्मचर्य में रत रहें तब पूर्वजन्म के सारेपाप से छूट जाते हैं॥ ९॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे उत्तराभाद्रपदानक्षत्रस्य चतुर्थचरण० प्रायश्चित्तकथनं नाम सप्ताधिकशततमोऽध्यायः॥ १०७॥

॥ १०८ ॥

रेवतीनक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

मगधे विषये देवि लुब्धको वसति प्रिये!
प्रत्यहं मृगमांसेन व्ययं कुर्याद्दिने दिने ॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे देवि! मगध देश में एक लुब्धक रहता था, हे प्रिये! वह प्रतिदिन मृगों के मांस को बेच कर अपना अपना खर्च चलाता था ॥ १ ॥

एवं सर्वं वयो जातं वृद्धे सति वरानने!।
मरणं तस्य वै यातं यमदूतैर्यमाज्ञया ॥ २ ॥

भा० टी०—इसप्रकार उसकी संपूर्ण अवस्था व्यतीत हो गयी, जब वृद्ध अवस्था हुई, तब हे वरानने! उसकी मृत्यु हो गयी फिर यम के दूतों ने यम की आज्ञा से ॥ २ ॥

निक्षिप्तो नरके घोरे षष्टिवर्षसहस्त्रकम्।
भुक्तं विविधजं दुःखं कृमिसूचीमुखैर्युतम् ॥ ३ ॥

भा० टी०—उसे साठ हजार वर्षों तक घोर नरक में डाला, वहाँ अनेक प्रकार के उसने दुःख सूचीमुख आदि कृमियों के द्वारा पीडित हो कर भोगा ॥ ३ ॥

नरकान्निःसृतो देवि मृगत्वं जायते खलु।
श्रृगालस्य ततो योनिं छागयोनिस्ततोऽभवत् ॥ ४ ॥

भा० टी०—हे देवि! नरक से निकलने के पश्चात् वह मृगयोनि को प्राप्त हुआ पश्चात् गीदड़ की योनि को प्राप्त हुआ, फिर बकरे की योनि को प्राप्त हुआ ॥ ४ ॥

मानुषत्वं ततो जातं धनधान्यसमन्वितम्।
पूर्वजन्मनि देवेशि जलदानं च वै कृतम् ॥ ५ ॥

भा० टी०—उसके वह अनन्तर मनुष्य योनि में उत्पन्न हुआ है। वह धनधान्य से युक्त है। हे देवेशि! इसने पूर्वजन्म में जलदान किया था ॥ ५ ॥

धनाढ्यत्वं पुनर्जातो ह्यपुत्रो मृगताडनात्।
पुत्राश्च बहवो जाता मरणं तेषु जायते ॥ ६ ॥

भा० टी०—उसने पूर्वजन्म में जलदान किया था इसलिये धनाढ्य है और इसने

पूर्वजन्म में मृगों की हत्या की थी, इससे पुत्र-रहित है। उसके बहुत से पुत्र हुए परंतु उनकी मृत्यु हो जाती है॥ ६॥

रोगाणां च तथोत्पत्तिर्ज्वरश्चैव पुनः पुनः।
शान्तिं शृणु वरारोहे पूर्वपापप्रणाशिनीम्॥ ७॥

भा० टी०—उसके शरीर में रोगों की उत्पत्ति तथा उसे बार-बार ज्वर होता है। हे वरारोहे! पूर्वपाप को नष्ट करने वाली इसकी शान्ति को सुन॥ ७॥

गृहवित्तषडंशेन पुण्यकार्यं च कारयेत्।
गायत्र्या वा शिवायेति जातवेदेति वै पुनः॥ ८॥

दशायुतजपं कुर्याद्दशांशं हवनं ततः।
दशांशं तर्पणं देवि मार्जनं तद्दशांशतः॥ ९॥

भा० टी०—घर के धन में से छठे भाग को पुण्य के कार्य में खर्च करें, गायत्री अथवा "ॐ नमः शिवाय" वा "जातवेदसे" इन मन्त्रों का एक लाख तक जप करायें, उसका दशांश हवन, उसका दशांश तर्पण, तद्दशांश मार्जन करायें॥ ८॥ ९॥

ततो वै भोजयेद्भक्त्या द्विजान् देवि दशांशतः।
दशवर्णां ततो दद्याद्वृषभं भूषितं शुभम्॥ १०॥

भा० टी०—हे देवि! तत्पश्चात् मार्जन का दशांश संख्याप्रमाण से ब्राह्मणों को भोजन करवायें तदनन्तर दश प्रकार के वर्णों वाली गायों का दान करें और विभूषित किये हुए उत्तम एक बैल का दान करें॥ १०॥

पलपञ्चसुवर्णस्य माल्यं मेरुयुतं तु वै।
ब्राह्मणाय ततो दद्याच्छय्यादानमनन्तरम्॥ ११॥

भा० टी०—पाँच पल सुवर्ण की माला सुमेरु से युक्त कर के बनवायें। फिर उसे ब्राह्मण को दान कर दें तदनन्तर शय्या का दान करें॥ ११॥

एवं कृते वरारोहे पुत्रः खलु प्रजायते।
व्याधयः संक्षयं यान्ति काकवन्ध्या लभेत्सुतम्॥ १२॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे रेवतीनक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नामाऽष्टाधिकशततमोऽध्यायः॥ १०८॥

भा० टी०—हे वरारोहे! इसप्रकार से शान्तिकर्म करने से निश्चय ही पुत्र की प्राप्ति होती है और संपूर्ण व्याधियाँ नष्ट हो जाती हैं तथा काकवन्ध्या स्त्री भी पुत्र को प्राप्त करती है॥ १२॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे रेवतीन० प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नामष्टाधिकशततमोऽध्यायः॥ १०८॥

॥ १०९ ॥

रेवतीनक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

श्रीपुरे नगरे देवि द्विज एकोऽवसत्पुरा।
पुत्रपौत्रयुतो देवि धनधान्यसमन्वितः॥ १ ॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे देवि! प्राचीन समय में श्रीपुर नगर में एक ब्राह्मण रहता था, वह पुत्र-पौत्र तथा धन-धान्य से युक्त था॥ १॥

वैश्यकर्मरतो नित्यं क्रयविक्रयतत्परः।
महिषीं वृषभं वस्त्रं चामरं गजवाजिनौ॥ २॥

भा० टी०—वह प्रतिदिन वैश्य के कर्म में रत रहता था और खरीदने-बेचने का व्यवहार करता था। भैंस, बैल, वस्त्र, चमर, हाथी, अश्व—इनको बेचा करता था॥ २॥

प्रत्यहं विक्रयं कृत्वा कृतश्च धनसंग्रहः।
एकदा तस्य वै गेहे गुरुपुत्रः समागतः॥ ३॥

भा० टी०—उसने प्रत्येक दिन इनको बेच-बेच कर धन-संग्रह किया। एक समय उसके घर में गुरु का पुत्र आया॥ ३॥

आदरं बहुधा कृत्वा मासे याते ततः शिवे!
गमनं च हरिद्वारे स्नानार्थं कृतवांस्तथा॥ ४॥

भा० टी०—तब उसने गुरुपुत्र का बहुत आदर किया। हे शिवे! एक महीना व्यतीत होने पर तब स्नान के लिए वह गुरुपुत्र हरिद्वार को चला गया॥ ४॥

गुरुपुत्रेण भो देवि स्वर्णमूर्तिद्वयं तथा।
ब्राह्मणाय तु दत्तं वै ततो वै गमनं कृतम्॥ ५॥

भा० टी०—हे देवि! तब उस गुरुपुत्र ने जाते हुए दो सुवर्ण की मूर्तियाँ ब्राह्मण को सौंप दी, पश्चात् हरिद्वार को गमन किया॥ ५॥

हरिद्वारं ततो गत्वा तत्र प्राणमथोऽत्यजत्।
मूर्तिद्वयं गुरोश्चैव विक्रीतं तद्व्ययः कृतः॥ ६॥

भा० टी०—वहाँ हरिद्वार पर जाकर गुरुपुत्र ने प्राणों को त्याग दिया और उस ब्राह्मण ने गुरुपुत्र की वे दोनों मूर्तियाँ बेच कर खर्च कर दीं॥ ६॥

एवं बहुगते काले मरणं ब्राह्मणस्य च।
यमाज्ञया महादूतैर्नरके नाम कर्दमे॥ ७॥

भा० टी०—इसप्रकार बहुत सा-काल बीत जाने पर तब ब्राह्मण की मृत्यु हो गई, तत्पश्चात् यम के दूतों ने धर्मराज की आज्ञा पाकर उसे कर्दम संज्ञक नरक में डाला॥ ७॥

निक्षिप्तो वै ततो देवि षष्टिवर्षसहस्त्रकम्।
नरकान्निःसृतो देवि व्याघ्रयोनिस्ततोऽभवत्॥ ८॥

भा० टी०—हे देवि! यमदूतों ने साठ हजार वर्षों तक उसे घोर नरक में पटका और तत्पश्चात् नरक की पीड़ा को भोग कर नरक से निकलकर उसे भेड़िया की योनि प्राप्त हुई॥ ८॥

तीर्थे पुण्यतमे देवि कौसलायां सुरेश्वरि!
बिडालस्य ततो योनिं मानुषत्वं ततोऽभवत्॥ ९॥

भा० टी०—हे सुरेश्वरि! पवित्र तीर्थ पर कौशलापुरी में बिलाव की योनि को प्राप्त हो कर वर्तमान में मनुष्य-योनि को प्राप्त हो गया है॥ ९॥

ब्राह्मणस्य कुले जन्म ज्ञानवान् प्रियदर्शनः।
देवताराधने प्रीतिः परस्त्रीलम्पटस्तथा॥ १०॥

भा० टी०—ब्राह्मण के कुल में उसका जन्म हुआ है। वह ज्ञानवान् तथा प्रियदर्शन अथात् सुन्दर है। देवता के आराधन करने में प्रीति रखने वाला साथ ही पराई स्त्रियों के साथ रमण करने वाला है॥ १०॥

तस्यापत्यत्रयं देवि कन्यका पुत्रकौ तथा।
तेषां वै मरणं जातं पुनः पुत्रो न जायते॥ ११॥

भा० टी०—हे देवि! उसकी तीन संतान हुई, एक कन्या, दो पुत्र। उन की मृत्यु हो गई है। फिर उसकी स्त्री के गर्भ से पुत्र का जन्म नहीं हुआ॥ ११॥

काकवन्ध्या भवेद्भार्या गौराङ्गी सुन्दरी तु सा।
तन्वङ्गी दीर्घकेशी च स्वपतौ प्रियभाषिणी॥ १२॥

भा० टी०—गौर वर्ण वाली सुन्दर रूपवती उसकी स्त्री काकवंन्ध्या हो गयी है। जबकि वह सूक्ष्म अंगवाली अर्थात् दुबली-पतली, बड़े केशों वाली तथा अपने पति से प्रिय बोलने वाली है॥ १२॥

तस्य पापक्षयं वक्ष्ये पुनः पुत्रो यतो भवेत्।
हरिवंशश्रुतिं कुर्याद्गोपालस्य तु कीर्तनम्॥ १३॥

भा० टी०—अब उसके पूर्व जन्म के पापों को नष्ट होनें की विधि कहता हूँ, जिससे कि पुत्र उत्पन्न हो, हरिवंश पुराण को सुनें और गोपाल (कृष्ण भगवान्) का कीर्त्तन करें॥ १३॥

वंशगोपालमन्त्रस्य गायत्रीमन्त्रकस्य च।
लक्षद्वयं वरारोहे जपं वै कारयेत्सुधीः॥ १४॥

भा० टी०—हे वरारोहे! बुद्धिमान् जन संतान गोपाल मंत्र और गायत्री मंत्र—इनका दो लाख तक जप करायें॥ १४॥

हवनं तद्दशांशेन तर्पणं मार्जनं तथा।
तुलसीवाटिकां कृत्वा तन्मूले विष्णुपूजनम्॥ १५॥

भा० टी०—जप का दशांश हवन, और उसके दशांश का तर्पण तथा मार्जन करवायें, तुलसी की वाटिका बनाकर उसके मूल में विष्णु भगवान् का यथाविधि पूजन करें॥ १५॥

दशवर्णगवां दानं शय्यादानं विशेषतः।
ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चाच्छतसंख्यान्द्विजोत्तमान्॥ १६॥

भा० टी०—दश प्रकार के वर्णों वाली गायों का दान करें। विशेष करके शय्या-दान करें। तत्पश्चात् सौ उत्तम वेदपाठी ब्राह्मणों को भोजन करवायें॥ १६॥

विष्णोश्च प्रतिमां कृत्वा सौवर्णीं दशभिः पलैः।
पूजयित्वा विधानेन ब्राह्मणाय प्रदापयेत्॥ १७॥

भा० टी०—ब्राह्मणों को भोजन करवाने के पश्चात् दश पल प्रमाण वाली सुवर्ण की विष्णु भगवान् की मूर्ति बनवा कर विधि-विधान से पूजन कर उस मूर्ति को श्रेष्ठ विद्वान् ब्राह्मण को दान कर दें॥ १७॥

एवं कृते न संदेहो वंशो भवति नान्यथा॥ १८॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे रेवतीनक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम नवाधिकशततमोऽध्याय: ॥ १०९ ॥

भा० टी०—इसप्रकार से विधि-विधानपूर्वक शान्तिकर्म करने से वंश बढ़ता है, इसमें किसीप्रकार का सन्देह नहीं है॥ १८॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे रेवतीनक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम नवाधिकशततमोऽध्याय: ॥ १०९ ॥

॥ ११० ॥

रेवतीनक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच ॥

माणिक्ये च पुरे देवि वसन्ति बहवो जनाः।
लवणकृद्वसत्येको प्रत्यहं लवणं कृतम्॥ १॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—दे देवि! माणिक्यपुर में बहुत से जन निवास करते हैं। वहाँ कोई लवणकार रहता था। वह प्रतिदिन लवण (नमक) बनाया करता था॥ १॥

लवणं विक्रयेन्नित्यं व्ययं कृत्वा दिने दिने।
तस्य मित्रं द्विजः कश्चिदागतस्तस्य वै गृहे॥ २॥

भा० टी०—प्रतिदिन वह नमक को ही बेचा करता था, उसी से अपना खर्च चलाता था, उसके घर में कोई ब्राह्मण उसका मित्र रहने आया॥ २॥

धनाढ्यो रत्नसंयुक्तो तत्र वासमकारयत्।
आदरं बहुसम्मानं कृत्वा मित्रेण वै शिवे!॥ ३॥

भा० टी०—वह धनाढ्य और रत्नों से युक्त था, वह वहाँ वास करने लगा हे शिवे! उसके मित्र ने उसका बहुत-सा आदर सम्मान किया॥ ३॥

पत्नी शूद्रस्य वै हृष्टा पुंश्चली चपला तु सा।
मासमेकं वरारोहे तस्य मित्रस्य वै स्थितिः॥ ४॥

भा० टी०—उस शूद्र की स्त्री हृष्ट-पुष्ट थी और व्यभिचारिणी भी थी तथा चपला थी। हे वरारोहे! उस शूद्र के मित्र ने एक महीने तक उसके यहाँ निवास किया॥ ४॥

मित्रपत्न्या विषं दत्तं ब्राह्मणाय तदा शिवे!
ब्राह्मणेन च न ज्ञातं भोजनाऽभ्यन्तरे तथा॥ ५॥

भा० टी०—तब उस मित्र की स्त्री ने उस ब्राह्मण को विष दे दिया, भोजन के अंदर दिया हुए विष का ब्राह्मण को ज्ञान नहीं हुआ॥ ५॥

ब्राह्मणस्याभवन्मृत्युरर्द्धरात्रे गते सति।
नद्यां शवं ततस्त्यक्त्वा समगृह्णाच्च तद्धनम्॥ ६॥

भा० टी०—तदनन्तर आधी रात्रि व्यतीत हो गई, तब उस ब्राह्मण की मृत्यु हो गई, फिर उन्होंने उस शव को नदी में पटक कर उसका सब धन ग्रहण किया॥ ६॥

ब्राह्मणार्थं च संगृह्य कृतं व्ययमहर्निशम्।
भार्यया सह पुत्राभ्यां भुक्त्वा द्रव्यं वरानने!॥ ७॥

भा० टी०—हे वरानने! ब्राह्मण के धन को ग्रहण के बाद स्त्री पुत्र-सहित उसने खर्च किया और संपूर्ण धन को भोगा॥ ७॥

ततो वृद्धे च वयसि मरणं समजायत।
पश्चान्मृता तु सा भार्या कुलटा व्यभिचारिणी॥ ८॥

भा० टी०—वृद्ध अवस्था होने पर तब उसकी मृत्यु हो गई, पश्चात् वह कुलटा व्यभिचारिणी उसकी स्त्री भी मर गई॥ ८॥

यमदूतैर्महाघोरे नरके पङ्कसंज्ञके।
कुम्भीपाके तदा देवि निक्षिप्तश्च यमाज्ञया॥ ९॥

भा० टी०—हे देवी! पंक-संज्ञक महाघोर नरक में और कुंभीपाक में नरक धर्मराज की आज्ञा पाकर यम के दूतों ने उसे पटका॥ ९॥

युगमेकं विशालाक्षि भुक्त्वा नरकयातनाम्।
नरकान्निःसृतो देवि सूकरत्वं प्रजायते॥ १०॥

भा० टी०—हे विशालाक्षि! एक युग पर्यंत वह नरक की पीड़ा को भोग कर, नरक से निकलकर शूकर की योनि को प्राप्त हुआ॥ १०॥

पुनः काकस्य वै योनिं बिडालत्वं ततोऽभवत्।
मानुषत्वं ततो देवि देशे शुभ्रे तदाऽभवत्॥ ११॥

भा० टी०—पश्चात् काग की योनि को प्राप्त हुआ, तदनन्तर बिलाव की योनि उसे प्राप्त हुई, हे देवि! बाद में शुद्ध देश में मनुष्य योनि को प्राप्त हुआ है॥ ११॥

पूर्वजन्मनि देवेशि कुरुक्षेत्रे यतो मृतः।
अतो धनं भवेत्तस्य नाऽपत्यं द्विजहत्यया॥ १२॥

भा० टी०—हे देवेशि! वह पूर्वजन्म में कुरुक्षेत्र में मृत्यु को प्राप्त हुआ था, इसलिये उसके पास धन तो है, परंतु ब्राह्मण की हत्या करने से उसकी संतान नहीं है॥१२॥

शरीरे जायते व्याधिर्भार्या तस्य मृतप्रजा।
अस्य पापस्य शमनीं शान्तिं शृणु वरानने!॥ १३॥

भा० टी०—इसके शरीर में व्याधि रहती है, स्त्री के संतान नहीं जीती है, हे वरानने! अब इसके पूर्वजन्म के पापों को शमन करने वाली शांति को सुनो॥ १३॥

गृहवित्ताष्टमं भागं ब्राह्मणाय समर्पयेत्।
हवनं कारयेद्देवि कुण्डे योनिसुशोभिते॥ १४॥

भा० टी०—घर के वित्त में से आठवें भाग को ब्राह्मण को समर्पित करें। हे देवि! योनि से शोभित हुये सुंदर कुंड में हवन करें॥ १४॥

चतुरस्त्रे वरारोहे दशांशविधिपूर्वकम्।
तर्पणं तद्दशांशेन तद्दशांशेन मार्जनम्॥ १५॥

भा० टी०—हे वरारोहे! चौकोर कुण्ड में विधिपूर्वक दशांश हवन करें, उसका दशांश तर्पण, तद्दशांश मार्जन करें॥ १५॥

गां सवत्सां ततो दद्यात्स्वर्णरत्नविभूषिताम्।
ब्राह्मणान् भोजयेत्पश्चात्कूष्माण्डं प्रददेत्सुधीः॥ १६॥

भा० टी०—पश्चात् बच्चे से युक्त और सोने तथा रत्नों से विभूषित की हुई गाय का दान करें और तदनन्तर ब्राह्मणों को भोजन करायें बुद्धिमान् पुरुष विधिपूर्वक पेठे का दान करें॥ १६॥

एवं कृते वरारोहे पुत्रो भवति नान्यथा॥ १७॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे रेवतीनक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम दशाधिकशततमोऽध्यायः॥ ११०॥

भा० टी०—इसप्रकार से करने पर पुत्र होता है, हे वरारोहे! यह अन्यथा नहीं है॥ १७॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे रेवतीनक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम दशाधिकशततमोऽध्यायः॥ ११०॥

॥ १११ ॥

रेवतीनक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनम्

॥ शिव उवाच॥

अलर्कस्य पुरे देवि क्षत्रियो वसति प्रिये!
चन्द्रवर्मेति विख्यातः पत्नी देवी ततोऽभवत्॥ १॥

भा० टी०—शिवजी कहते हैं—हे देवि! हे प्रिये! अलर्कपुरी में एक क्षत्रिय निवास करता था, वह चन्द्रवर्मा नाम से विख्यात था और उसकी स्त्री देवी नाम से विख्यात थी॥ १॥

क्षत्रधर्मरतो नित्यं धनाढ्यः शूरसंमतः।
कृष्णदास इति ख्यातो विप्रस्तस्य पुरोहितः॥ २॥

भा० टी०—वह प्रतिदिन क्षत्रिय के धर्म में तत्पर रहता था, धनाढ्य और शूर वीर था। कृष्णदास नाम से प्रसिद्ध एक ब्राह्मण उसका पुरोहित था॥ २॥

विप्राय प्रददौ भूमिं गिरिजे विग्रहे सति।
ततो बहुदिने जाते दण्डस्तस्माच्च याचितः॥ ३॥

भा० टी०—हे गिरिजे! एक समय विग्रह (गदर) होने के कारण उस ब्राह्मण को उसने भूमिदान दिया, फिर बहुत से दिन बीत जाने पर तब उस ब्राह्मण से उस क्षत्रिय ने दण्ड (शुल्क) माँगा॥ ३॥

ब्राह्मणोऽथावदद्देवि नाहं दण्ड्यः कदाचन।
ततो रोषपरीतात्मा क्षत्रियो ब्राह्मणं प्रति॥ ४॥

भा० टी०—हे देवि! तब ब्राह्मण बोला कि, मैं कभी दंड देने योग्य नहीं हूँ। उसके अनन्तर क्रोध से भरे हुए क्षत्रिय ने ब्राह्मण के प्रति कहा॥ ४॥

दुर्वचश्चावदद्देवि ब्राह्मणं साधुसंमतम्।
मरणं ब्राह्मणस्यैव भूम्युद्देशेन वै शिवे!॥ ५॥

भा० टी०—उसने अपशब्द और दुर्वचन बोले। हे देवि! साधुओं से सम्मानित और प्रतिष्ठित ब्राह्मण को दुर्वचन बोले जाने से आत्मग्लानि से उस ब्राह्मण की मृत्यु हो गई॥ ५॥

ततो बहुगते वर्षे मरणं क्षत्रियस्तु तु।
यमदूतैर्महाघोरैर्नरके नाम दारुणे॥ ६॥

भा० टी०—फिर बहुत वर्ष व्यतीत होने पर तब क्षत्रिय की भी मृत्यु हो गई। धर्मराज के महाघोर दूतों ने उसे दारुण नरक में डाला॥ ६॥

कुम्भीपाके सदा घोरे क्षिप्तवान्यमशासनात्।
युगानां त्रयसंख्यानां नरके वास एव च॥ ७॥

भा० टी०—यमदूतों ने उसे धर्मराज की आज्ञा से कुंभीपाक में पटक दिया। तीन युग पर्यंत वह नरक में वास करता रहा॥ ७॥

नरकान्निःसृतो देवि प्रेतत्वं समजायत।
सूकरस्य पुनर्योनिं ततो भवति मानुषः॥ ८॥

भा० टी०—हे देवि! अपने पूर्वकर्मफल को भोगते हुए नरक से निकलने के पश्चात् उसे प्रेत की योनि मिली, फिर शूकर की योनि मिली तदनन्तर मनुष्य योनि में उसका जन्म हुआ है॥ ८॥

मध्यदेशे विशालाक्षि हिमविन्ध्याद्रिमध्यमे।
धनधान्यसमायुक्तो ब्राह्मणानां च सेवकः॥ ९॥

भा० टी०—हे विशालाक्षि! मध्य देश में हिमाचल और विंध्याचल के मध्य देश में वह धनधान्य से युक्त और ब्राह्मणों का सेवक है॥ ९॥

इह जन्मनि देवेशि मरणं संततेर्ध्रुवम्।
काकवन्ध्या भवेन्नारी मृतवत्सा पुनः पुनः॥ १०॥

भा० टी०—हे देवि! इस जन्म में उसकी संतान नष्ट होती है और इसकी स्त्री काकवन्ध्या है अथवा मृतवत्सा होकर उसकी संतान मरती है॥ १०॥

शरीरे व्याधिरुत्पन्नो ज्वरश्चैव मुहुर्मुहुः।
अस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणु देवि वरानने!॥ ११॥

भा० टी०—उसके शरीर में व्याधियाँ हैं और बार-बार उसे ज्वर आता है। अब इसकी शांति को कहता हूँ हे देवि! हे वरानने!! ध्यान से सुनो॥ ११॥

गृहवित्तषडंशं तु ब्राह्मणाय प्रकल्पयेत्।
गायत्रीमूलमंत्रेण पञ्चलक्षजपं तथा॥ १२॥

भा० टी०—घर के वित्त में से छठे भाग को ब्राह्मण को दान कर दें और गायत्री के मूलमंत्र का पाँच लाख तक जप करायें॥ १२॥

दशांशं कारयेद्देवि हवनं विधिपूर्वकम्।
तर्पणं मार्जनं तद्वद्गोदानं च विशेषतः॥ १३॥

भा० टी०—हे देवि! विधिपूर्वक दशांश हवन करायें, दशांश तर्पण तथा मार्जन करायें विशेषकर गाय का दान करें॥ १३॥

ब्राह्मणस्य ततो देवि प्रतिमां कारयेद्बुधः।
पलपञ्चसुवर्णस्य वस्त्ररत्नविभूषिताम्॥ १४॥

भा० टी०—हे देवि! तत्पश्चात् पाँच पल सुवर्ण की ब्राह्मण की मूर्ति बनवायें, उसे वस्त्र और रत्नों से विभूषित करें॥ १४॥

ततो निर्माय प्रतिमां पूजयित्वा यथाविधि।
मन्त्रेणानेन देवेशि पाद्यं गन्धादिकं पृथक्॥ १५॥

भा० टी०—इसप्रकार की मूर्ति बनाकर पश्चात् विधि-विधानपूर्वक से इस मंत्र से पाद्यगन्ध आदि पृथक्पृथक् विधि-विधान से पूजन करें॥ १५॥

वासुदेव जगन्नाथ शरणागतवत्सल!
ब्रह्महत्या कृता पूर्वं तत्सर्वं क्षन्तुमर्हसि॥ १६॥

भा० टी०—हे वासुदेव! हे जगन्नाथ! हे शरणागतवत्सल!!! (मैंने) पूर्वजन्म में जो ब्रह्म-हत्या की थी, उस मेरे अपराध को क्षमा करो॥ १६॥

वल्मीकमृत्तिकां गृह्य वेदीं वै कारयेत्ततः।
तन्मध्ये सर्वतोभद्रं रचितं दिव्यमण्डले॥ १७॥

भा० टी०—तदनन्तर दीमक के ढेर की मृत्तिका को ग्रहण कर उस मिट्टी की वेदी बनाकर वहाँ दिव्य मंडल में सर्वतोभद्र बनायें॥ १७॥

तन्मध्ये प्रतिमां स्थाप्य ततो पूजां तु कारयेत्।

ॐ वासुदेवाय नमः। ॐ जगन्नाथाय नमः।
ॐ विष्णवे नमः। ॐ शार्ङ्गिणे नमः॥

आचार्यं च ततो नत्वा शिवविष्णस्वरूपिणम्॥ १८॥

भा० टी०—वहाँ उस मूर्ति को स्थापित करके पूजा करें॥ ॐ वासुदेवाय नमः१, ॐ जगन्नाथाय नमः२, ॐ विष्णवे नमः३, ॐ शार्ङ्गिणे नमः४॥ तत्पश्चात् शिव-विष्णु रूपी आचार्य को नमस्कार करें॥ १८॥

प्रभोजयेत्ततो विप्रान्दक्षिणां दापयेत्ततः।

ततो विसर्जनं कुर्याद्वाचकं प्रणिपत्य च।
एवं कृते वरारोहे शीघ्रं पुत्रः प्रजायते॥ २०॥

भा० टी०—ब्राह्मणों को भोजन करवाकर शक्ति के अनुसार दक्षिणा दें। फिर वाचक अर्थात् उपदेश देने वाले गुरु को प्रणाम करके विसर्जन करें। हे वरारोहे! इसप्रकार करने से शीघ्र ही पुत्र उत्पन्न होता है॥ २०॥

काकवन्ध्या लभेत्पुत्रं सर्वव्याधिप्रणाशनम्।
मृतवत्सा च या नारी जीवत्पुत्रा च जायते॥ २१॥

भा० टी०—काकवंध्या स्त्री भी पुत्र को जन्म देती है और उसकी संपूर्ण व्याधियाँ नष्ट होती हैं और जिस स्त्री की संतान नहीं जीती है, उसके पुत्र जीते हैं॥ २१॥

यः पठेच्छृणुयाद्वापि सर्वपापैः प्रमुच्यते।
अतः परतरं नास्ति सत्यं सत्यं वरानने!। २२॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे रेवतीनक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं नामैकादशोत्तरशततमोऽध्यायः॥ १११॥

इति श्रीब्रह्माण्डपुराणे पितृकाव्योत्तरे सनत्कुमारमार्कण्डेयप्रश्ने नारदाम्बरीषप्रत्युत्तरे कर्मविपाकसंहितायां अश्विन्यादिनक्षत्रचरणगतप्रायश्चित्तं समाप्तम्॥

भा० टी०—जो इस कर्मविपाकसंहिता नामक ग्रन्थ को पढ़े अथवा सुने वह भी सब पापों से छूट जाता है, इससे परे अधिक कुछ भी पुण्य नहीं है। हे वरानने! यह सत्य है और यही सत्य है॥ २२॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां रेवतीनक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम एकादशोत्तरशततमोऽध्यायः॥ १११॥

इति श्रीवेरीनिवासि-गौडवंशोद्भवद्विजशालग्रामात्मजबुधवसतिरामाऽ-नुवादितभाषाटीकायां ब्रह्माण्डपुराणे पितृकाव्योत्तरे सनत्कुमारमार्ककण्डेयप्रश्ने नारदाम्बरीषप्रत्युत्तरे कर्मविपाकसंहितायां अश्विन्यादिचरणगतप्रायश्चित्तं समाप्तम्॥

नन्दाऽब्ध्यङ्कमहीवर्षे माधवस्य सिते दले।
विष्णुतिथ्यां च टीकेयं सूर्याह्नि पूर्णतामगात्॥

भा० टी०— विक्रम संवत् के उन्नीस सौ तैतालीसवें वर्ष में वैशाख महीने की शुक्ल पक्ष की एकादशी तिथि के दिन रविवार को कर्मविपाकसंहिता की भाषा टीका सम्पूर्ण हुई।

श्रीरमारमणचरणकृपया शम्भवतुतराम्वाचकानाम्।

समाप्तेयं भाषाटीकायुता कर्मविपाकसंहिता